Kautilya

खोए हुए
बुद्ध की खोज



डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह

खोए हुए

बुद्ध की खोज

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह

Kautilya

भूमिका

"खोए हुए बुद्ध की खोज" कोई स्वतंत्र और मुकम्मल पुस्तक नहीं है, बल्कि फेसबुक पर लिखी गई टिप्पणियों का संग्रह है। ये टिप्पणियाँ सूत्रात्मक रूप में हैं। इन्हें विस्तारित किया जा सकता है। शायद इन्हें विस्तारित किए जाने पर गौतम बुद्ध का अनछुआ इतिहास सामने आए।

मिसाल के तौर पर, गौतम बुद्ध का नाम सिद्धार्थ नहीं था।

इतिहासकार डी. डी. कोसंबी ने लिखा है कि गौतम बुद्ध का नाम सिद्धार्थ नहीं था। यह नाम बाद में उनके अनुयायियों ने जोड़ दिया है। ऐसे भी सिद्धार्थ का पूरा ध्वनिशास्त्र संस्कृत का है। इसलिए गौतम बुद्ध का वास्तविक नाम सिद्धार्थ संभव नहीं है।

गौतम बुद्ध का वास्तविक नाम सुकिति जान पड़ता है। इसलिए कि उनके निर्वाण के फौरन बाद कपिलवस्तु के शाक्य भाई-बहनों ने उनके भस्मावशेष पर स्तूप का निर्माण कराया था। वह स्तूप आज भी पिपरहवा स्तूप के नाम से असली कपिलवस्तु में मौजूद है।

पिपरहवा स्तूप के अस्थि-कलश की गर्दन पर एक अभिलेख लिखा है। यह कलश पत्थर का है। अभिलेख की लिपि ब्राह्मी और भाषा प्राकृत है।

अभिलेख पर लिखा है कि सुकिति भतिनं स भगिनिकन स पुतदलन इयं सलिल निधाने बुधस भगवते सकियन। इसका हिंदी में अर्थ हुआ कि सुकिति (गौतम बुद्ध) के शाक्य भाइयों, बहनों, पुत्रों आदि ने भगवत बुद्ध का यह शरीर-निधान (स्तूप) बनवाया। यह स्वाभाविक है कि गाँव-घर के भाई-कुटुंब को भगवत बुद्ध को उनके वास्तविक नाम कहने और लिखने का अधिकार है।

जैसा कि हमें ज्ञात होता है कि बुद्ध के निर्वाण के फौरन बाद पिपरहवा में स्तूप बनाया जाता है। साबित-सी बात है कि स्तूप बनाने की परंपरा पहले से थी। तभी गौतम बुद्ध के निर्वाण के फौरन बाद स्तूप का निर्माण कराया जाता है। कोई भी शिल्प-कला रातों-रात पैदा नहीं होती है। स्तूप कला का भी बाकायदा विकास हुआ है। मिट्टी का स्तूप...पत्थर का स्तूप...ईंट का स्तूप...संगमरमर का स्तूप...गोल स्तूप...चौकोर स्तूप... सीढ़ीदार स्तूप...बिना सीढ़ी का स्तूप...इन अलग-अलग प्रकार के सैकड़ों स्तूपों का काल-निर्धारण फिर से किए जाने की जरूरत है।

बौद्ध सभ्यता और गौतम बुद्ध की अनेक कड़ियाँ इतिहास में आज भी गुम हैं। इन्हें संजोये जाने की आवश्यकता है।

बुद्ध पूर्णिमा, 2018 डा. राजेन्द्रप्रसाद सिंह

गाँधी नगर, सासाराम

बिहार

अनुक्रम

लेखक के बारे में

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह एक ऐसे शख्स हैं, जिन्होंने हिन्दी भाषा और साहित्य को अब तक देखने-परखने और मूल्यांकन करने की जो पद्धति और प्रक्रिया थी, उसे बिलकुल ही उलट-पुलट दिया। उन्होंने साहित्य को देखने-समझने के सामंती प्रतिमानों को तोड़-फोड़कर बिलकुल नवीन, जनतांत्रिक, पारदर्शी व सृजनात्मक प्रतिमान तैयार किए हैं; जहां से साहित्य को आसानी से आमजन की नजर से देखा व समझा जा सकता है। उनका लेखन पूरी तरह से आमजन के लिए समर्पित और उसके पक्ष में खड़ा है। राजेन्द्र यादव के बाद हिन्दी आलोचना को उन्होंने शोषितों की नजर से देखने की न सिर्फ वकालत की, बल्कि ऐसा करके दिखाया भी। उनकी इसी खूबी ने उनको जहां जनप्रिय बनाया, तो दूसरी ओर अपनी इसी खूबी के चलते, वे बहुत हद तक सामंती सोच व घरानों से ताल्लुक रखने वाले लेखकों की नजर में हमेशा गड़ते रहे, उनके दिल में कांटों की तरह चुभते रहे।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने हिन्दी के कई गुमनाम लेखकों को मुख्यधारा से जोड़ने का काम किया, उनकी रचनाओं से दुनिया को अवगत कराने का काम किया, जिनको आगे लाने से तथाकथित सभ्य जन कतराते रहे। ऐसे लेखकों में 'व्यंग्य बोध के विराट कवि कुंजन', 'जनता की याददाश्त में जीवित कवि परगन राम', वयस्क शृंगार के अकुंठ कवि जगरदेव', 'सामंतों की तनी तोपों के बीच मुसहर कवि बिहारी राम', 'भोजपुरी के तथाकथित नक्सली कवि नारायण महतो' और 'विंध्याचल घाटी के घुमंतू जनकवि बावला' मुख्य हैं, जिनके बारे में सविस्तार जानकारी उन्होंने 'आधुनिक

भोजपुरी के दलित कवि और काव्य' (2010) पुस्तक में दी है। उन्होंने इन कवियों के वैशिष्ट्य व प्रासंगिकता के कारणों को रेखांकित किया है। हिन्दी में ऐसे लेखक बहुत कम मिलेंगे, जो ईमानदारी से हाशिए के उन रचनाकारों की पैरवी करने के लिए सदैव तत्पर, बेचैन और विह्वल रहे हैं; जो वाकई योग्य व दृष्टि संपन्न रचनाकार होने के बावजूद उपेक्षित रहे।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने इतना ही नहीं किया, उन्होंने हिन्दी साहित्य को मजबूत व व्यापक बनाने वाले उन रचनाकारों से भी हमें अवगत कराया, जिनसे 'सुसंस्कृत' लोग आंख चुराते आए थे। चाहे वे भोजपुरी भाषी टेकमन राम, कुंजन कवि, घुमंतू कवि बावला हों या चाहे हिन्दी के महाराज सिंह भारती, राम स्वरूप वर्मा, आर.एल. चंदापुरी, निर्गुण सिंह 'खाली' इत्यादि हों। डॉ. सिंह यह साफ लिखते हैं कि—"हिन्दी के महाकवि सूरदास जाति के अहीर थे।" (फारवर्ड प्रेस, अप्रैल 2016 पृ.-49) तथा अपने कथ्य को तथ्यपरक बनाने के लिए वे सबूत के तौर पर सूरदास के पिता का नाम 'रामदास ग्वाल' बताते हैं। इतना स्पष्ट हिन्दी के बहुत कम लेखक बोलते या लिखते हैं। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह साहित्य में प्रतिरक्षात्मकता के विरोधी रहे हैं। यह बात उनकी पुस्तकों से भी झलकती है और स्पष्ट होती है—बोली-वाणी से भी और सोशल मीडिया के युग में फेसबुक से भी। उनकी इसी मुखरता व स्पष्टता का प्रमाण है कि उन्होंने हिन्दी साहित्य को 'ओबीसी साहित्य विमर्श' (2014) का कांसेप्ट दिया और लिखा कि—"कई इतिहासकारों ने यह प्रमाणित करने की चेष्टा की है कि प्राचीन भारत में ओबीसी के लोगों में अपनी गिरी हुई दशा से निकलकर उन्नत होने का प्रयास नहीं दिखाई पड़ता है। कुछ ऐसे भी हैं, जो यह मानते हैं कि भारत में ओबीसी नवजागरण नाम की कोई चीज नहीं है, किंतु, ऐसे विद्वानों के मत को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। इसका कारण यह है कि भारतीय इतिहास में कई चरणों एवं कई रूपों में ओबीसी नवजागरण उपलब्ध है। कहना न होगा कि छठी शताब्दी ई.पू. में हुए नवीन बौद्धिक आंदोलनों में से प्रायः सभी आंदोलनों का स्वरूप ओबीसी नवजागरण का है।" (पृ.-09) इसका

परिणाम यह हुआ कि हिन्दी के वैसे लेखक-जिनका सामाजिक सरोकार किसान, शिल्पी व कमेरे वर्ग से था और उनकी रचनाओं में समाज का दर्द, पीड़ा बेचैनी व सौंदर्य खुलकर सामने आए थेः—वे उपेक्षित रहे। ऐसे रचनाकारों के चलते हिन्दी साहित्य पहले से ज्यादा लोकतांत्रिक हुआ।

भोजपुरी भाषा भी पंडितों की वजह कभी सिर ऊंचा करके खड़ी नहीं हो पाई,क्योंकि, उसका कोई महत्व समझा ही नहीं गया और न ही उसकी ताकत से जनता को किसी ने रू-ब-रू कराया। हिन्दी की संस्कृत से उत्पत्ति मानने वालों का तो कहना ही नहीं। उनके लिए भोजपुरी 'गंवारू' भाषा थी या कहें कि बोली थी। भिखारी ठाकुर कवि न होकर 'नाई' व 'नचनिया' थे। भोजपुरी का अपना कोई व्याकरण नहीं था और न ही कोई भाषा-शास्त्र, ऐसी स्थिति में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने 'भोजपुरी के भाषा-शास्त्र' (2006) तथा 'भोजपुरी भाषा, व्याकरण आ रचना' (2011) लिखकर भोजपुरी को कलंक से उबारा।

इसी तरह डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने हिन्दी समाज को और कई अनोखे कार्यों, खोजों, अवधारणाओं, घटनाओं व स्थितियों से रू-ब-रू करवाया, जिस पर जनता सहजता के साथ यकीन नहीं कर सकती थी। उनमें सुल्ताना डाकू की कथा हो या गुंडा धुर का इतिहास या गंगू तेली के साथ भद्दा मजाक या गुरु घंटाल का रहस्य या डाकू शब्द की उत्पत्ति संबंधी राय, इन सब पर अलग तरह से डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने न सिर्फ सोचा, बल्कि सप्रमाण तथ्यों की पुष्टि करते हुए उसके उचित, सही व तथ्यपरक इतिहास की खोज की। 'द्वेष की धूल तले दबे बहुजन नायक' आलेख खूब चाव से बहुजनों के बीच पढ़ा गया, इसलिए नहीं कि इसमें सुल्ताना डाकू या गुंडा धुर का सिर्फ इतिहास था, बल्कि इसलिए भी कि इस लेखक ने सवर्ण व अंग्रेजी मानसिकता की पोल खोल दी थी। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने जब 'हिन्दी साहित्य का सबाल्टर्न इतिहास' (2009) लिखा, तो हिन्दी जनमानस व साहित्यकों को यह यकीन ही नहीं हुआ कि हिन्दी साहित्य का कोई सबाल्टर्न इतिहास भी हो सकता है। इस पुस्तक में सहित्यकारों की जाति चोरी का मामला जब उजागर हुआ, तब लोगों ने तले उंगली दबा

ली। अब उनके लिए मछिंदरनाथ न तो भृगुवंशीय ब्राह्मण थे, न शबरपा 'क्षत्रिय'! शबरपा भील थे, तो मछिंदरनाथ मछुआरे।

ठीक इसी तरह डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने जब ओबीसी की अवधारणा पेश की, तो हिन्दी पट्टी में बहुत शोर-शराबा हुआ। नामवर सिंह का कहना था कि साहित्य में आरक्षण ठीक नहीं। वहीं, राजेन्द्र यादव और संजीव जैसे ओबीसी के साहित्यकार भी इस अवधारणा से सहमत नहीं थे। उनकी नजर में ओबीसी के साहित्य जैसी कोई चीज नहीं थी और न ही उसका कोई सौंदर्य-शास्त्र है, लेकिन धीरे-धीरे लोग मान गए कि ओबीसी साहित्य जैसी कोई चीज भी है और उसका सौंदर्य-शास्त्र भी। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने एक-एक कर तथ्यों की पड़ताल शुरू की और ओबीसी साहित्य के दर्शन व सौंदर्य से हिन्दी जनमानस को परिचित कराया। ई. पू. छठी शताब्दी से लेकर अब तक ओबीसी की एक सशक्त परंपरा रही है, इस तथ्य से जब उन्होंने अवगत कराया, तब जाकर लोगों ने ओबीसी साहित्य की अवधारणा को स्वीकार किया। हिन्दी साहित्य में उसे मान्यता मिली और यही भारत के सबसे बड़े वर्ग समूह का प्रतिनिधित्व करने वाला साहित्य बन गया। इससे द्विज साहित्य को समझने-बूझने में जहां सहूलियतें हुईं, वहीं सामंती चरित्र का ताना-बाना स्पष्ट हुआ। जो वर्ग अब तक साहित्य से जुदा थे, वे इससे जुड़े।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने जहां भाषा और साहित्य में अपने तर्क, संवेदना व विचार का लोहा मनवाया; वहीं वे दर्शन और इतिहास में भी उपेक्षित, दबा दी गई अन्य जरूरी चीजों को भी सामने लाए। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह से पूर्व लोग यहीं मानते थे कि दुनिया में कोई बुद्ध हुए, तो वे सिर्फ शाक्यमुनि गौतम बुद्ध ही थे। इसके अलावा कोई और बुद्ध नहीं थे। 'खोए हुए बुद्ध की खोज' ने यह बात भी साबित करके रख दी है कि भारत में एक नहीं अनेक बुद्ध थे। भारत में हड़प्पा की जो संस्कृति थी, वह भी बुद्ध की संस्कृति थी और भारत विश्वगुरु बना, तो वह बुद्ध-दर्शन के बदौलत ही बना।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने बिहार और उत्तर-प्रदेश के कई इलाकों में जाकर नई ऐतिहासिक खोजों की तरफ इतिहासकारों, पुरातत्वविदों का ध्यान आकर्षित कराया। साथ ही, उन्होंने यह बताने की कोशिश भी की कि कई ऐसे रहस्य अभी शेष हैं, जिनसे पर्दा उठने के पश्चात अब तक इतिहास के बारे में जो अवधारणाएं बनाई गई हैं या निर्मित की गई हैं, सब झूठी लगने लगेंगी। जब पहली दफा संस्कृत भाषा को डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने कृत्रिम भाषा के रूप में चिह्नित किया था, तो दुनिया को यह पागलपन लगा था और यह भी पागलपन लगा था कि संस्कृत से पुरानी भाषा पाली है। लेकिन तथ्यों, तर्कों के आगे संवेदना व आस्था भला कब तक टिकेगी! कुछ ऐसा ही संस्कृत भाषा के साथ हुआ। संस्कृत अब सभी भाषाओं की जननी नहीं रह गई और न ही सबसे उन्नत व प्राचीन। इस आग से अगर हिन्दी पट्टी का कोई साहित्यकार खेल सकता था, तो उनका नाम सिर्फ डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह ही है।

–डॉ. हरेराम सिंह, पी-एच.डी.

बुद्ध का वैश्विक परिप्रेक्ष्य

1. गौतम बुद्ध ने "ध्यान" को विश्वव्यापी बनाया।

पालि में यह "झान" है। आचार्यों ने "झान" को परिष्कार कर "ध्यान" बनाया।

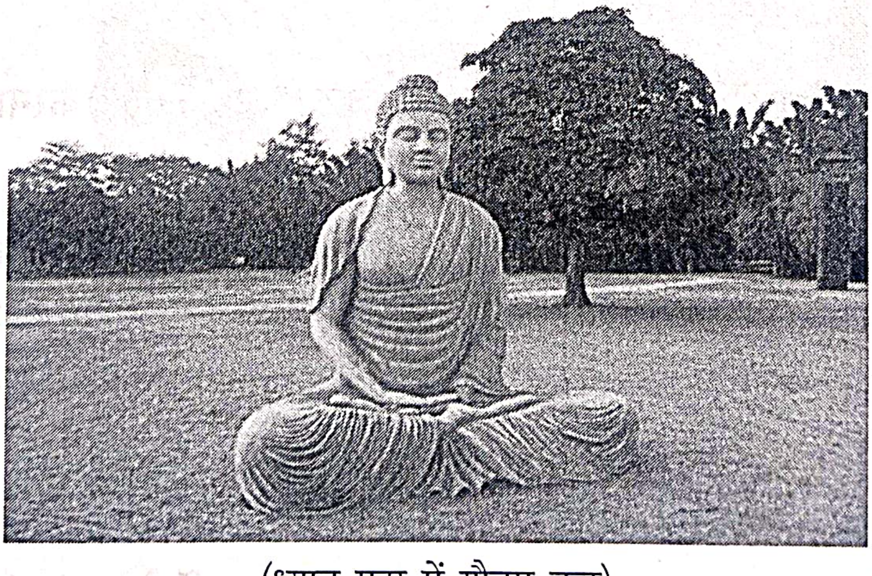
बुद्ध का यह "झान" जब चीन पहुँचा, तब वहाँ चियान/चान हुआ।

बुद्ध का यह "झान" जब कोरिया पहुँचा, तब वहाँ सिओन/सानजान हुआ।

बुद्ध का यह "झान" जब वियतनाम पहुँचा, तब वहाँ थियेन हुआ।

बुद्ध का यह "झान" जब जापान पहुँचा, तब वहाँ जेन हुआ।

हर सोचने वाला जहन गौतम बुद्ध नहीं बन पाता!!!



(ध्यान मुद्रा में गौतम बुद्ध)

2. लाली मेरे लाल की, जित देखूँ तित लाल!

बुद्ध अर्थात जागा हुआ, जानने वाला, ज्ञानी।

जो बुद्ध है वही संस्कृत में बुद् है अर्थात जागना, ज्ञान होना।

जो बुद्ध है वही रूसी में बुदीत् है अर्थात जागना।

जो बुद्ध है वही लिथुआनी में बुदति है अर्थात जानना।

जो बुद्ध है वही स्लोवानी में बुदिति है अर्थात जानना।

जो बुद्ध है,वही चेक और क्रोशियाई में ब्दीम है अर्थात जानना।

जो बुद्ध है वही अवेस्ता में बोदयति है अर्थात जानना, समझना।

3. गौतम बुद्ध का समय वैचारिक क्रांति का युग था, एक महत्वपूर्ण और रुचिकर तथ्य यह है कि यह वैचारिक क्रांति की लहर विश्व के कई देशों में लगभग एक ही समय में फैली हुई थी।

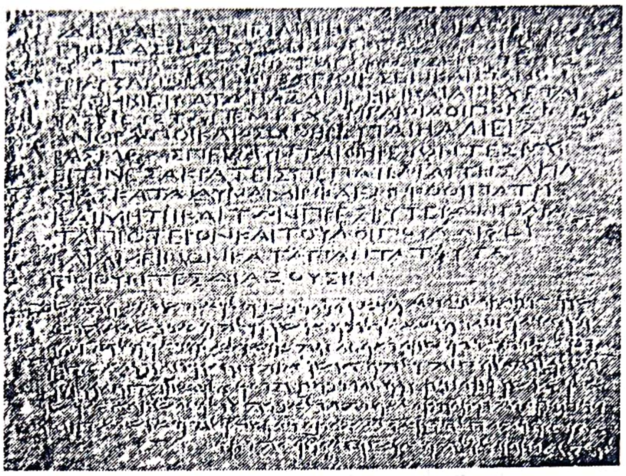
भारत में बुद्ध, ईरान में जरथुस्त्रा, चीन में कन्फ्यूशस, यूनान में हिराक्लिटस आदि ने अपने-अपने देशों में नवीन विचारों का नेतृत्व किया।

पड़ताल इस बात की भी होनी चाहिए कि बुद्ध की वैचारिक क्रांति के जनमने में वैश्विक माहौल का क्या योगदान रहा है।

4. अशोक के "धम्म" का अनुवाद "रिलिजन" (Religion) करना भाषा के दृष्टिकोण से गलत है।

खुद अशोक ने "धम्म" का अनुवाद ग्रीक में कराया है। यह अनुवाद उसके द्विभाषीय कंधार शिलालेख पर अंकित है। उसने "धम्म" का अनुवाद ग्रीक में "युसेबेइया" कराया है, जबकि ग्रीक में "रिलिजन" को "थ्रिस्किया" कहा जाता है।

"रिलिजन" में ईश्वर या देवताओं के अस्तित्व में विश्वास जरूरी होता है, जबकि "धम्म" या "युसेबेइया" में यह जरूरी नहीं है।

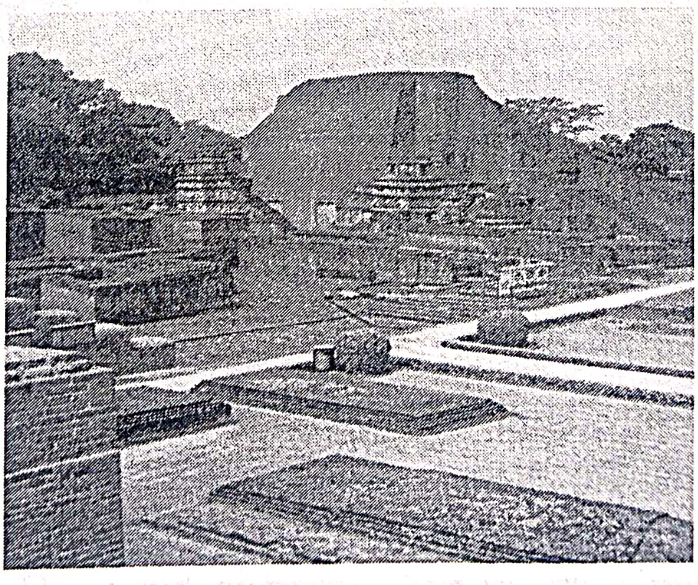


(द्विभाषीय कंधार शिलालेख)

5. "अशोक ईंट" क्या है? कई प्रकार की ईंटों में, एक विशेष मोटाई की ईंट सम्राट अशोक ने बौद्ध विहार के निर्माण के लिए चलाई थी। इसकी मोटाई 7.5 सेंमी हुआ करती थी। 7.5 सेंमी की मोटाई वाली ईंटें प्राक्-हड़प्पा और सिंधु घाटी सभ्यता से लेकर कुषाण एवं गुप्त काल तक कहीं से नहीं मिलती हैं।

नालंदा बौद्ध विहार का साइट 1-A की ईंटों में "अशोक ईंट" भी हैं, जिसकी मोटाई 7.5 सेंमी है।

फिर भी इतिहासकार गुप्त काल का रट्टा मार रहे हैं।



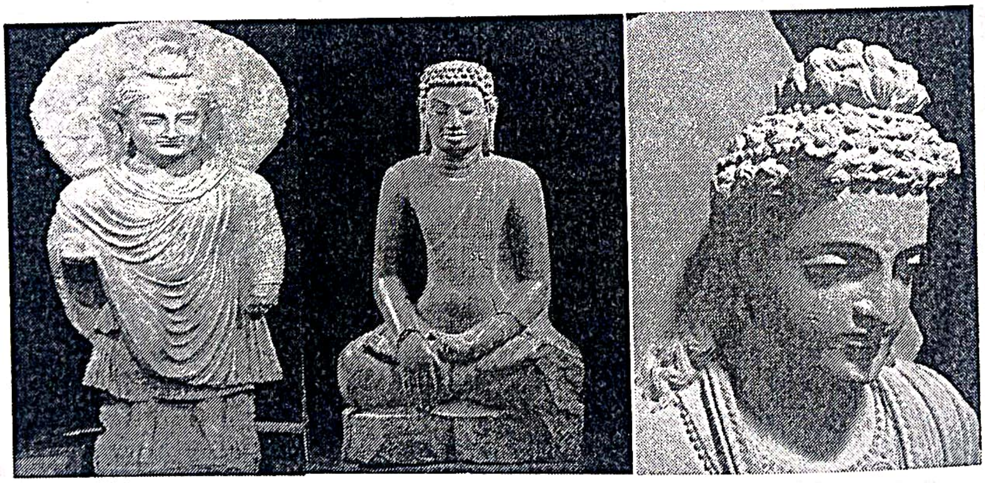
(नालंदा बौद्ध विहार)

6. चीन का प्राचीन नाम चाहे जो भी रहा हो, ईसा से कोई दो सदी पूर्व इस देश का नाम चीन/चाइना प्रचलित हुआ। यह वही समय है, जब बुद्ध का ज्ञान (ध्यान) चीन पहुँचा, जिसे चीनी भाषा में चान/चिआन कहा जाता है।

क्या चान/चिआन से चीन/चाइना नाम का कोई संबंध है?

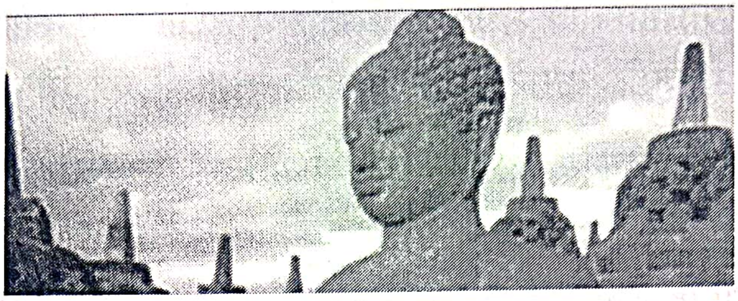
यदि नहीं भी तो दक्षिण-पूर्व एशिया को हिंद-चीन और मध्य एशिया के बड़े भू-भाग को चीनी-तुर्किस्तान क्यों कहा जाता है, जबकि प्राचीन काल में ये सब इलाके बौद्ध धर्म से जुड़े थे।

7. यदि भारत विश्वगुरू था तो गौतम बुद्ध के कारण था और आज भी दुनिया के अनेक देश बुद्ध के जन्मस्थान होने के कारण भारत को गुरू भूमि मानते हैं।



(विभिन्न मुद्राओं में गौतम बुद्ध)

8. दुनिया में सबसे अधिक मूर्तियाँ बुद्ध की बनीं...फारस में तो बुद्ध की मूर्तियाँ इतनी बनीं...इतनी बनीं कि बुत (बुद्ध) ही मूर्ति के पर्याय बन गए...तिब्बत का क्या कहना?...वहाँ तो बुद्ध ही बुद्ध...ऐसे कि तिब्बत देश का नाम ही बोद् (बुद्ध) पड़ गया...तिब्बत में घाटी के पत्थरों की कटाई में मजदूरों को यह बुद्ध की शैल-प्रतिमा मिली है।



Live हिन्दुस्तान .com LIKE

तिब्बत में मिली 1200 साल पुरानी बुद्ध की शैल प्रतिमा

By बीजिंग, एजेंसी
10 April 2018 15:14

कामदो सिटी की चागयाब कांउटी के आसुर से बुद्ध की एक शैल मूर्ति (शिला पर बनी एक मूर्ति) मिली है जिसके 1200 वर्ष पुरानी होने की संभावना है। क्षेत्रीय

9. बात ईसा से हजार साल पहले की है। तब इसरायल पर यहूदी राजा सोलोमन (961-922) का शासन था।

सोलोमन का जहाजी बेड़ा भारत से बंदर और तोते यरुशलम ले गया था। जहाजी बेड़े के लोगों ने बंदर और तोते के लिए जो भारत में नाम सुने थे, उन्हें वे हिब्रू में लिख लिए थे, जिसका विवरण हमें बाइबिल में मिलता है। भारत के लोग बंदर को कोफिम् और तोते को तुकुम बोलते थे।

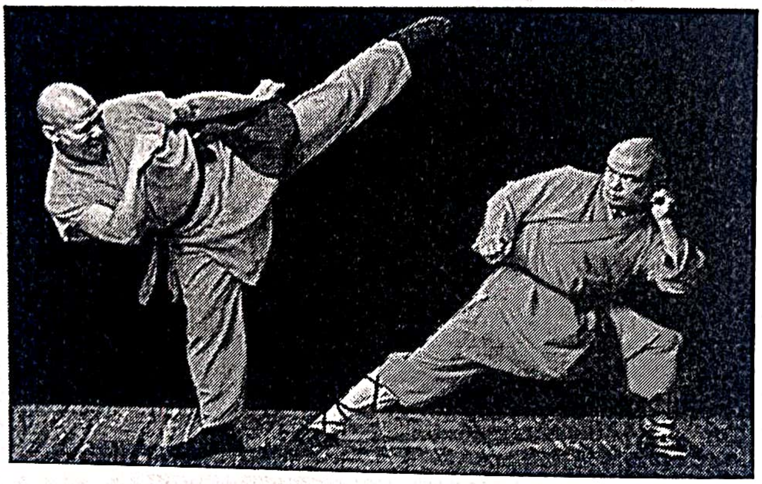
कोफिम् वस्तुतः द्रविड़ शब्द कपि (बंदर) है और तुकुम वस्तुतः शुक (तोता) का पूर्व प्रचलित द्रविड़ रूप है। ये शब्द-रूप ईसा से हजार साल पहले जिस भारत का चित्र प्रस्तुत करते हैं, वह वैदिक समाज का नहीं है बल्कि द्रविड़ समाज का है।

10. डॉ. भगवतशरण उपाध्याय ने अपनी पुस्तक "वृहत्तर भारत" में लिखा है कि भारत से पूरब दिशा में सबसे पहले बौद्ध धर्म

चीन पहुँचा। पाँचवीं सदी में आचार्य बोधिधर्म चीन गए और वहाँ मार्शल आर्ट के रूप में जूडो, कराटे, कुंग-फू जैसी कलाओं को विकसित किया।

आचार्य बोधिधर्म ने अपने दिन शाओलिन गुफाओं के बौद्ध विहार में गुजारे थे। यही शाओलिन गुफाओं के बौद्ध विहार मार्शल आर्ट की जन्मस्थली मानी जाती है। मार्शल आर्ट मूलतः बौद्ध धर्म के ध्यान आधारित आत्मरक्षा की तकनीक है।

यह शाओलिन में मार्शल आर्ट का प्रशिक्षण लेते हुए बौद्ध भिक्खुओं की तस्वीर है।



(मार्शल आर्ट)

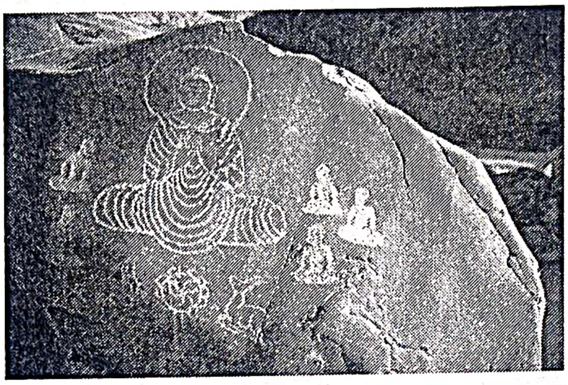
11. आप्त से, आस्था से ज्ञान प्राप्त करना वेद है। विवेक से, विवेचन-पद्धति से ज्ञान प्राप्त करना थेर है। यही थेरवाद अंग्रेजी में थ्योरी (सिद्धांत) है। इसीलिए बुद्ध की शिक्षाओं को सिद्धांत' (थ्योरी) कहा जाता है।

12. चिलास एक कस्बा है। गिलगित-बलतिस्तान क्षेत्र के दिआमेर जिले में है। चिलास के बौद्ध शैल-चित्र मशहूर हैं।

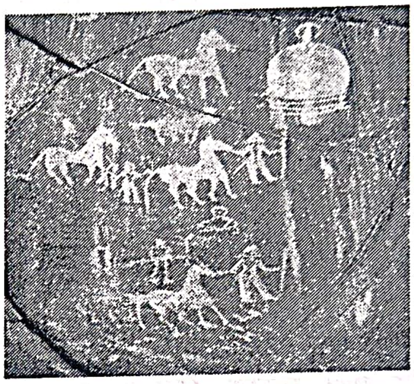
पहले शैल-चित्र में बुद्ध को बेहद खूबसूरती से उकेरा गया है, दूसरे में एक स्तूप को और तीसरे में बुद्ध संग स्तूप को।

चौथा शैल-चित्र भी बुद्ध संग स्तूप है, जिस पर तीन लिपियों में लिखा हुआ है—खरोष्ठी, ब्राह्मी और सोग्दिअन।

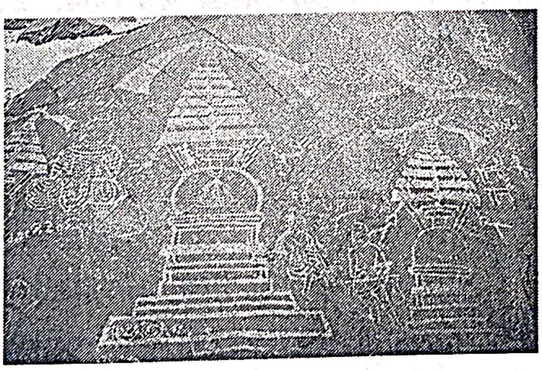
सोग्दिअन मूलतः सग्दिआना की भाषा थी, और कभी मंचूरिया तक फैली हुई थी। ईस्वी सन् तक पश्चिमोत्तर में भी बुद्ध के विचार काफी दूर तक पहुँच चुके थे और अपनी-अपनी भाषा में लोग बुद्ध को समझ रहे थे।



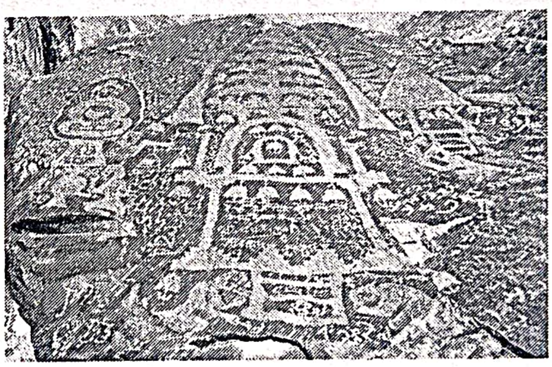
1. चिलास में बुद्ध का शैल-चित्र



2. स्तूप का शैल-चित्र



3. बुद्ध संग स्तूप का शैल-चित्र



4. त्रिभाषीय बौद्ध शैल-चित्र

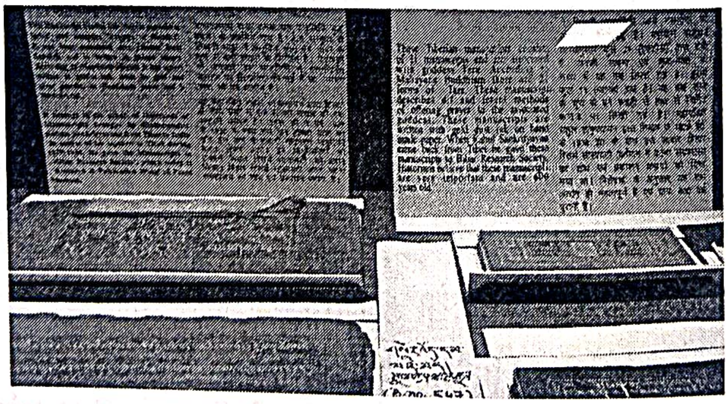
13. इत्सिंग ने अपने यात्रा-विवरण के आरंभ में लिखा है कि चीन से भारत और उसके पड़ोसी देशों में अब तक 56 बौद्ध यात्री आ चुके हैं। इत्सिंग कोई 400 और ह्वेनसांग 657 बौद्ध ग्रंथों की पांडुलिपि भारत से चीन ले गए थे। विचार कीजिए कि जब दो बौद्ध यात्री कोई 1000 बौद्ध पांडुलिपि चीन ले गए थे, तब 56 बौद्ध यात्री कितनी बौद्ध पांडुलिपि चीन ले गए होंगे?

विक्रमशिला, उदंतपुरी, तेलहाड़ा को छोड़िए, सिर्फ नालंदा विश्वविद्यालय में 3 बड़े-बड़े पुस्तकालय थे। सबसे बड़ा पुस्तकालय 9 मंजिला था। अंदाज कीजिए कि बौद्ध विश्वविद्यालयों के पास कितनी किताबें रही होंगी? गुणभद्र, धर्मरुचि, रत्नमति, बोधिरुचि जैसे अनेक बौद्ध विद्वान चीन गए और बौद्ध ग्रंथों का चीनी भाषा में अनुवाद किया। अकेले गुणभद्र ने 78 बौद्ध ग्रंथों का चीनी भाषा में अनुवाद किया। सोचिए कि चीन गए दर्जनों बौद्ध विद्वानों ने कितने बौद्ध-ग्रंथों का चीनी भाषा में अनुवाद किया होगा?

11 वीं सदी तक बौद्ध विद्वानों का तिब्बत जाने का ताँता लगा रहा। शांतिरक्षित, आर्यदेव, कमलशील, अतिश जैसे दर्जनों बौद्ध विद्वान तिब्बत गए, बौद्ध-ग्रंथों का अनुवाद किए, लिखे भी। अकेले अतिश ने 200 बौद्ध-ग्रंथ लिखे थे। सोचिए कि तिब्बत गए दर्जनों बौद्ध विद्वानों ने कितने बौद्ध-ग्रंथ लिखे होंगे?

फाहियान भारत से पोत में लाद-लादकर क्या ले गए? राहुल सांकृत्यायन तिब्बत से खच्चरों पर लाद-लादकर क्या लाए? वही बौद्ध साहित्य, ईंट नहीं। ईंट की बात निकली है तो जानिए कि नालंदा की खुदाई में ईंटों पर भी लिखा हुआ बौद्ध साहित्य मिला है। ईंट की बात छोड़िए, राहुल सांकृत्यायन तिब्बत से सोने और चाँदी की स्याही से लिखा हुआ बौद्ध साहित्य ले आए हैं। यकीन न हो तो तस्वीर में देख लीजिए।

बहुत समृद्ध था बौद्ध साहित्य-अकूत!!!



(सोने-चाँदी की स्याही से लिखा बौद्ध साहित्य)

14. बौद्ध सभ्यता के प्रचार-प्रसार का जो काम उत्तर के मौर्यों ने किया, वही काम दक्षिण में सातवाहनों ने किया।

अशोक के सभी अभिलेख प्राकृत में हैं तो सातवाहनों के भी सभी अभिलेख प्राकृत में हैं।

उत्तर में मौर्य काल तक संस्कृत के अभिलेख नहीं मिलते हैं तो दक्षिण में भी सातवाहन काल तक संस्कृत के अभिलेख नहीं मिलते हैं।

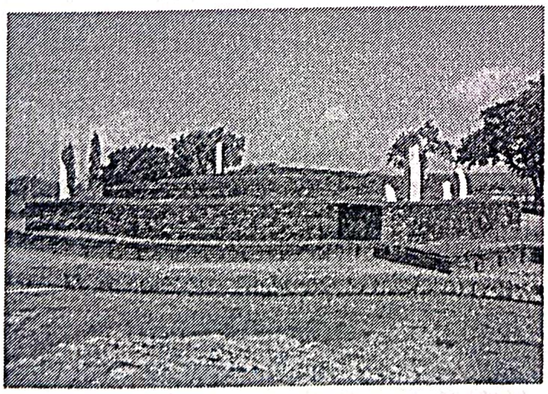
मौर्यों ने अनेक स्तूप, चैत्य और विहार बनवाए तो सातवाहनों ने भी अनेक स्तूप, चैत्य और विहार बनवाए।

अमरावती, गोली, जगय्यपेटा, घंटसाल, भट्टीप्रोलु, नागार्जुन कोंडा जैसे स्थानों के स्तूप इन्हीं सातवाहनों के हैं।

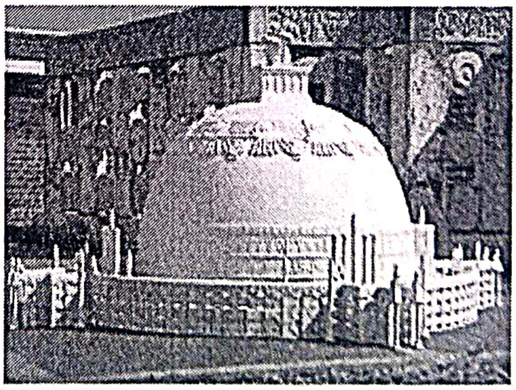
पीतलखोरा, नासिक, भाजा, कार्ले, जुन्नार, बेदसा, कोण्डने आदि स्थानों की बौद्ध गुफाएँ, चैत्य इन्हीं सातवाहनों के नाम हैं।

फिर भी इतिहासकार हिंदू धर्म के उन्नायकों में सातवाहनों की गणना बड़े चाव से करते हैं। जबकि सातवाहनों के बनवाए एक भी मंदिर और देवी-देवता की मूर्तियाँ हमें नहीं मिलती हैं।

बताया गया है कि सातवाहन राजाओं ने बड़े-बड़े यज्ञ रचाए। आखिर जब सातवाहन राजे संस्कृत नही जानते थे तो फिर किस भाषा के मंत्र-श्लोकों से उन्होंने बड़े-बड़े यज्ञ रचाए थे?



(नागार्जुन कोंडा बौद्ध-स्थल)



(अमरावती स्तूप)

15. गुप्तकाल प्राचीन भारत का स्वर्ण युग नहीं था। स्वर्ण युग की परिकल्पना कलम की ताकत से इतिहासकारों द्वारा खड़ा किया गया हौआ है।

जिस अजंता की गुफाओं को घसीटकर इतिहासकार गुप्त-कला से जोड़ते हैं, उस अजंता पर न तो गुप्त राजाओं का शासन था और न संरक्षण था।

जिस नालंदा महाविहार को इतिहासकार गुप्तकालीन मानते हैं, वह वस्तुतः मौर्यकालीन है।

जिस भूमरा और नचना की इमारतें गुप्त राजाओं की देन बताई जाती है, वह वस्तुतः नागों की है।

जिस लाट पर खुद समुद्रगुप्त ने अपनी प्रशस्ति लिखवाई है, वह सम्राट अशोक का है।

जिस सुदर्शन झील पर स्कंदगुप्त का शिलापट्ट लगा है, वह सुदर्शन झील भी चंद्रगुप्त मौर्य की थी।

जिस पटना में गुप्त राजाओं का शाहीमहल था, वह शाहीमहल मौर्यों का था।

जिस गुप्तकाल में फाहियान भारत आया था, वह गुप्त जैसे राजाओं को जानता भी नहीं था।

जिस गुप्त साम्राज्य की विशालता की प्रशंसा है, वह चोल साम्राज्य से भी छोटा था।

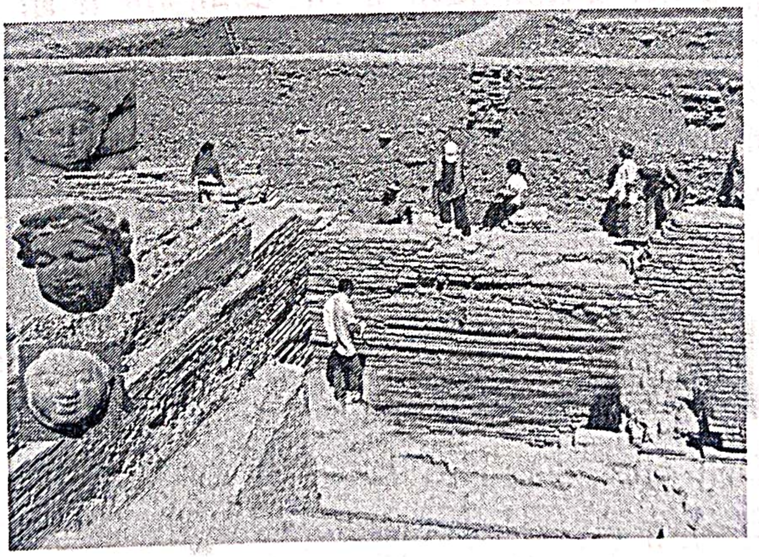
जिस गुप्त साम्राज्य की साहित्यिक उपलब्धियों का यशोगान है, उनकी प्रायः प्रामाणिकता संदिग्ध है।

कुल मिलाकर गुप्तकाल के पास ऐसा कुछ भी नहीं बचता, जिसके बलबूते उसे प्राचीन भारत का स्वर्ण युग कहा जा सके।

16. ओस्कर वान हिनबूर और पीटर स्कीलिंग ने सोका यूनिवर्सिटी, टोक्यो में इंटरनेशनल रिसर्च इंस्टीट्यूट फार एडवांस्ड बुद्धोलाजी के लिए लिखे गए शोध-पत्र "एन इंस्क्राइब्ड कुषाण बोधिसत्व फ्राम वडनगर" में बताया है कि गुजरात स्थित वडनगर का बौद्ध मठ, जो दूसरी से सातवीं सदी का है, वह मूलतः महिला बौद्ध भिक्षु का आवास है।

यदि यह निष्कर्ष सही है तो माना जाएगा कि सिर्फ महिलाओं के लिए अलग महिला छात्रावास बनाने का श्रेय बौद्धों को है।

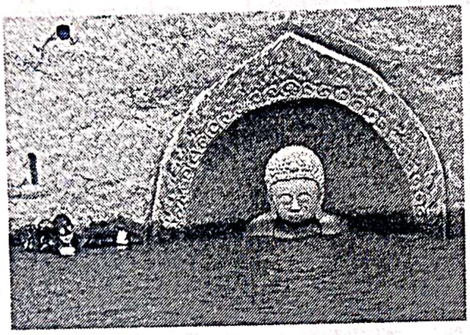
प्राचीन अवशेष दूसरी से 7वीं सदी के दौरान बने एक बौद्ध मठ के हैं। माना जा रहा है कि इस मठ में महिला बौद्ध भिक्षु रहती थीं। अभी तक भारत के किसी हिस्से में महिला बौद्ध भिक्षुओं के रहने और अस्तित्व के मानिंद कोई ठोस पुरातत्वीय साक्ष्य नहीं मिला था। ऐसे में इस मठ का मिलना ऐतिहासिक नजरिये से बेहद अहम है। ओस्कर वॉन हिनबूर और पीटर स्कीलिंग ने तोक्यो स्थित सोका यूनिवर्सिटी में इंटरनैशनल रिसर्च इंस्टिट्यूट फॉर अडवांस्ड बुद्धोलॉजी (IRIAB) के लिए लिखे गए अपने सालाना शोधपत्र 'एन इन्स्क्राइब्ड कुषाण बोधिसत्व फ्रॉम



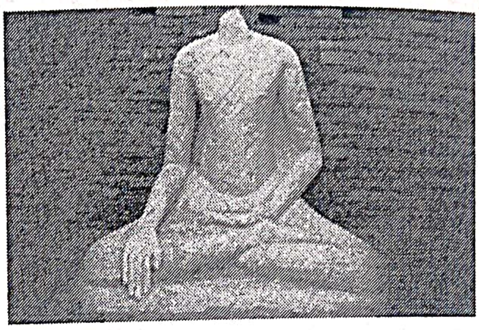
(वडनगर का बौद्ध मठ)

17. बुद्ध की पहली मूर्ति चीन की है, दूसरी भारत की। पानी में डूबी पहली मूर्ति पूर्वी चीन के हांगमैन जलाशय का पानी कम होने से दिखाई पड़ी है। तस्वीर नवनीत कुशवाहा की वाल से है।

आश्चर्य कि भारत में जहाँ पानी में डूबी या माटी में धँसी बुद्ध की मूर्तियों के सिर अमूमन टूटे मिलते हैं, वही चीन वगैरह में बुद्ध की मूर्तियों के सिर सुरक्षित हैं।



(चीन की बुद्ध मूर्ति)



(भारत की खंडित बुद्ध मूर्ति)

18. जहाँ यज्ञ होगा, वही बलि-प्रथा होगी, जरूरी नहीं है। बलि की परंपरा केल्ट लोगों में थी, स्लाविक लोगों में थी, जर्मैनिक लोगों में थी। क्या ये सभी लोग यज्ञ कर रहे थे?

बलि की परंपरा मेसोपोटामिया में थी, फोनीशिया में थी, अफ्रीका में थी। क्या ये सभी देश यज्ञ कर रहे थे?

भारत के अनेक आदिम समाज में, ट्राइब्स में, यहाँ तक कि सिंधु घाटी की सभ्यता के सीलों पर बलि का दृश्यांकन है। क्या ये सभी यज्ञ कर रहे थे?

बुद्ध ने बलि का विरोध किया, जीव हिंसा का विरोध किया, इसका कतई मतलब यह नहीं है कि वे वैदिक यज्ञ का विरोध कर रहे थे। ये अग्नि-होम वाला वैदिक यज्ञ, जिसे अवेस्ता में यश्न कहा गया है, बुद्ध के बाद भारत में आया है।

बौद्ध स्थलों का परिप्रेक्ष्य

19. देउर कोठार, मध्य प्रदेश के रीवा जिले में स्थित बौद्ध स्थल है। इसकी पहली जानकारी 1982 में मिली। 1999-2000 में खुदाई हुई। खुदाई में लगभग 50 छोटे-बड़े स्तूप सामने आए।

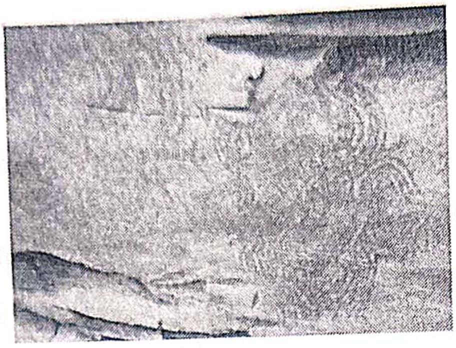
देउर मूलतः प्राकृत का देहुर है। देहुर का संस्कृत रूप देवगृह है। देउर कोठार का अर्थ है-देवगृहों का भंडार। कोठार का अर्थ भंडार है। देव मूल रूप से बुद्ध का सूचक है जो हमें देवानंपिय में प्राप्त होता है।

देउर कोठार वाकई स्तूपों का भंडार है। यह बात खुदाई से पहले भी वहाँ की जनता जानती थी। तभी हमारे पूर्वजों ने उसका नाम देउर कोठार दिया है।

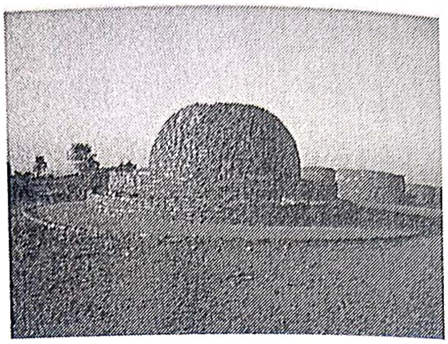
इतिहासकारों ने माना है कि अनेक स्तूप मौर्यकालीन हैं। बगल में बौद्ध भिक्षुओं के शैलाश्रय हैं। शैलाश्रय में शैलचित्र हैं। वहाँ के शैलचित्रों को इतिहासकारों ने कोई 5 हजार साल पुराना बताया है। इनमें एक शैलचित्र त्रिरत्न का भी है।

एक विशाल लाल बलुए पत्थर का स्तंभ भी मिला है। स्तंभ टुकड़ों में है। इस पर छः पंक्तियों का बुद्ध को समर्पित अभिलेख है।

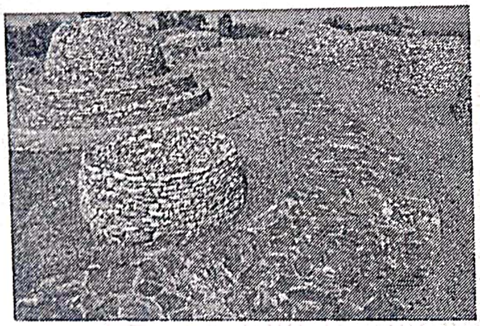
तस्वीर में स्तूपों की शृंखला है, शैलचित्र हैं, त्रिरत्न का भी शैलचित्र है, गुफाएँ हैं, स्तंभ पर अंकित अभिलेख का देवनागरी भाषांतर है और पुरातत्व विभाग का बोर्ड है। इतिहास बदल रहा है!!!



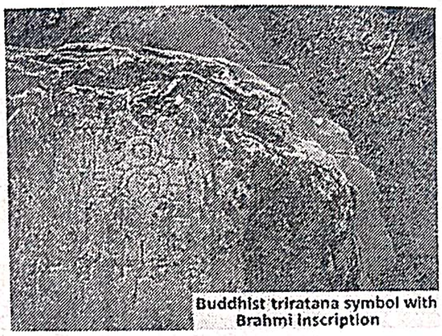
(देउर कोठर का शैल-चित्र)



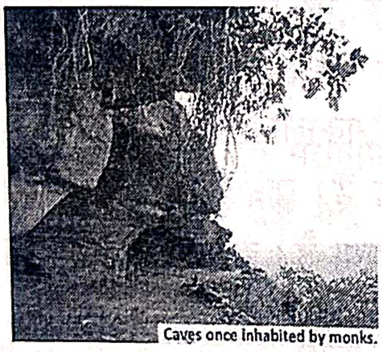
(स्तूप)



(स्तूपों की शृंखला)



(त्रिरत्न संग ब्राह्मी लेख)



(बौद्ध गुफाएँ)

Text

भ ग व तो बु ध

उ त र मि त्रो उ त र मि त्र स अ

भ ड्‌ भ ड्‌ स आ ते वा सि ना दि नु

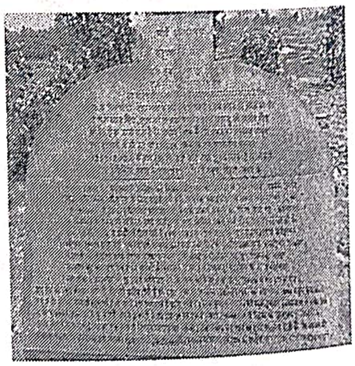
उ पा स क स आ ते वा सि स व ज य स व

ध म द वे न के क डी के न व स ति ये

उ स पि तो भं भो आ आ च रि ये न क सि

Deur Kothar Inscription[1]

(शिलालेख का टेक्स्ट)

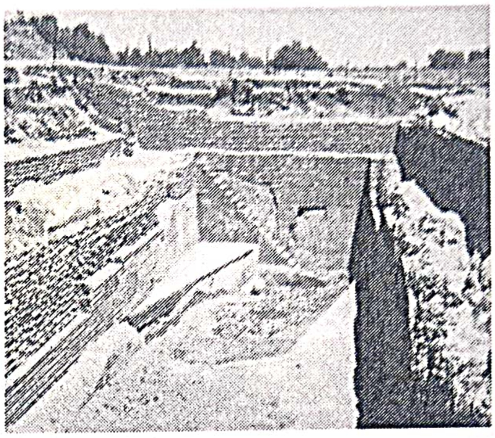


(साइन बोर्ड)

20. धोलावीरा गुजरात में है। यह सिंधु घाटी सभ्यता का महत्वपूर्ण नगर है। आप इस नगर से प्राप्त स्तूप और जलकुंड को भी देखिए और मोहनजोदड़ो के स्तूप और स्नानागार को याद कीजिए।

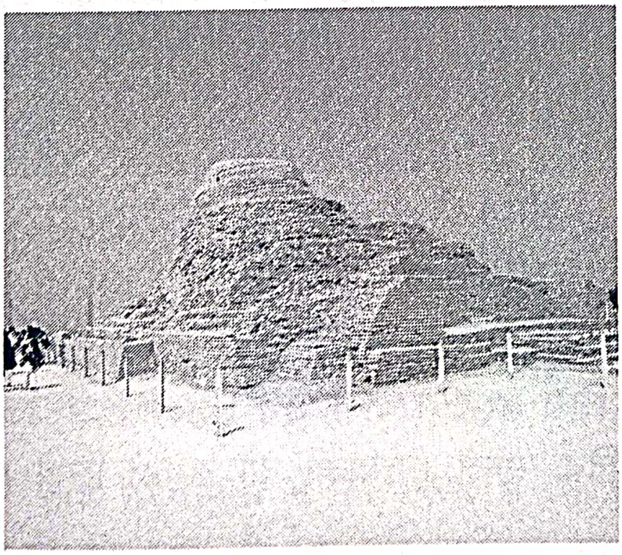


(धोलावीरा का स्तूप)

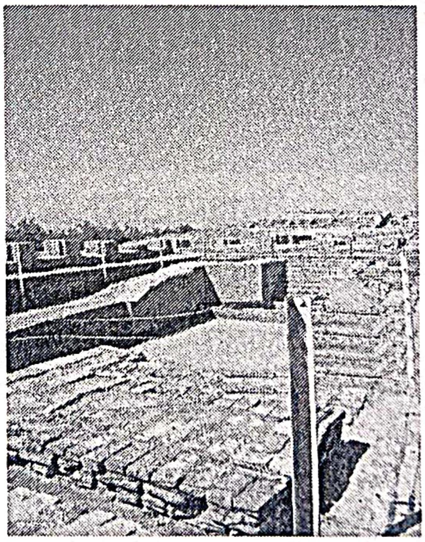


(मोहनजोदड़ो का स्तूप)

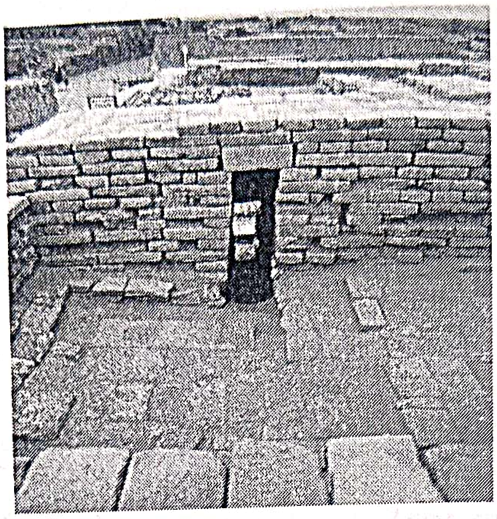
21. नीचे की तस्वीर में मोहनजोदड़ो का एक स्तूप है, दूसरा स्नानागार है और तीसरा आवास है। तीनों में एक जैसी ईंटों का इस्तेमाल हुआ है। अमूमन सिंधु घाटी की ईंटों की लंबाई लगभग 28 सेंमी है। जो लोग मोहनजोदड़ो के स्तूप को कुषाणकालीन बताते हैं, उन्हें जानना चाहिए कि कुषाणकालीन ईंटों की लंबाई सिंधु घाटी की ईंटों की लंबाई से कोई डेढ़ गुना अधिक थी। इसलिए यह स्तूप सिंधु घाटी सभ्यता के समय का है, न कि कुषाण काल का।



(स्तूप)

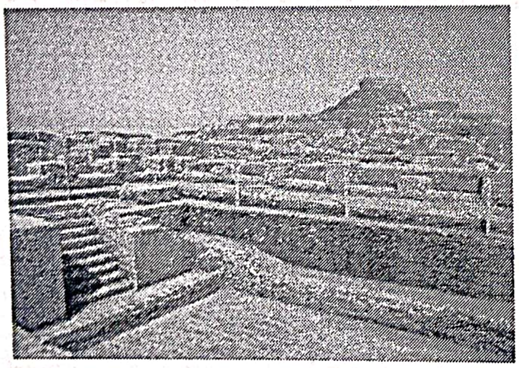


(स्नानागार)

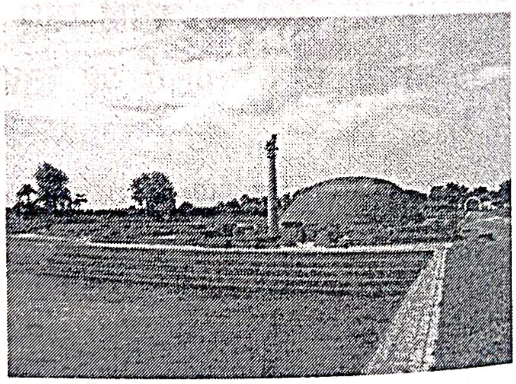


(आवास)

22. पहली तस्वीर मोहनजोदड़ो की है। स्तूप के साथ स्नानागार है। दूसरी तस्वीर वैशाली की है। स्तूप के साथ स्नानागार है। दोनों का अभिकल्पन (इंजीनियरिंग) एक जैसा है। सिंधु घाटी सभ्यता का अनेक अभिकल्पन बौद्ध सभ्यता में आगे भी जारी रहा।



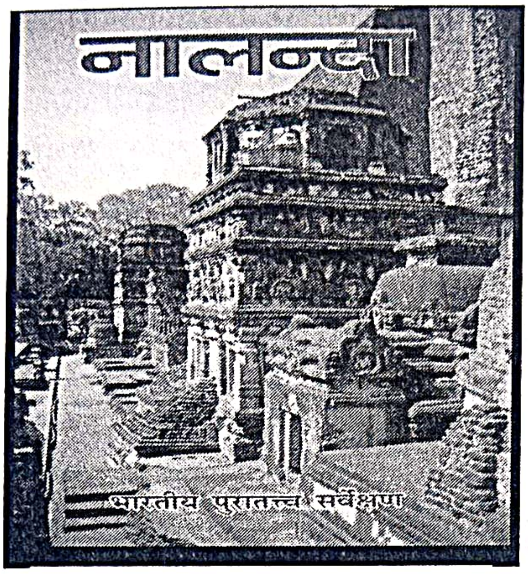
(मोहनजोदड़ो में स्तूप व स्नानागार)

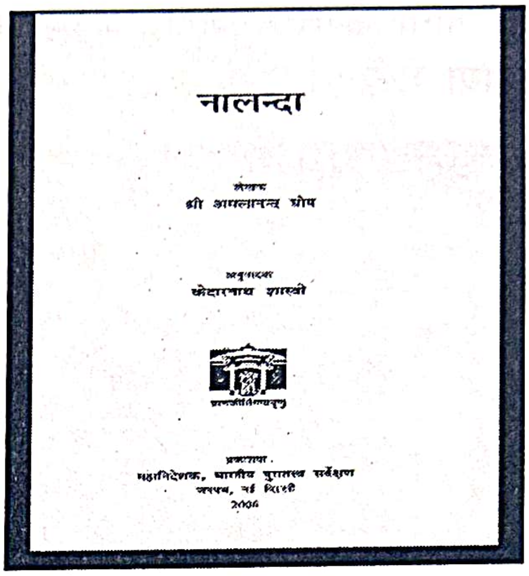


(वैशाली में स्तूप व स्नानागार)

23. शिलाओं पर...ताम्र-पट्टिकाओं पर...ईंटों पर...मुद्रा-छापों पर... टिकड़ियों पर...प्राचीन काल में जिस तरह से बौद्ध सुत्त (बौद्धोपदेश) लिखे हुए मिलते हैं, उस तरह से वैदिक सूक्त (ऋचाओं का समूह) लिखे हुए नहीं मिलते हैं। क्यों...?

ईंटों पर...मुद्रा छापों पर...टिकड़ियों पर बड़े पैमाने लिखे गए बौद्ध सुत्त नालंदा के खंडहरों से प्राप्त होते हैं। इसके अध्ययन के लिए अमलानंद घोष लिखित पुस्तक "नालंदा" उपयोगी है।





(पुस्तक की प्रतिलिपि)

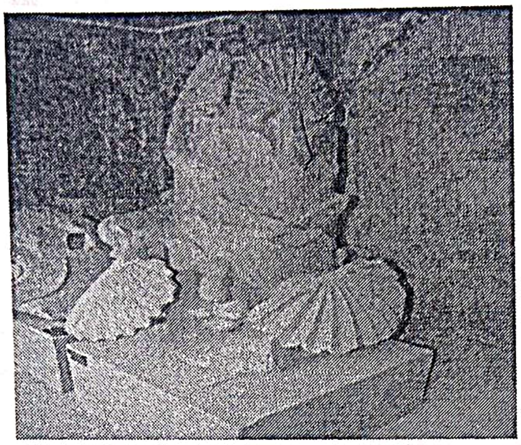
24. प्रसिद्ध मानवशास्त्री वेरियर एल्विन ने बताया है कि नाग का अर्थ आदमी है। उन्होंने पूर्वोत्तर की भाषाओं से कई सबूत दिए हैं। ऐसे भी पालि में नाग का एक अर्थ "आदमी" है। नाग को नग (पहाड़) या नग्न (नंगा) आदि से जोड़ा जाना व्यर्थ है। नाग/नाग वंश को आदमी के अर्थ में जोड़ा जाना सही है।

आरंभिक नाग राजाओं के सिक्कों पर ताड़ वृक्ष का अंकन है। मथुरा, इंदौरखेड़ा आदि स्थानों से नाग राजाओं के जो सिक्के मिले हैं, उन पर ताड़ वृक्ष का अंकन है। ताड़ वृक्ष नागों का प्रतीक चिह्न था।

इतिहासकारों ने नवनाग की व्याख्या, जो नौ नाग राजाओं के रूप में की है, वह सही नहीं है। कहीं नौ नाग राजाओं का उल्लेख भी नहीं है। नव नाग का संबंध नए या बाद के नाग राजाओं से है, जिनके स्मृति चिह्नों पर उसी ताड़ वृक्ष का अंकन मिलता है।

ताड़ पद्मावती में भी मिला है जो नागों की राजधानी थी। भूमरा में तो पूरे खंभे ही ताड़ के वृक्षों के रूप में गढ़े गए हैं। मगर भूमरा के निर्माण-कार्यों को इतिहासकारों ने गुप्त राजाओं से जोड़ दिया है। इतिहासकारों ने नागों की बनाई गई अनेक इमारतों को गुप्त राजाओं द्वारा बनवाया मानने की भूल की है।

नागों के स्तंभ-शिखर ताड़युक्त हुआ करते थे। पद्मावती नगरी उर्फ पवाया से प्राप्त बतौर नमूना एक ताड़युक्त स्तंभ-शिखर देखिए।



(पवाया से प्राप्त ताड़युक्त स्तंभ-शिखर)

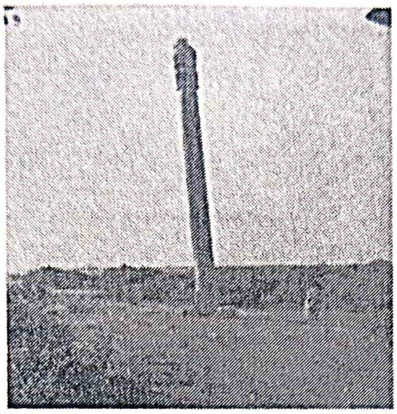


(साइन बोर्ड)

25. पहले स्तंभ की तस्वीर 1870 में जोसेफ डेविड ने ली थी। दूसरे स्तंभ की तस्वीर अवंतिका जया ने भेजी है। पहले स्तंभ की ऊँचाई कोई 30 फुट है, जबकि दूसरे की लंबाई कोई 53 फुट है। पहले स्तंभ के बारे में 1870 के दशक में कनिंघम ने लिखा है, जबकि दूसरे स्तंभ की चर्चा सर्वप्रथम बुकानन ने 1810 के दशक में की है।

पहला स्तंभ गाजीपुर (उ. प्र.) के लटिया में है। दूसरा स्तंभ जहानाबाद (बिहार) के लाठ में है। प्राकृत में स्तंभ को लाट कहा जाता है। लाट मौजूद होने के कारण ही पहले गाँव का नाम लटिया और दूसरे गाँव का नाम लाठ है।

लटिया और लाठ के स्तंभों में फर्क है। एक गोल है और दूसरा पहलदार है। पहलदार स्तंभ गुप्त और गुप्तोत्तर काल की खासियत है। गोल, चिकना और बलुए पत्थर का चमकदार स्तंभ अशोक के लाट की विशेषता है। लटिया का लाट अशोक का है जिसकी पुष्टि कनिंघम के उस बयान से भी होती है कि इसके शीर्ष पर आठ सिंहों की मूर्ति थी, जो फिलहाल नहीं है। मगर पुरातत्व विभाग ने इसे गुप्त काल का लिखा है। पुरातत्व विभाग साइनबोर्ड को संशोधित करे।

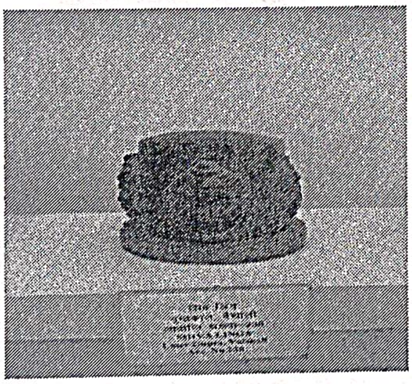


(लटिया स्तंभ)



(लाठ का लाट)

26. आप पहली तस्वीर में देख सकते हैं कि मनौती स्तूप को पुरातत्व विभाग ने शिव लिंग बता दिया है। यह वैशाली से प्राप्त आवाप्ति संख्या 238 है। विशेषकर बिहार और झारखंड क्षेत्र में ऐसे अनेक मनौती स्तूप खुदाई में मिले हैं...भदुली में, वैशाली में, कुर्किहार में! पुरातत्व विभाग को मनौती स्तूप और शिव लिंग में फर्क को समझना चाहिए।



(संग्रहालय का मनौती स्तूप)



(भदुली से प्राप्त मनौती स्तूप)

27. बेहद गर्मी थी...सुजाता के गाँव से बराबर की पहाड़ियों पर जाना था...बराबर की पहाड़ियों पर अशोक की बनवाई हुई गुफाएँ हैं।

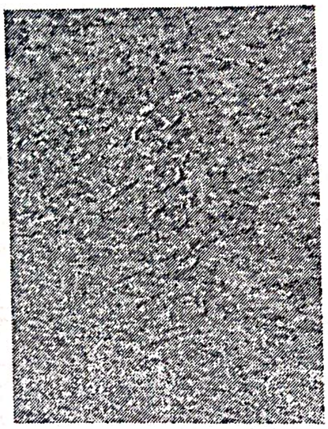
रास्ते की जानकारी ली...पता चला कि गया के मोरिया घाट से बेला जाना होगा...बेला सुनकर उरूबेला जैसे गाँव याद आए...मोरिया घाट से गुजरते हुए मठ मोरिया की याद आई...कैमूर जिले के मठ मोरिया में अशोक का अभिलेख है...अशोक ने यहाँ एक रात गुजारी थी...जानें क्यों इतिहासकार मौर्य कहते हैं...जनता के लिए वह मोरिय था।

आश्चर्य नहीं कि गया का मोरिया घाट अशोक के नाम पर पड़ा होगा...अशोक के बौद्ध गया जाने के प्रमाण हैं।

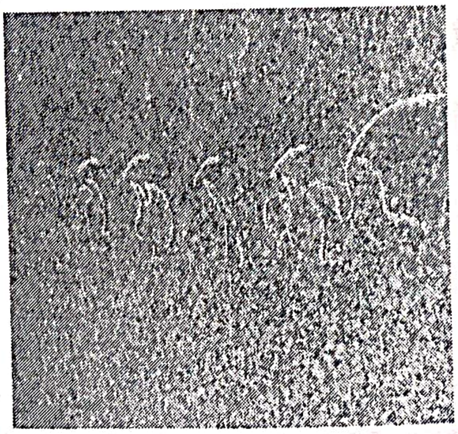
अशोक के समय में बराबर की पहाड़ी जवान रही होगी...अभी बिल्कुल बूढ़ी और जर्जर है...सीढ़ियों से चढ़कर गुफाओं के पास पहुँचा...गुफाएँ ग्रेनाइट की बनी हुईं, भीतर से एकदम चिकनी और चमकदार थीं।

लिपियों को देखा...हैरत हुई कि अनेक लिपियाँ अभी अनपढ़ी हैं...एक लिपि ऊपर से नीचे की ओर लिखी गई थी... दूसरी शंखाकृति में शंख लिपि थी...ये लिपियाँ सिंधु घाटी की भाँति पढ़ी नहीं जा सकी हैं।

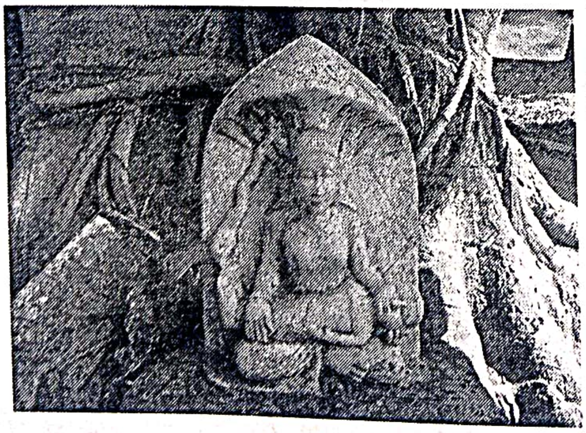
आँखें उस मूर्ति को तलाश रही थीं जिसमें गौतम बुद्ध माँ की गोद में हैं...सीढ़ियों से उतरते दाहिने किनारे एक पेड़ के नीचे वह मूर्ति दिखाई पड़ी...संगमरमर की बनी...बिल्कुल उपेक्षित!



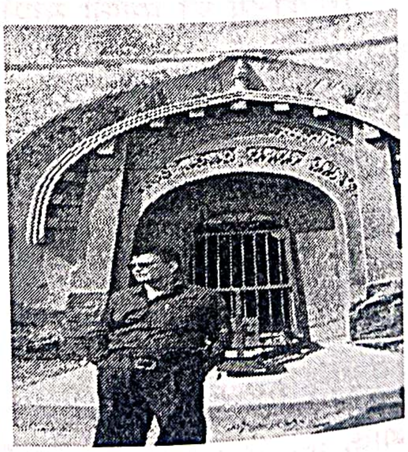
(ऊपर से नीचे लिखी लिपि)



(शंख लिपि)



(माँ की गोद में बुद्ध)



(बराबर गुफा)

28. 22 जनवरी, 2018 से सीवान जिले के तितरा क्षेत्र की खुदाई आरंभ हो चुकी है। बड़े पैमाने पर बौद्ध अवशेष मिल रहे हैं। इधर बीच कृष्ण कुमार सिंह की "प्राचीन कुसीनारा का अध्ययन" नामक किताब आई है। लेखक ने दावा किया है कि यही सीवान का तितरा क्षेत्र असली कुशीनगर है, जहाँ गौतम बुद्ध का परिनिर्वाण हुआ था।

कनिंघम ने कुशीनगर को देवरिया जिले में स्थित कसिया से समीकृत किया है। फिलवक्त कुशीनगर उत्तर प्रदेश का जिला है। विसेंट स्मिथ कनिंघम से सहमत नहीं थे। कुशीनगर को लेकर इतिहासकारों के कई विचार हैं।

फाहियान कुशीनगर गए थे। कुशीनगर से पूरब और दक्षिण 12 योजन चलकर वैशाली पहुँचे थे। यदि फाहियान पर यकीन करें तो वैशाली से कुशीनगर की दिशा और दूरी जो उन्होंने बताई है, ठीक लगभग वही है, जहाँ तितरा क्षेत्र में अभी खुदाई चल रही है।

ऐसे में संभव है कि नए रिसर्च के मुताबिक गौतम बुद्ध का परिनिर्वाण स्थान उत्तर प्रदेश के कुशीनगर जिले से बदलकर बिहार के सीवान जिले में स्थापित हो जाए।


इतिहास • जीरादेई प्रखंड के तितरा टोले बंगरा में पुरातत्व विभाग 22 जनवरी से करा रहा खुदाई

सीवान में मिले बौद्धकालीन संस्कृतियों के अवशेष

प्रभात खबर 07.02.018

मृदभांड सहित बुद्ध की आकृति जैसी खंडित प्रतिमाएं, मृणमूर्ति, खिलौने व हिरण की प्रतिमा मिली

बौद्ध साहित्य में जिक्र

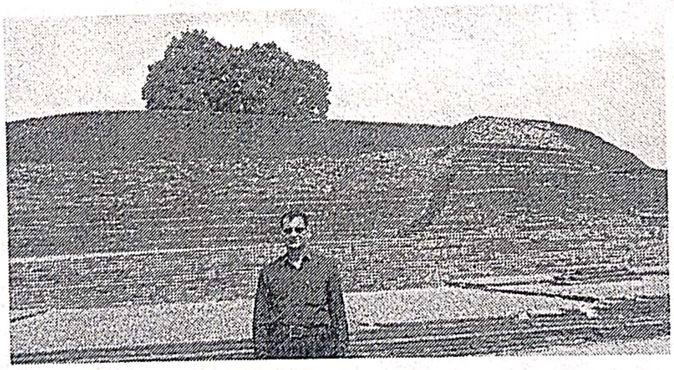
29. सुजाता के गाँव जाना हुआ। बौद्ध गया से पूरब निरंजना नदी के तट पर यह गाँव है। इसे बकरौर कहा जाता है। पालि साहित्य में इसे

सेनानी गाँव कहा गया है। जब से इस गाँव में सुजाता का स्तूप मिला है, तब से इस गाँव का एक नया नाम सुजाता ग्राम प्रचलित हुआ है।

तस्वीर में सुजाता का स्तूप है। इसकी पुष्टि वहाँ से प्राप्त 8 वीं सदी के एक अभिलेख से होती है, जिस पर सुजाता गृह लिखा है।

सुजाता का यह स्तूप मिट्टी से ढँका हुआ था। 21 वीं सदी के प्रथम दशक में मिट्टी के टीले की खुदाई हुई, तब इतिहास में सुजाता का स्तूप भी शामिल हो गया।

सुजाता स्तूप से कोई एक मील की दूरी पर वह स्थान है, जहाँ सुजाता ने गौतम बुद्ध को खीर खिलाई थी। अभी इसे सुजाता मंदिर कहते हैं। सुजाता मंदिर से कोई 200 मीटर पूरब में एक टीला है। इस टीले को स्थानीय लोग मठ बोलते हैं। गाँव के एक कृषक से टीले की थोड़ी-सी खुदाई कराई तो मुझे विश्वास हो गया कि यह एक विशाल स्तूप है और संभवतः गौतम बुद्ध को खीर खिलाए जाने की स्मृति में बनवाया गया है। इतिहास में विहारों के जलाए जाने पर विमर्श होते रहे हैं, मगर स्तूपों को मिट्टी से ढँकवाए जाने का विमर्श शेष है।



(बकरौर में सुजाता का स्तूप)

30. कैमूर की पहाड़ी पर बनी गौतम बुद्ध की यह पेंटिंग अनूठी है...पहले पेंटिंग को पानी से तर कीजिए...फिर कोई बीस मिनट इंतजार करिए...तब यह पेंटिंग उभरती है...मगर जितनी खूबसूरत यह पेंटिंग है, उतना ही खराब उस गाँव का नाम है...घुरहूपुर...पता नहीं सभ्यता के किस मुकाम यह नाम पड़ा होगा!

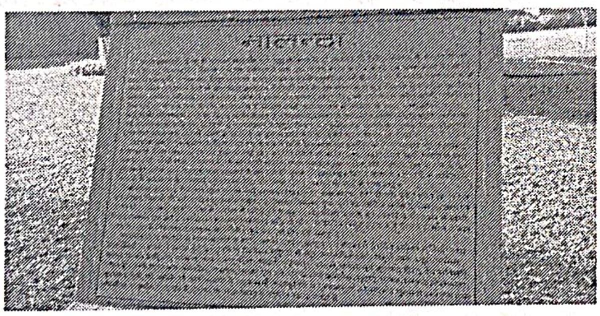


(घुरहूपुर की पहाड़ी एवं गुफा)

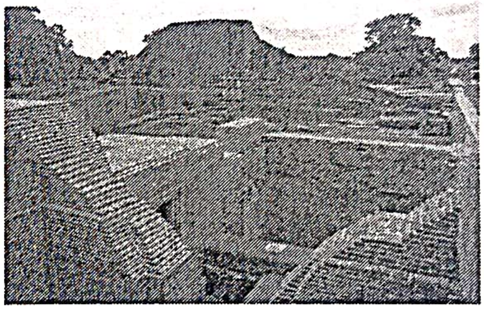


(घुरहूपुर का शैल चित्र)

31. मुख्यधारा के सभी इतिहासकार बताते हैं कि नालंदा विश्वविद्यालय की स्थापना गुप्त राजा कुमारगुप्त ने की थी, जबकि सभी जानते हैं कि नागार्जुन नालंदा विश्वविद्यालय के आचार्य थे और जब नागार्जुन नालंदा विश्वविद्यालय में पढ़ाते थे, तब कुमारगुप्त के दादा भी पैदा नहीं हुए थे।



(साइन बोर्ड)

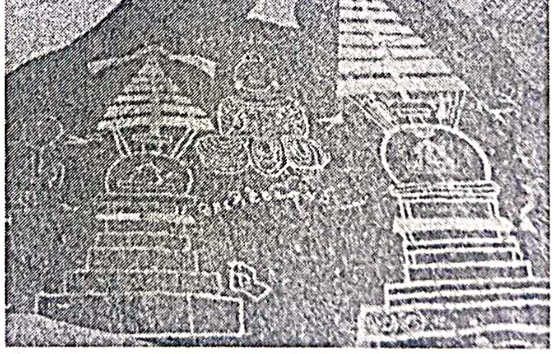


(नालंदा महाविहार)

32. पहला शैलचित्र भारत के जिला चंदौली स्थित घुरहूपुर का है। दूसरा शैलचित्र पाकिस्तान के जिला गिलगित स्थित चिलास का है। एक अजीब-सी समानता है। बुद्ध को लेकर दोनों देशों का शिल्प एक है।



(घुरहूपुर का शैल चित्र)

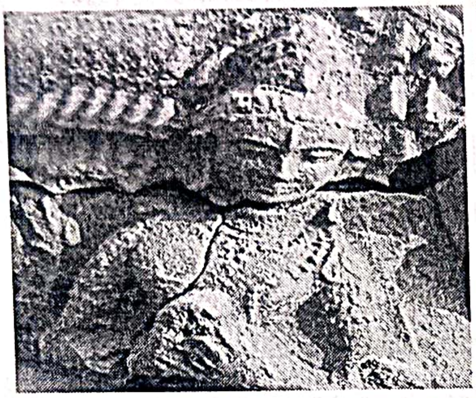


(चिलास का शैलचित्र)

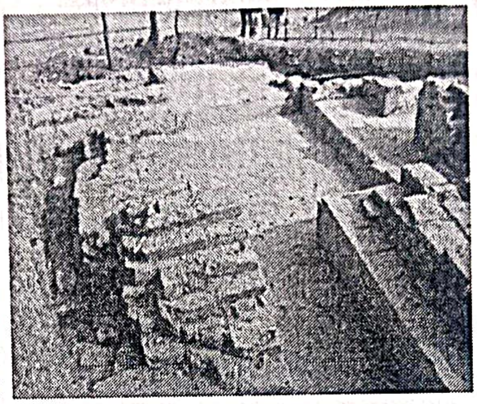
33. बिहार के लखीसराय में लाली पहाड़ी की खुदाई में बड़े पैमाने पर मिल रहे हैं बौद्ध अवशेष...बुद्ध की मूर्तियाँ...साधना केंद्र...साधना केंद्र की इंटर कनेक्टेड कक्षाएं...दीपक...वोटिव मुहरें....वोटिव स्तूप....अनेक!

ऐसे ही नाम नहीं है बिहार!

चप्पे-चप्पे पर हैं बौद्ध विहार!



(बुद्ध की मूर्ति)



(लाली पहाड़ी के भग्नावशेष)

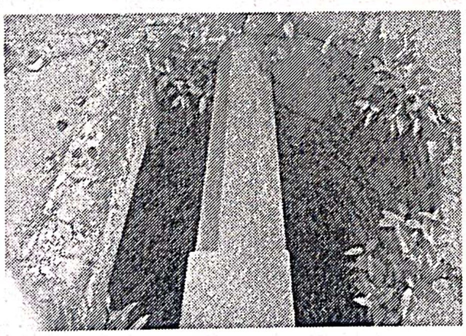
34. बिहार स्थित लाली पहाड़ी की बौद्ध सभ्यता बड़े पैमाने पर आग लगाए जाने से नष्ट हुई थी----बोले पुरातत्ववेत्ता



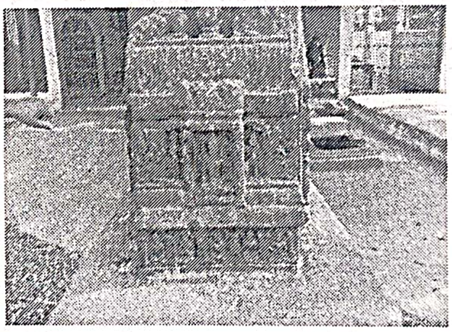
(लाली पहाड़ी से प्राप्त अवशेष)

35. रविवार था...कुर्किहार जाने की इच्छा हुई और वहाँ गया...यह दरअसल बौद्धगया से राजगीर के रास्ते का महत्वपूर्ण बौद्ध केंद्र है...

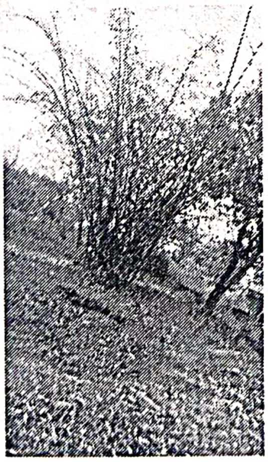
कुर्किहार की पहली जानकारी 1847 में मेजर किट्टो को मिली...वे तीन दिनों तक वहाँ रुके और 10 गाड़ी बौद्ध मूर्तियों को ले गए...कुछ मूर्तियाँ नेशनल म्यूजियम, कोलकाता एवं कई विदेशी म्यूजियम में रखी गईं...ये तमाम मूर्तियाँ कुर्किहार गाँव के गढ़ जैसे एक टीले से मिलती हैं...कनिंघम ने 1861-62 और फिर 1879-80 में कुर्किहार की यात्रा की...उन्होंने टीले की ऊँचाई 25 फुट और विस्तार 600 वर्ग फुट बताया है...1930 में वहाँ के एक स्थानीय जमींदार राय हरिप्रसाद ने इस टीले के कुछ अंशों की खुदाई कराई थी...226 मूर्तियाँ मिली थीं जिनमें 80 मूर्तियाँ अष्टधातु की थीं...फिलहाल वे सभी मूर्तियाँ पटना के संग्रहालय में सुरक्षित हैं...गाँव घूमते समय गली में, कुएं पर, दीवारों पर, दरवाजों के बाहर अनेक बौद्ध अवशेष दिखाई पड़े...कुर्किहार के देवी स्थान में अनेक बौद्ध मूर्तियाँ सिंदूर और तेल से पुती हुई दिखाई पड़ीं...कुर्किहार कोई विहार ही था...शेष खुदाई के इंतजार में!



(कुर्किहार का कुआँ)



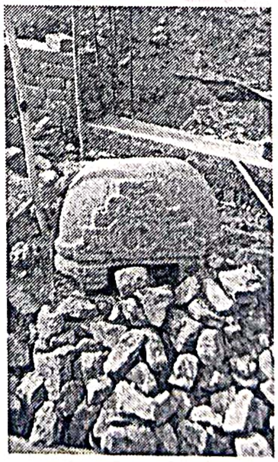
(मनौती स्तूप)



(टीला)



(देवी स्थान में बुद्ध)



(गली में अवशेष)

36. ...और अंततोगत्वा बिहार स्थित लखीसराय के जयनगर लाली पहाड़ी की खुदाई शुरु हो गई...ताबड़तोड़ बुद्ध की प्रतिमाएँ मिल रही हैं...12 से अधिक स्तूप उभरकर आए हैं...इतिहासकार भौंचक हैं...सेल (बौद्धों के प्रार्थना स्थल) के निचले हिस्से में बड़े पैमाने पर राख का ढेर मिल रहा है...पुरातात्विकों ने अनुमान किया है कि इस बौद्ध स्थल के नष्ट होने के पूर्व यहाँ आगजनी की बड़ी घटना हुई है...यह भी जाँच का विषय है कि आखिर बौद्ध स्थल पर इतनी भयंकर आगजनी किसने की?



(लाली पहाड़ी के बौद्ध अवशेष)

37. दुब्बा...भूरहा...नसेर...गुनेरी...देवकुली...नरौनी...हड़ाही धराउत...मंडा...तारापुर...पत्थरकट्टी...जेठिवन...सरेन-झरना...औंगारी... कउआडोल...बिहटा...उमगा पहाड़...चिरियावाँ...गुरपा...नीमी...न्यारी... लखैपुर...संडेश्वर...बौद्ध गया के दूर-दूर तक बसे दर्जनों गाँवों में बिखरी पड़ी हैं बुद्ध की मूर्तियाँ...घर-आँगन...गली-बगीचा...खेत-खलिहान सिर्फ बुद्ध ही बुद्ध...दुब्बा गाँव में बुद्ध की मूर्तियों के सिर कटे हैं...और यदि हैं तो उनके सिर को विकृत कर दिया गया है...कई बौद्ध स्तूपों का इस्तेमाल धड़ल्ले से बैठने के लिए किया जा रहा है...एक गाँव है कुर्किहार...हजार घर की वस्ती...हर घर म्यूजियम है...हर घर में बुद्ध की मूर्ति है...स्तूप है...अन्य बौद्ध कलाकृतियाँ हैं !!!



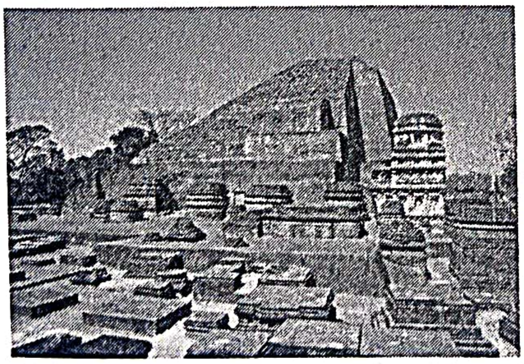
ग्रामीण इलाकों में बिखरे पुरातात्विक अवशेषों को सहेजेगी सरकार

38. नालंदा और उसके आसपास का इलाका कभी बौद्ध शिक्षा का हब था।

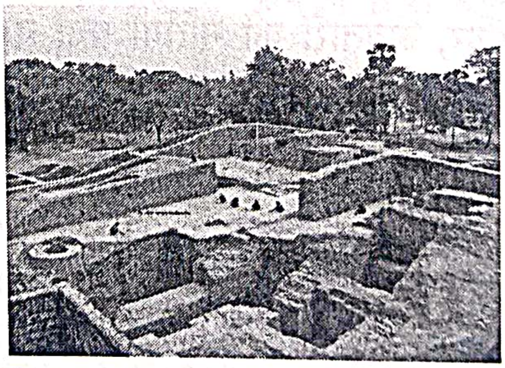
पहली तस्वीर नालंदा बौद्ध विहार की है, दूसरी तेल्हाड़ा बौद्ध विहार की और तीसरी उदंतपुरी बौद्ध विहार की। ये सभी बौद्ध शिक्षा केंद्र नालंदा और उसके आसपास के इलाके में हैं।

नालंदा जिले के अरावा गाँव के पास तालाब की खुदाई में प्राचीन कुआँ और कुएँ में मिट्टी के बर्तन मिले हैं। कुएँ की ईंटे वहीं हैं, जो नालंदा बौद्ध विहार में लगी हैं। यहाँ विहार होने का अनुमान किया गया है।

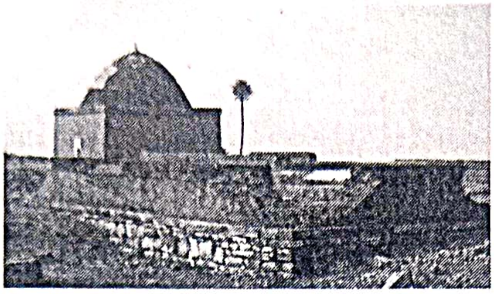
विहार को पालि में आराम कहते हैं। अरावा में आराम की छवि है। पूरब में "म" का "व" में परिवर्तन होता है जैसे कमल=कँवल, श्यामल=साँवला, आमलक=आँवला आदि। अरावा भी आराम हो सकता है। खुदाई की जरूरत है।



(नालंदा बौद्ध विहार)



(तेल्हाड़ा बौद्ध विहार)





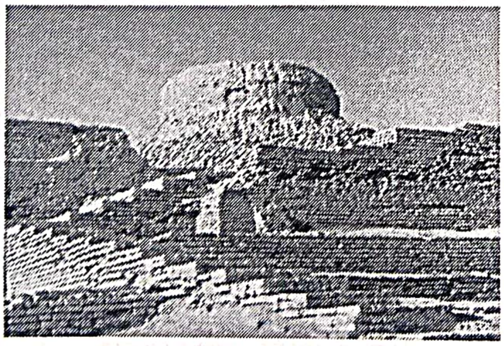
तालाब की खुदाई में मिला प्राचीन कुआं और मिट्टी के बर्तन

(उदंतपुरी बौद्ध विहार)

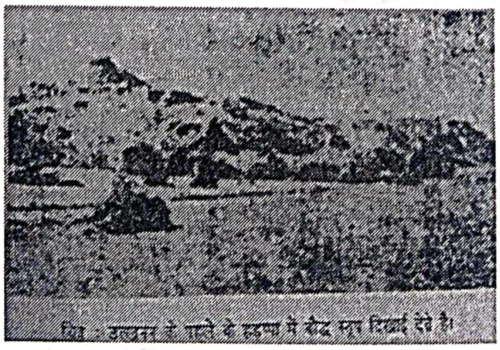
39. सिंध साम्राज्य के अनेक नगरों में स्तूप मिले...हड़प्पा में मिला... मोहनजोदड़ो में मिला...धोलावीरा में मिला...राखीगढ़ी में मिला...राखीगढ़ी में तो झुंड के झुंड स्तूप मिले।

जाने क्यों, इतिहासकार बताते हैं कि ये स्तूप कुषाण काल के हैं...भाई, कुषाण काल तो बुद्ध की मूर्तियों के लिए जाना जाता है...यदि सिंध साम्राज्य के ये स्तूप कुषाणों ने बनवाए तो वे सिर्फ स्तूप ही क्यों बनवाते? वे तो सिंधु घाटी की गली-गली में...हर चौक-चौराहे पर बुद्ध की मूर्तियाँ बनवाते?...वे तो गांधार कला के आविष्कारक थे और बुद्ध की मूर्तियों के लिए तो कुषाण राजे इतिहास में जाने जाते हैं।

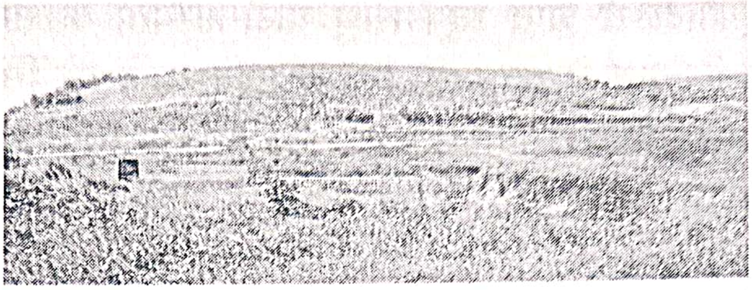
...और यदि सिंध साम्राज्य के ये स्तूप कुषाण काल के हैं तो कुषाणों से करीब डेढ हजार साल पहले तो आपके अनुसार आर्य आए थे...जिन्होंने सिंध साम्राज्य पर कब्जा किया...फिर उन्होंने सिंधु घाटी के डगर-डगर में मंदिर, अवतारों की मूर्तियाँ क्यों नहीं बनवाए?



(मोहनजोदड़ो का स्तूप)

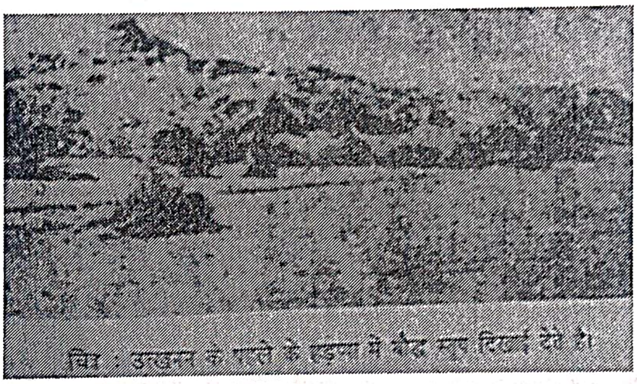


(हड़प्पा का स्तूप)



(धोलावीरा का स्तूप)

40. यह दुर्लभ तस्वीर हड़प्पा के स्तूप का है। अब यह नहीं रहा। 19 सदी के उत्तरार्द्ध में इसे लोगों ने नष्ट कर दिया। संयोग से उस समय के पर्यटकों ने स्तूप की तस्वीर खींच ली थी वरना हम इतने बड़े ऐतिहासिक तथ्य से वंचित रह जाते। बधाई ऐसे पर्यटकों को जिन्होंने स्तूप की तस्वीर खींची थी।



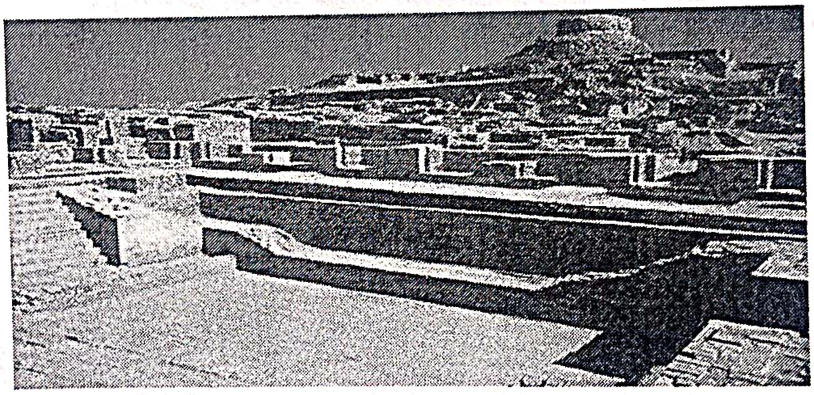
(हड़प्पा स्तूप का फोटोग्राफ)

41. पढ़ लीजिए, सिंधु घाटी सभ्यता के प्रमुख नगर राखीगढ़ी की खुदाई में एक नहीं, सात-सात स्तूप मिले हैं। यही है आपकी सिंधु घाटी सभ्यता!!!

हरियाणा के हिसार जिले के राखीगढ़ी गांव में विश्व की प्राचीनतम सभ्यता के साक्ष्य मिले हैं। राखीगढ़ी में सिंधु घाटी सभ्यता का सबसे बड़ा शहर होने का दावा किया गया है।

- यह सभ्यता ईसा पूर्व 5500 वर्ष तक पुरानी होने की संभावना है।
- राखीगढ़ी में उत्खनन के दौरान कुल सात स्तूप मिले हैं। इनमें चार और पांच नंबर स्तूप के नीचे सबसे बड़ी आबादी होने के प्रमाण मिले हैं।

42. सिंधु घाटी से प्राप्त स्तूपें सिंधु घाटी सभ्यता के समकालीन हैं। स्वपन कुमार बिस्वास ने बताया है कि यदि इन स्तूपों को सिंधु नगरों की कुरसी के ऊपर बाद में बनाया गया होता तो इन स्तूपों के नीचे अन्य संरचनाएँ मिलनी चाहिए थी, लेकिन स्तूपों के नीचे अन्य संरचनाएँ नहीं मिली है। इनके निर्माण में प्रयुक्त सामग्री हड़प्पा काल की है। इसकी ईंटें और अन्य इमारती सामान वही है जो अन्य खंडहरों में मिले हैं। इसका वास्तुशिल्प, निर्माण की पद्धति एवं विधि, प्रारूप और रूपरेखा सभी हड़प्पायुगीन ही हैं। स्तूप में मिले बर्तन पर की गई चित्रकारी भी हड़प्पा सभ्यता की है। बर्तन में रखे अवशेष (बौद्ध परंपरा के अनुसार) भी हड़प्पा संस्कृति की ही है। अतः मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के स्तूपों को मौर्य कालीन या मौर्योतर कालीन बताया जाना काल्पनिक निष्कर्ष है।



(स्तूप संग स्नानागार)

43. बिहार स्थित नालंदा के जगदीशपुर गाँव में जिसे लोग रुक्मिणी-स्थान कहते थे, वह बौद्ध-स्थल है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के उत्खनन से यह स्पष्ट हुआ है।

पहली तस्वीर गौतम बुद्ध की मूर्ति की है। दूसरी तस्वीर गौतम बुद्ध की मूर्ति के नीचे बने एक दृश्य का है। भ्रम इसी दृश्य को लेकर हुआ। इस दृश्य में गौतम बुद्ध के जन्म के समय उनकी माता पर हुए मार आक्रमण का चित्रण है। लोगों ने भ्रमवश इस चित्रण को रुक्मिणी के अपहरण से जोड़ लिया।

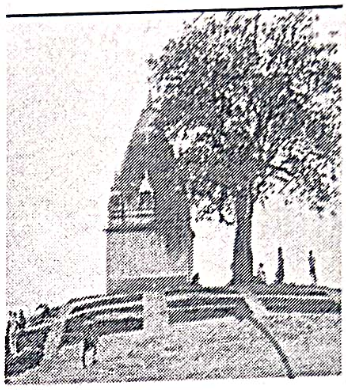
बस क्या था? इसे रुक्मिणी देवी मानकर आज से 60 साल पहले लोगों ने मंदिर बना दिया और रुक्मिणी देवी की पूजा करने लगे। तीसरी तस्वीर उसी मंदिर की है। (साभारः दैनिक भास्कर 26 सितंबर, 2015)



(बुद्ध की मूर्ति)

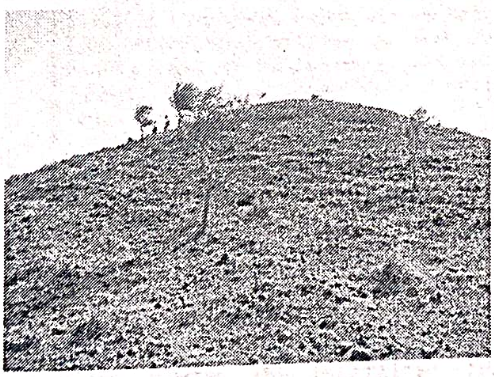


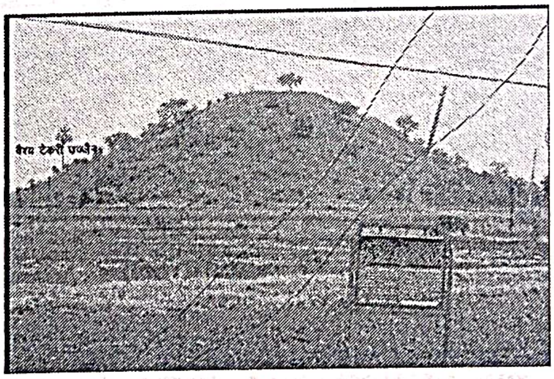
(मूर्ति के नीचे दृश्यांकन)



(मंदिर)

44. उज्जैन से 5 किमी दूर ग्राम उंडासा में स्थित 100 फीट ऊँचा और 350 फीट व्यास के मौजूद वैश्य टेकरी के स्तूप की व्यवस्थित खुदाई कराए सरकार। पुरातात्विकों का दावा, मिल सकता है विश्व धरोहर का खजाना !!!





(वैश्य टेकरी स्तूप)

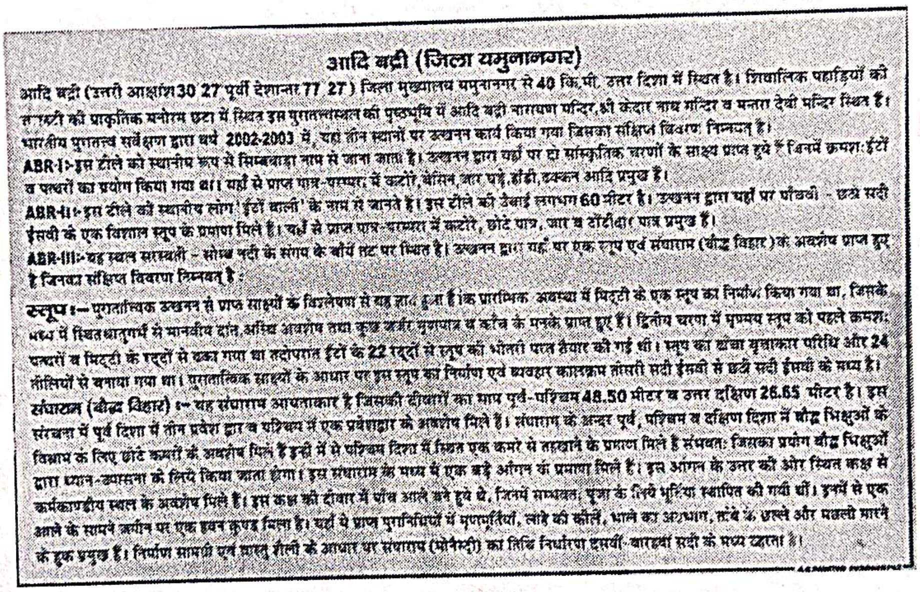
45. हरियाणा के यमुनानगर जिले की शिवालिक पहाड़ियों की तलहटी में आदि बद्री क्षेत्र है। अनुमानकारों ने अनुमान किया कि वेदों में वर्णित सरस्वती नदी का उत्पत्ति स्थान यही आदि बद्री है।

सरस्वती नदी के उत्पत्ति स्थान की खोज में खुदाई आरंभ हुई। तीन जगहों की खुदाई हुई-एबीआर-1, एबीआर-2, और एबीआर-3। तीनों जगह

पर बौद्ध सभ्यता के विराट सबूत मिले-विशाल बौद्ध महाविहार, बौद्ध स्तूप, बुद्ध की मूर्ति, दाँतों का सेट, हड्डियाँ

आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इंडिया के डॉ. संजय कुमार मंजू ने बताया कि आदि बद्री मूलतः बौद्ध क्षेत्र है। पूरा क्षेत्र एक वर्ग किलोमीटर का है, जिसमें अनेक छोटे-बड़े बौद्ध स्तूप मौजूद हैं। जब सरस्वती नदी की खोज में विस्तृत बौद्ध क्षेत्र मिलने लगा, तब खुदाई बंद कर दी गई बगैर इस बात पर विचार किए कि आदि बद्री कौन था?

आप भी पढ़िए कि सरस्वती नदी के उत्पत्ति स्थान की खुदाई में क्या मिला?



आदि बद्री (जिला यमुनानगर)

आदि बद्री (उत्तरी आक्षांश 30 27 पूर्वी देशान्तर 77 27) जिला मुख्यालय यमुनानगर से 40 कि.मी. उत्तर दिशा में स्थित है। शिवालिक पहाड़ियों की तलहटी की प्राकृतिक मनोरम छटा में स्थित इस पुरातत्त्वस्थल की पृष्ठभूमि में आदि बद्री नारायण मन्दिर, श्री केदार नाथ मन्दिर व मन्तरा देवी मन्दिर स्थित हैं। भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण द्वारा वर्ष 2002-2003 में, यहां तीन स्थानों पर उत्खनन कार्य किया गया जिसका संक्षिप्त विवरण निम्नवत् है।

ABR-I:- इस टीले को स्थानीय रूप में सिम्बवाड़ा नाम से जाना जाता है। उत्खनन द्वारा यहाँ पर दो सांस्कृतिक चरणों के साक्ष्य प्राप्त हुये हैं जिनमें क्रमशः ईंटों व पत्थरों का प्रयोग किया गया था। यहाँ से प्राप्त पात्र-परम्परा में कटोरे, बेसिन, जार घड़े, हाँडी, ढक्कन आदि प्रमुख हैं।

ABR-II:- इस टीले को स्थानीय लोग 'ईंटों वाली' के नाम से जानते हैं। इस टीले की ऊंचाई लगभग 60 मीटर है। उत्खनन द्वारा यहाँ पर पाँचवीं - छठी सदी ईसवी के एक विशाल स्तूप के प्रमाण मिले हैं। यहाँ से प्राप्त पात्र-परम्परा में कटोरे, छोटे पात्र, जार व टोंटीदार पात्र प्रमुख हैं।

ABR-III:- यह स्थल सरस्वती - सोम्ब नदी के संगम के बाँयें तट पर स्थित है। उत्खनन द्वारा यहाँ पर एक स्तूप एवं संघाराम (बौद्ध विहार) के अवशेष प्राप्त हुए हैं जिनका संक्षिप्त विवरण निम्नवत् है :

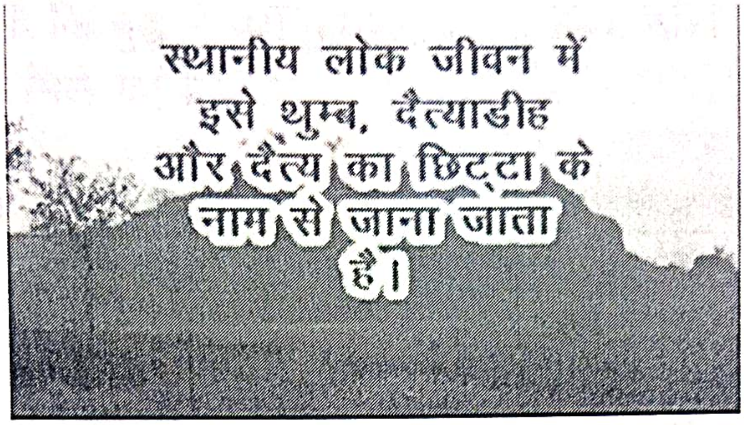
स्तूप :– पुरातात्त्विक उत्खनन से प्राप्त साक्ष्यों के विश्लेषण से यह ज्ञात हुआ है कि प्रारम्भिक अवस्था में मिट्टी के एक स्तूप का निर्माण किया गया था, जिसके मध्य में स्थित धातुगर्भ से मानवीय दांत, अस्थि अवशेष तथा कुछ जर्जर मृणपात्र व काँच के मनके प्राप्त हुए हैं। द्वितीय चरण में मृण्मय स्तूप को पहले क्रमशः पत्थरों व मिट्टी के रद्दों से ढका गया था तदोपरान्त ईंटों के 22 रद्दों से स्तूप की भीतरी परत तैयार की गई थी। स्तूप का ढांचा वृत्ताकार परिधि और 24 तीलियों से बनाया गया था। पुरातात्त्विक साक्ष्यों के आधार पर इस स्तूप का निर्माण एवं व्यवहार कालक्रम तीसरी सदी ईसवी से छठी सदी ईसवी के मध्य है।

संघाराम (बौद्ध विहार) :– यह संघाराम आयताकार है जिसकी दीवारों का माप पूर्व-पश्चिम 48.50 मीटर व उत्तर दक्षिण 26.65 मीटर है। इस संरचना में पूर्व दिशा में तीन प्रवेश द्वार व पश्चिम में एक प्रवेशद्वार के अवशेष मिले हैं। संघाराम के अन्दर पूर्व, पश्चिम व दक्षिण दिशा में बौद्ध भिक्षुओं के विश्राम के लिए छोटे कमरों के अवशेष मिले हैं इन्हीं में से पश्चिम दिशा में स्थित एक कमरे से तहखाने के प्रमाण मिले हैं संभवतः जिसका प्रयोग बौद्ध भिक्षुओं द्वारा ध्यान-उपासना के लिये किया जाता होगा। इस संघाराम के मध्य में एक बड़े आँगन के प्रमाण मिले हैं। इस आंगन के उत्तर की ओर स्थित कक्ष से कर्मकाण्डीय स्थल के अवशेष मिले हैं। इस कक्ष की दीवार में पाँच आले बने हुये थे, जिनमें सम्भवतः पूजा के लिये मूर्तियां स्थापित की गयी थीं। इनमें से एक आले के सामने जमीन पर एक हवन कुण्ड मिला है। यहाँ से प्राप्त पुरानिधियों में मृणमूर्तियाँ, लोहे की कीलें, भाले का अग्रभाग, तांबे के छल्ले और मछली मारने के हुक प्रमुख हैं। निर्माण सामग्री एवं वास्तु शैली के आधार पर संघाराम (मोनेस्ट्री) का तिथि निर्धारण दसवीं-बारहवीं सदी के मध्य ठहरता है।

[illegible]

46. हरसाईंन स्तूप बिहार के जिला बेगूसराय के प्रखंड गढ़पुरा के हरसाईंन गाँव में स्थित है। इसे स्थानीय भाषा में दैत्याडीह या दैत्य का छिट्टा कहा जाता है। दैत्याडीह अर्थात राक्षस का निवास स्थान और दैत्य का छिट्टा अर्थात राक्षस का बाँस की बनी टोकरी जो औंधने पर स्तूपाकार हो जाती है।

भारत में एक धारा थी जिसमें गौतम बुद्ध को दैत्य, राक्षस, भूत आदि कहा जाता था।



(हरसाईन स्तूप)

बौद्ध अभिलेखों का परिप्रेक्ष्य

47. वर्धा से जयंत कांबले ने अपनी यात्रा के दौरान यह तस्वीर साँची स्तूप के एक स्तंभ से ली है और पढ़ने के लिए भेजी है।

अभिलेख दो पंक्तियों में है, ऊपर लिखा है—वट्टिगुतस और नीचे लिखा है—दान। अभिलेख का पूरा अर्थ हुआ-वट्टिगुत का दान।

आज से कोई सवा दो हजार साल पहले एक पिता ने अपने पुत्र का कितना सुंदर नाम रखा है—वट्टिगुत! वट्टिगुत अर्थात दीपक द्वारा संरक्षित। वट्टि का अर्थ दीपक और गुत का अर्थ संरक्षित।

आज से सवा दो हजार साल पहले लोगों के नाम ऐसे हुआ करते थे। मुझे कई ऐतिहासिक संधियुक्त तत्सम नाम गलत लगते हैं।



(साँची स्तूप के स्तंभ पर अउिभलेख)

48. बुद्ध के वचनों का सर्वाधिक प्रामाणिक संकलन सम्राट अशोक ने अपने अभिलेखों में कराया है, जिनमें वेद शब्द सिरे से गायब है। इसीलिए

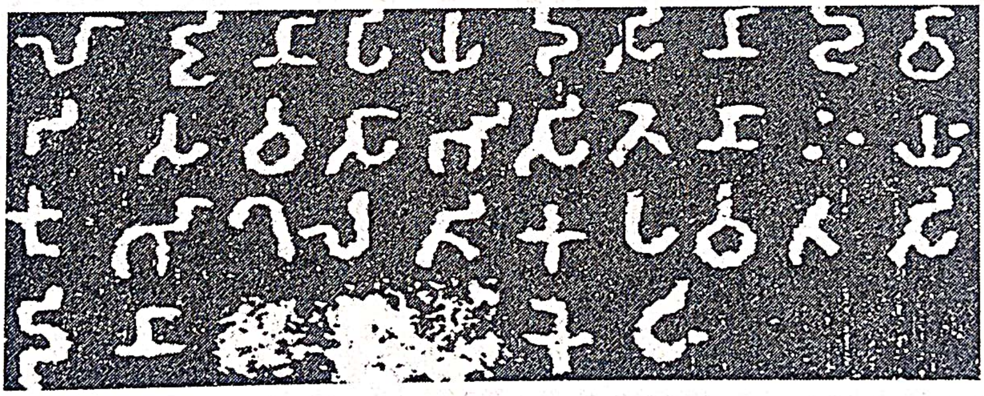
मेरा मानना है कि बुद्ध ने वेदों का विरोध नहीं किया बल्कि वेद ही बुद्ध के विरोध में लिखे गए हैं।

49. नीचे की तस्वीर अशोक के बराबर के गुफालेख की है जिसमें लिखा है कि 12 वें वर्ष में राजा प्रियदर्शी ने खलतिक पर्वत पर यह गुफा आजीविकों को प्रदान की है।

आप देख सकते हैं कि इस गुफालेख के सभी शब्द सुरक्षित हैं। सिर्फ एक शब्द को मिटाने की कोशिश है और वह शब्द है—"आजीविक"।

सिर्फ आजीविक शब्द को मिटा देने से और उसकी जगह किसी दूसरे संप्रदाय का नाम डाल देने से यह गुफा उसी संप्रदाय की हो जाती। बाकी शब्दों में छेड़छाड़ की जरूरत ही नहीं है।

कोई पढ़ रहा था और पढ़कर उसने सही जगह पर हाथ डाला था, मगर सफलता हाथ नही लगी।



(बराबर का गुफा लेख)

50. माँ की गोद में बुद्ध ही हैं।

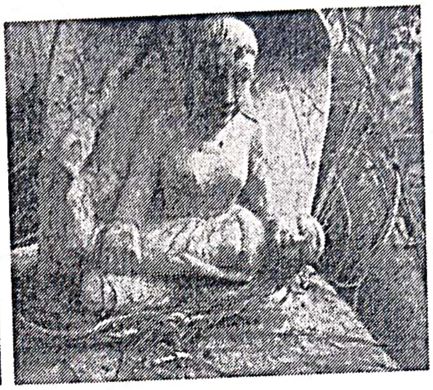
पहली मूर्ति को देखिए। मूर्ति के ठीक नीचे धम्म चक्र है। उसके दोनों ओर दो हिरण हैं। यह बुद्ध की मूर्ति की पहचान है। यह मूर्ति सेनुआरियन सभ्यता की है।

अब दूसरी बुद्ध की मूर्ति को देखिए। दोनों बुद्ध की मूर्ति की दाहिनी तरफ की लिखावट देखिए। ये दोनों मिलती-जुलती लिखावट हैं, जिसे पढ़ा

नहीं जा सका है। मेरा अनुमान है कि ये बिहार की किसी आदिवासी भाषा की लिपि है।



(सेनुआरियन सन्यता की बुद्ध मूर्ति)



(माँ की गोद में बुद्ध)

51. सम्राट अशोक के सिर्फ एक पुत्र का पुरातात्विक सबूत मिलता है। उस पुत्र का नाम तीवर था। उसके बाकी किसी भी पुत्र का नाम शिलालेखों में नहीं मिलता है। तीवर का नाम अपनी माँ के नाम के साथ इलाहाबाद के स्तंभलेख पर खुदा हुआ है। तस्वीर उसी स्तंभ लेख की है। तीवर संभवतः अशोक का तीसरा पुत्र था। इसीलिए उसका नाम तीवर था। जो भी हो, यह तो तय है कि एक पिता ने अपने पुत्र का नाम अच्छा-सा रखा होगा। मगर संस्कृत में तीवर का अर्थ वर्णसंकर पुत्र होता है। शायद इस अर्थ में सम्राट अशोक ने अपने पुत्र का नाम नहीं रखा होगा। ये संस्कृत वालों ने तीवर का अर्थ बिगाड़ दिया है।

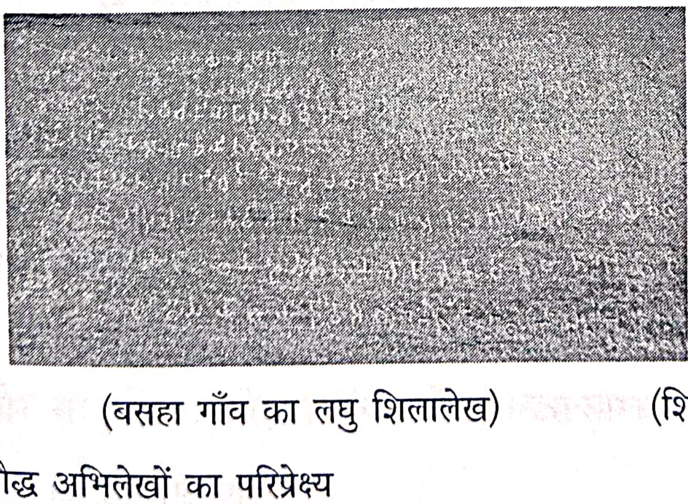


(इलाहाबाद का स्तंभ)

52. अभी तक बिहार में सम्राट अशोक के सासाराम स्थित एक ही लघु शिलालेख का जिक्र इतिहास में होता आया है, अब नए शोध से कम से कम दो दर्ज होंगे। अशोक का यह दूसरा लघु शिलालेख कैमूर जिले के चाँद प्रखंड में बसहा गाँव के पास कैमूर की पहाड़ी पर अवस्थित है। जिस क्षेत्र में यह अभिलेख है, उसे मठ मोरिया अर्थात मोरिय राजा का विश्राम-स्थल कहा जाता है।

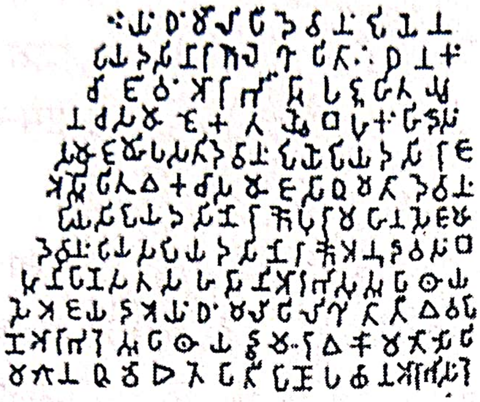
जैसा कि अभिलेख से ज्ञात है कि सम्राट अशोक ने जनता की तकलीफों को जानने के लिए कुल 256 रातें राजमहल के बाहर क्षेत्र में गुजारी थीं, जिसमें से वे एक रात इसी मठ मोरिया में रूके थे। शिलालेख के ठीक बगल में एक शैल-मठ भी है, जिसमें एक रास्ता शिलालेख से सटे हुए जाता है और दूसरा रास्ता पहाड़ी की चोटी से आता है। शैल-मठ अवलेपित है। ऐसा इसलिए कि दीवार पर साँप-बिच्छू को चढ़ने से यह अवरोधित करे।

अभिलेख प्राकृत भाषा और धम्म लिपि (ब्राह्मी लिपि) में है। शिलालेख के ऊपर प्राकृतिक शैल-छज्जा है, जो उसकी धूप और वर्षा से रक्षा करता है। सामने एक बड़ा-सा प्राकृतिक पत्थरों का प्लेटफार्म है, जहाँ बीसेक लोग आराम से उठ-बैठ सकते हैं। अभिलेख के लेखन में भी किसी लेप का प्रयोग जान पड़ता है, जिससे उसकी चमक बनी हुई है। अभिलेख में कुल मिलाकर 9 पंक्तियाँ हैं और इसके अक्षरों की लिखावट लगभग समरूप है। अभिलेख मुख्य रूप से समाज के छोटे और बड़े दोनों तबकों के लिए अवसर की समानता की घोषणा करता है।


(बसहा गाँव का लघु शिलालेख)


(शिलालेख का हिंदी अनुवाद)

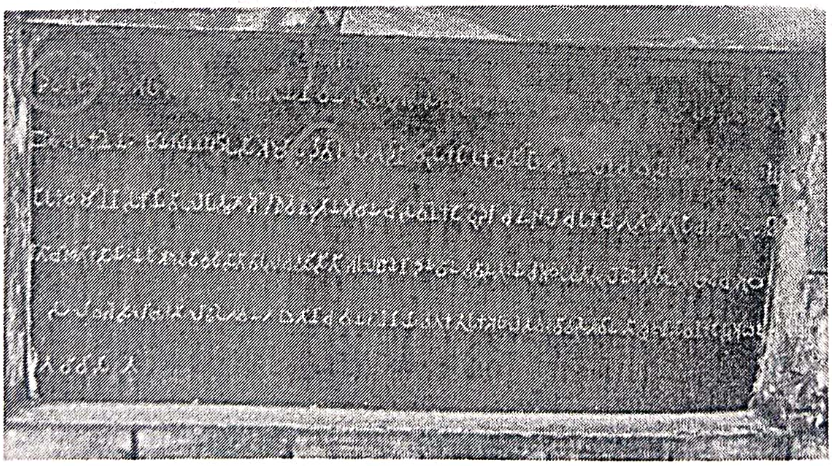
53. सम्राट अशोक के गिरनार के प्रथम शिलालेख की बेहद खूबसूरत पेंटिंग। रंगसाज को बधाई!!!





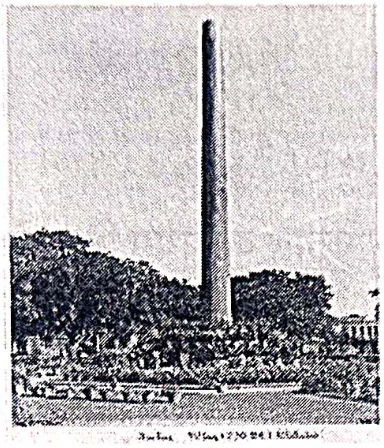
54. पढ़ लीजिए, ये अशोक के रूपनाथ का लघु शिलालेख है। इसमें देवानंपिय और स्वतंत्र रूप से देवा भी लिखा है। देवा लिखा हुआ घेरे में है। कहीं भी देव नहीं लिखा है।

देव का अर्थ देवता होता है। देवा का अर्थ देवता थोड़े न होता है? देव कहीं लिखा ही नहीं है तो आप देवता अर्थ कैसे करते हैं? अशोक के अभिलेखों में हर जगह देवा ही लिखा है और देवा का अर्थ बुद्ध/अर्हत होता है। इसलिए देवानंपिय का अर्थ देवताओं का प्रिय राजा तो गलत है ही, अन्य जगहों पर भी जहाँ स्वतंत्र रूप से देवा आया है, वहाँ भी उसका अर्थ बुद्ध/अर्हत ही होगा। देव/देवता से अशोक के अभिलेखों का कोई लेना-देना नहीं है।

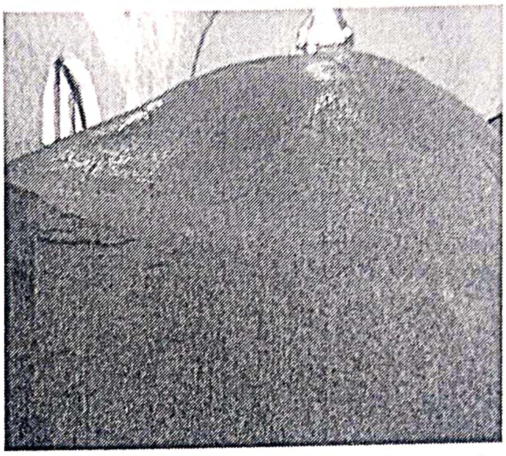


(रूपनाथ का लघु शिलालेख)

55. अशोक के शिलालेखों पर संस्कृत के अभिलेख लिखवाए गए हैं, मगर संस्कृत के अभिलेखों पर अशोक के शिलालेख क्यों नहीं लिखवाए गए हैं?



(प्रयाग-प्रशस्ति)



(अशोक के गिरनार शिलालेख)

56. पेशवा तो फारसी का शब्द है ही। ये फड़नवीस और बाजीराव का बाजी भी फारसी के ही शब्द हैं। अब पेशवाओं के अरबी-फारसी सिक्कों को गौर से देखिए। इन्हीं लोगों ने भारत में हिंदू पद पादशाही की मुहीम चलाई थी और हिंदू पद पादशाही के नाम पर दलितों पर अत्याचार हुए। आश्चर्य कि पादशाही भी खुद फारसी की ही शब्दावली है!





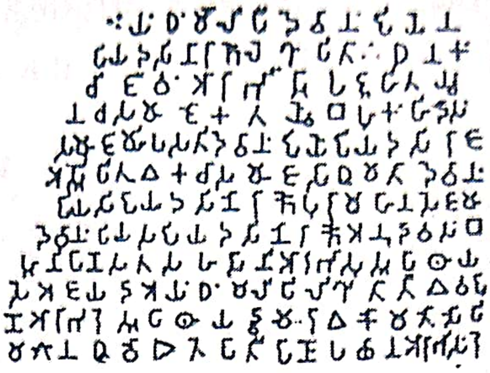
पेशवाकालीन सिक्के

57. सम्राट अशोक के जिस शिलालेख को पढ़कर इतिहासकारों ने यज्ञ और हवन में पशु-वध किए जाने का तूफान खड़ा किया है, वह उनका प्रथम शिलालेख है, जिसमें कहीं भी यज्ञ और हवन का उल्लेख नहीं है।

इसलिए अशोक के शिलालेखों की मनमानी व्याख्या कर वैदिक यज्ञ और संस्कृति से जोड़ना बंद करें इतिहासकार!!!

लिप्यंतर

1. इयं धंमलिपि देवानंप्रियेन
2. प्रियदसिना राजा लेखापिता [।] इध न किं
3. चि जीवं आरभित्पा प्रजूहितव्यं [।]
4. न च समाजो कतव्यो [।] बहुकं हि दोसं
5. समाजम्हि पसति देवानंप्रियो प्रियदसि राजा [।]
6. अस्ति पि तु एकचा समाजा साधुमता देवानं
7. प्रियस प्रियदसिनो राञो [।] पुरा महानसम्हि
8. देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो अनुदिवसं ब
9. हूनि प्राणसतसहस्रानि आरभिसु सूपाथाय [।]
10. से अज यदा अयं धंमलिपि लिखिता ती एव प्रा
11. णा आरभरे सूपाथाय द्वो मोरा एको मगो सो पि
12. मगो न ध्रुवो [।] एते पि त्री प्राणा पछा न आरभिसरे [।।]



अशोक का गिरनार का प्रथम शिलालेख

58. गौतम बुद्ध का नाम सिद्धार्थ नहीं था।

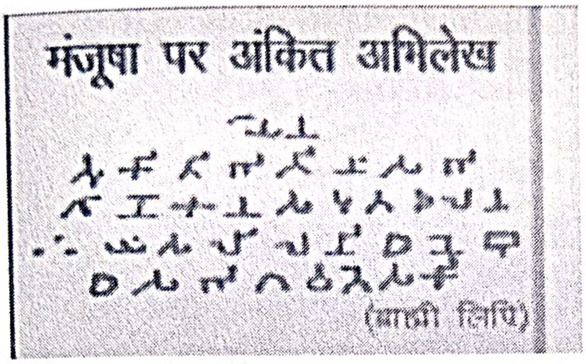
इतिहासकार डी. डी. कोसंबी ने लिखा है कि गौतम बुद्ध का नाम सिद्धार्थ नहीं था। यह नाम बाद में उनके अनुयायियों ने जोड़ दिया है। ऐसे भी सिद्धार्थ का पूरा ध्वनिशास्त्र संस्कृत का है। इसलिए गौतम बुद्ध का वास्तविक नाम सिद्धार्थ संभव नहीं है।

गौतम बुद्ध का वास्तविक नाम सुकिति जान पड़ता है। इसलिए कि उनके निर्वाण के फौरन बाद कपिलवस्तु के शाक्य भाई-बहनों ने उनके भस्मावशेष पर स्तूप का निर्माण कराया था। वह स्तूप आज भी पिपरहवा स्तूप के नाम से असली कपिलवस्तु में मौजूद है।

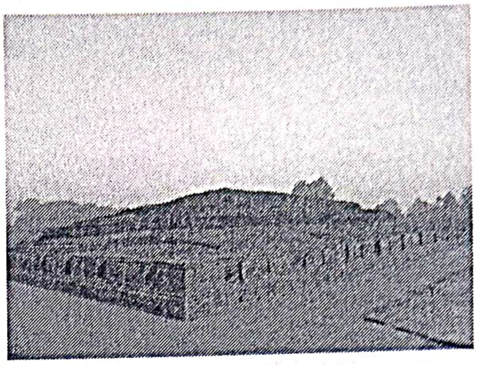
पिपरहवा स्तूप के अस्थि-कलश की गर्दन पर एक अभिलेख लिखा है। यह कलश पत्थर का है। अभिलेख की लिपि ब्राह्मी और भाषा प्राकृत है।

अभिलेख पर लिखा है कि सुकिति भतिनं स भगिनिकन स पुतदलन इयं सलिल निधाने बुधस भगवते सकियन। इसका हिंदी में अर्थ हुआ कि सुकिति (गौतम बुद्ध) के शाक्य भाइयों, बहनों, पुत्रों आदि ने भगवत बुद्ध का यह शरीर-निधान (स्तूप) बनवाया। यह स्वाभाविक है कि गाँव-घर के भाई-कुटुंब को भगवत बुद्ध को उनके वास्तविक नाम कहने और लिखने का अधिकार है।

प्रथम तस्वीर पिपरहवा स्तूप की और दूसरी तस्वीर कलश अभिलेख की है।



(कलश अभिलेख का टेक्स्ट)

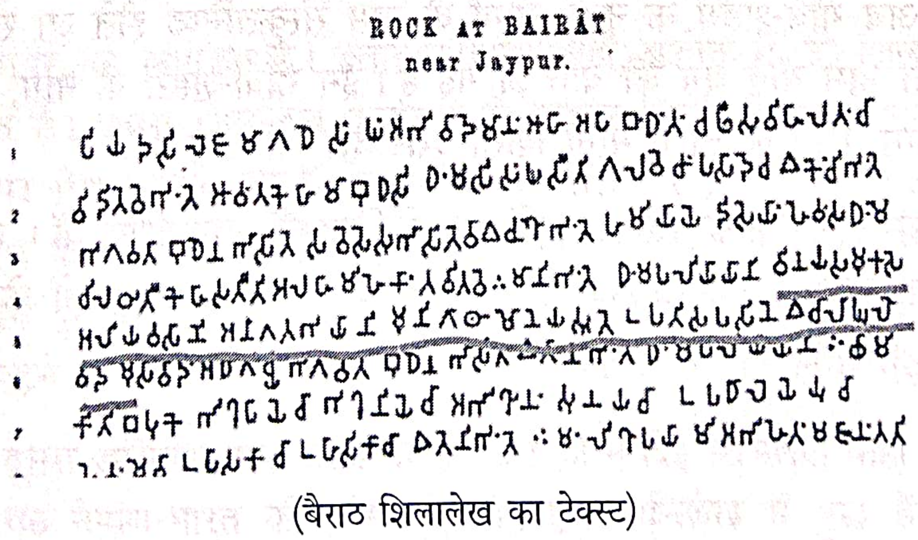


(पिपरहवा स्तूप)

59. मौखिक रूप से कोई चाहे जितनी भी डींग हाँक ले, पुरातात्विक दृष्टिकोण से भारत की सबसे प्राचीन किताबें बौद्धसाहित्य की हैं, यह मानना होगा। कारण, कि इसके सबूत पत्थरों पर लिखित हैं। अशोक के कलकत्ता-बैराठ शिलालेख पर सात किताबों का नाम लिखा है, वे हैं—विनयसमुकस, अलियवसाणि, अनागतभयानि, मुनिगाथा, मोनेयसूते, उपतिसपसिने और लाघुलोवादे। ये सातों किताबें बौद्ध साहित्य की हैं। अभी तक जितनी किताबों को सबसे प्राचीन होने का दावा किया गया है, उसके सबसे अधिक प्राचीन होने के पुरातात्विक सबूत नहीं मिले हैं।

यह शिलालेख पहले राजस्थान के बैराठ में था, लेकिन अब इंडियन म्यूजियम, कलकत्ता में है।

सातों किताबों के नाम को रेखांकित कर दिया गया है। आप भी पढ़ सकते हैं।



(बैराठ शिलालेख का टेक्स्ट)

60. साँची स्तूप की खोज के दो सौ साल...1818 में आज से ठीक दो सौ साल पहले जनरल टेलर ने इसे खोजा था।

साँची स्तूप के निर्माण में कई राजवंशों, देश के कई गाँव, शहर के लोगों, उनके संबंधियों, विभिन्न पेशों से जुड़े दानदाताओं आदि ने योगदान किया है।

स्तूप की वेदिकाओं, स्तंभों पर अनेक गाँव, शहरों के नाम और दानदाताओं के नाम ब्राह्मी लिपि में लिखे हुए हैं।

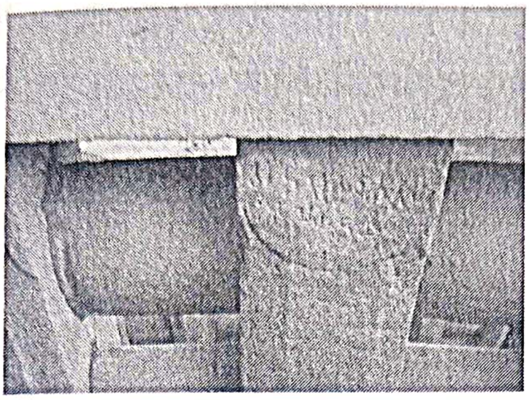
भारत के गाँवों, शहरों और लोगों के नाम जो लिखे हुए हैं, उसे पढ़कर सहसा विश्वास ही नहीं होता है कि हमारे पूर्वज-पुरखे कभी अपना नाम, अपने गाँव का नाम प्राकृत भाषा में ऐसे रखा करते थे।

अब देखिए ना, कुछेक गाँवों-शहरों के नाम...पहले तो साँची का नाम ही काकनादबोट था, फिर अनेक गाँव, शहरों के नाम अंकित हैं...उजेन, कुरारा, भोगावाधान, कम्दगीगम, कुर्घरा आदि आदि!

तब लोगों के नाम भी प्राकृत भाषा में हुआ करते थे...आप नीचे का अभिलेख पढ़िए...ये साँची स्तूप के दानदाता हैं...इनका नाम है—मिदतु! ऐसे अनेक लोगों का नाम वहाँ के अभिलेखों में दर्ज हैं—केकट, धमासिव, वहना, वजिगुत, कादक्ष, वाकला, नगादिन, अयपसनक, काबोज, विसकम, धमरिवत आदि!

अब गाँव-शहरों के नाम, लोगों के नाम संस्कृतनिष्ठ होते जा रहे हैं। प्राकृत नाम बीते युग की बात हो गई है। इन गाँवों-शहरों के नाम, लोगों के नाम, ऐसा लगता है मानो किसी दूसरे देश का नाम हों।

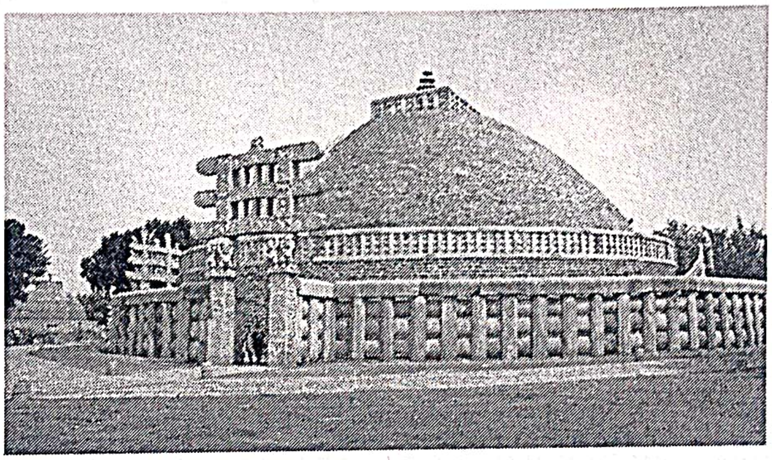
ये नाम लिखित हैं...पत्थरों पर लिखित हैं...प्रामाणिक हैं। हमारी भाषाई संस्कृति कितनी बदल गई है कि हम आज अपने पूर्वजों के नाम और गाँव भी नहीं पहचान पा रहे हैं!



(साँची का अभिलेख)



(अभिलेख)



(साँची का स्तूप)

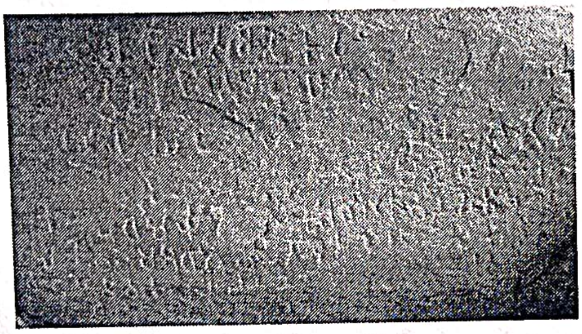
61. सम्राट अशोक विरोधी खेमे से यह अफवाह उठती रही है कि अशोक के शिलालेखों पर न तो अशोक का नाम अंकित है और न बुद्ध का।

मगर यह अफवाह है। बतौर उदाहरण यहाँ अशोक के दो शिलालेख प्रस्तुत हैं। पहला शिलालेख कर्नाटक के रायचूर जिले की मस्की नदी के तट पर स्थित नगर मास्की का मास्की शिलालेख है। इस शिलालेख पर अशोक का नाम अंकित है। आपको अशोक को लेकर कोई कंफ्यूजन न हो, इसे दूर करने के लिए अशोक के नाम से पहले "देवानंपिय" लिखा हुआ है। पढ़ने के लिए तस्वीर में "असोक" नाम को घेरे में कर दिया गया है।

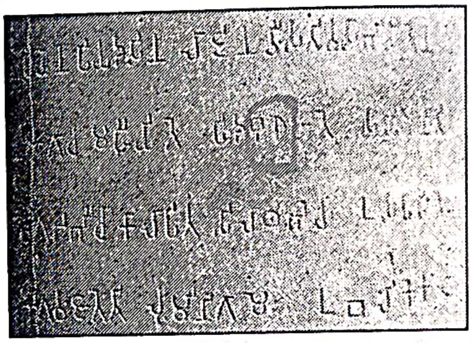
दूसरा अभिलेख एक स्तंभ पर है। इसे रुम्मिनदेई स्तंभलेख कहा जाता है। यह नेपाल-भारत की सीमा पर है। इस अभिलेख में बुद्ध हैं और

आपको बुद्ध को लेकर कोई कंफ्यूजन न हो, इसके लिए बुद्ध के आगे शाक्यमुनी लिखा हुआ है। पढ़ने के लिए तस्वीर में "बुध" नाम को घेरे में कर दिया गया है।

सम्राट अशोक काबिल थे। वे जानते थे कि शिलालेखों की गलत व्याख्या हो सकती है। शायद इसीलिए अशोक से पहले देवानंपिय और बुद्ध के बाद शाक्यमुनी जुड़ा हुआ है ताकि आनेवाली पीढ़ी कोई इस तरह की अफवाह न उठाए।

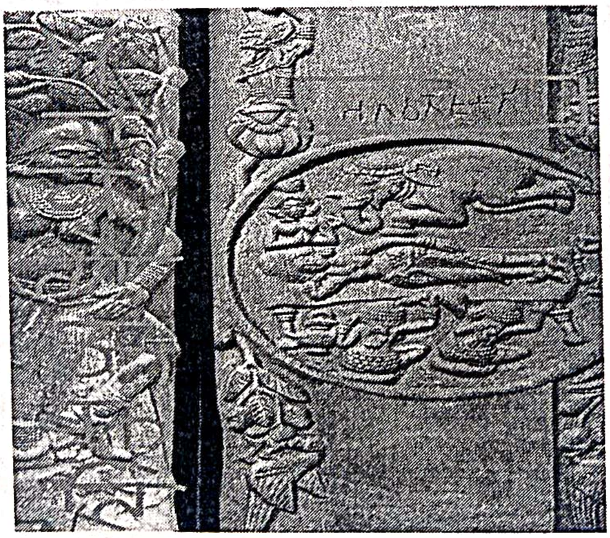


(मास्की शिलालेख)



(रुम्मिनदेई स्तंभलेख)

62. भरहुत स्तूप की पूरी तस्वीर हर्षल धनविजय के सौजन्य से आ चुकी है। लिखा है-भगवतो ऊक्रति। अर्थात भगवत (गौतम) का ऊपर से आकर गर्भ-स्थापन।



(भरहुत स्तूप का लेख)

63. एक धम्म-यात्रा सम्राट अशोक ने कैमूर पहाड़ी के उस रास्ते से की थी, जिस रास्ते से चलकर गौतम बुद्ध बौद्ध गया से सारनाथ पहुँचे थे। अभी तक सम्राट अशोक के इस रास्ते पर रात्रि-विश्राम के बतौर सबूत तीन अभिलेखों से तीन ठहरावों का पता चल चुका हैः—सहसराम, मठ मोरिया और अहरौरा। जाहिर है कि अशोक को इस धम्म यात्रा में दसियों दिन लगे होंगे। इसलिए अभी कैमूर पहाड़ी के इस रास्ते पर दसियों अभिलेख खोजा जाना बाकी है।



कैमूर की तलहटी होकर सारनाथ पहुंचे थे बुद्ध!

खुलासा

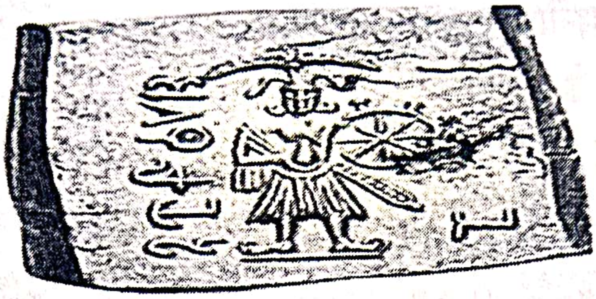
64. सुदर्शन चक्र की पोल खोलता एक सिक्का!!

एक यवन राजा था। उसका नाम अगाथोक्लिस था। वह तक्षशिला क्षेत्र में शासन करता था। उसका शासन-काल 190-180 ई. पू. में था। उसने वासुदेव कृष्ण के सिक्के चलाए।

आप सिक्के को गौर से देखिए। सिक्के पर वासुदेव कृष्ण की तस्वीर है। वासुदेव कृष्ण के हाथों में धम्म चक्र है। धम्म चक्र में आठ आरे हैं।

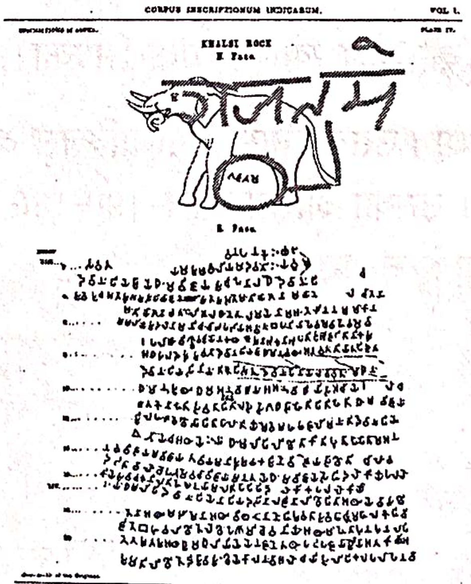
आप निष्कर्ष दे सकते हैं कि वासुदेव कृष्ण के हाथों में जो सुदर्शन चक्र है, वह धम्म चक्र है। मतलब कि सुदर्शन चक्र वास्तव में धम्म चक्र का रूपांतरण है।

ऐसे भी सुदर्शन चक्र का मतलब हुआ—सु+दर्शन चक्र अर्थात अच्छे दर्शन का चक्र। जाहिर है कि वह अच्छे दर्शन का चक्र तो धम्म चक्र ही है।



Vāsudeva-Krishna on a coin of Agathocles of Bactria, circa 180 BCE.[1]

65. भारत में हाथियों के संरक्षण के लिए 1992 में “गजतमे” नाम से एक परियोजना की शुरुआत की गई थी। वह सम्राट अशोक के कालसी शिलालेख का हाथी है, जिसके नीचे ब्राह्मी लिपि में “गजतमे” लिखा हुआ है। यह पशुओं के नीचे नाम लिखे जाने का भारत में संभवतः प्रथम उदाहरण है।



(कालसी शिलालेख)

66. मध्यप्रदेश के सीहोर जिले में पानगुरारिया बौद्ध विहार है। पानगुरारिया में अशोक के दो शिलालेख और एक यष्टि लेख मौजूद है। सभी की भाषा प्राकृत और लिपि ब्राह्मी है।

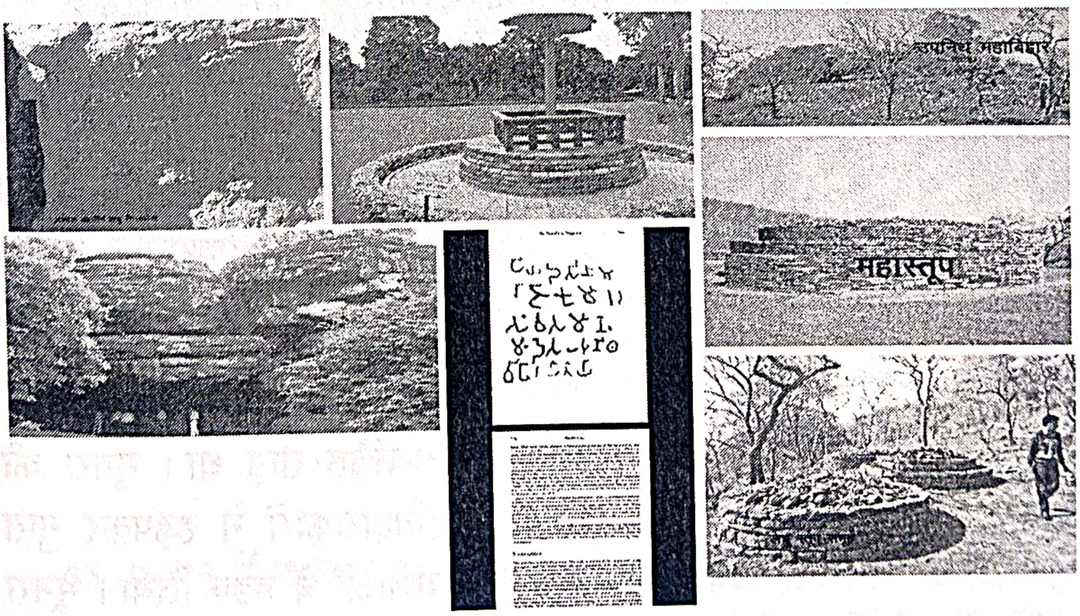
पहली तस्वीर अशोक के शिलालेख की है और दूसरी यष्टि लेख की। यष्टि लेख पर अशोक की बेटी संघमित्रा द्वारा दान दिए जाने का विवरण अंकित है, जिससे संघमित्रा की पुरातात्विक ऐतिहासिकता पुष्ट होती है।

अशोक के शिलालेख पर एक जो प्रमुख बात लिखी है, वह यह कि राजा ने, जो पियदसि नाम से जाने जाते थे, एक बार उपुनीथ विहार की तब यात्रा की, जब कुमार सम्व को मानेम देश की प्रशासनिक जिम्मेवारी थी।

कुमार सम्व संभवतः अशोक के परिवार के जान पड़ते हैं और मानेम देश सीहोर का इलाका रहा होगा।

आसपास में कई शैलाश्रय हैं। शैलाश्रय बौद्ध भिक्षुओं के आवास और साधना स्थल थे। स्थानीय भाषा में इसे सारू-मारू की कोठरी बोलते हैं। इसके आसपास छोटे-छोटे कई स्तूप हैं और एक बड़ा स्तूप भी है। आप चित्र में स्तूपों को देख सकते हैं।

अंतिम तस्वीर अशोक के शिलालेख का लिपि-रेखांकन है, जिसमें लिखा है—"पियदसिनामराजा कुमार सम्व मानेम देसे उपुनीथ विहार यातायां"।



(पानगुरारिया की तस्वीरें)

67. मध्यप्रदेश के सतना जिला के अंतर्गत नागौद तहसील में दुरेहा गाँव है। दुरेहा में एक स्मृति-स्तंभ को पहली बार कनिंघम ने देखा और अपनी रिपोर्ट खंड 21, पृ.99, प्लेट 27 में वर्णन किया। 1932 की सर्दियों में काशीप्रसाद जायसवाल वहाँ गए और लिखा कि दुरेहा एक अच्छा बसा हुआ और रौनकदार गाँव है। स्मृति-स्तंभ गाँव की कच्ची सड़क के किनारे एक चबूतरे के ऊपर है।

स्मृति-स्तंभ पर एक पंक्ति का अभिलेख है। अभिलेख की आँख से देखकर की हुई नकल की तस्वीर नीचे दी गई है। अभिलेख में "वाकाटकों का चक्र" लिखा हुआ है। अभिलेख के नीचे आठ आरे का धम्म चक्र है। यही धम्म चक्र वाकाटकों का राजचिह्न था। यह धम्म चक्र वैसा ही है, जैसा कि वाकाटक नरेश रुद्रषेण के सिक्कों पर है। यही धम्म चक्र पुनः वाकाटक नरेश पृथ्वीषेण के गंज और नचना वाले अभिलेखों में है। पूरा वाकाटक राज घराना बौद्ध था और उनका राजचिह्न धम्म चक्र था।

ये वही वाकाटक राज घराना के राजे थे, जिन्होंने अजंता में अनेक बौद्ध गुफाएँ बनवाई थीं और बौद्ध धर्म से संबंधित चित्रण और शिल्पकारी की मिसाल पेश की थी।

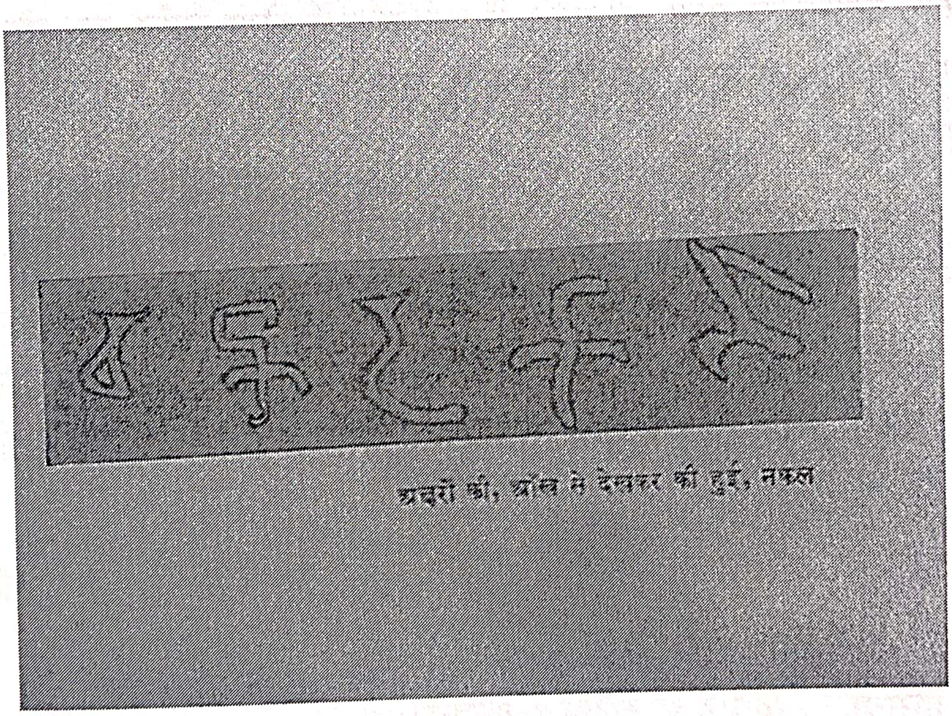
इतिहासकारों ने वाकाटक नरेश प्रवरषेण को पुराणों में वर्णित प्रवीर से झूठा तालमेल बैठाकर बता दिया है कि वाकाटक राजा ब्राह्मण थे और बड़े-बड़े अश्वमेध और बाजपेय यज्ञ रचाए थे। जबकि इतिहास गवाह है कि प्रवरषेण के पुत्र गौतमीपुत्र की शादी नाग शासक भवनाग की बेटी से हुई थी, जिससे उत्पन्न संतान वाकाटक नरेश रुद्रषेण थे। जब वाकाटक राजे ब्राह्मण थे तो नागों से ये कैसा रिश्ता था?

खुद नाग राजे भी बौद्ध थे, जिनका राजचिह्न ताड़ था। भूमरा की इमारत मूल रूप से नागों की थी, जिसे इतिहासकारों ने हड़पकर गुप्त राजाओं के नाम कर दिया है या खुद गुप्त राजाओं ने हड़प लिया। भूमरा मंदिर के पूरे खंभे ताड़ के वृक्षों के रूप में गढ़े गए हैं। ताड़ वृक्ष का अंकन प्रमाणित करता है कि भूमरा की इमारत नागों की है। नचना की इमारत

भी इन्हीं नागों की है, जिसे इतिहासकार गुप्त राजाओं का निर्माण बताए जाने के लिए आमादा हैं। नचना के पार्वती मंदिर की खिड़कियों में से एक में वही ताड़ का पेड़ झाँक रहा है, जो नागों का राजचिह्न था।

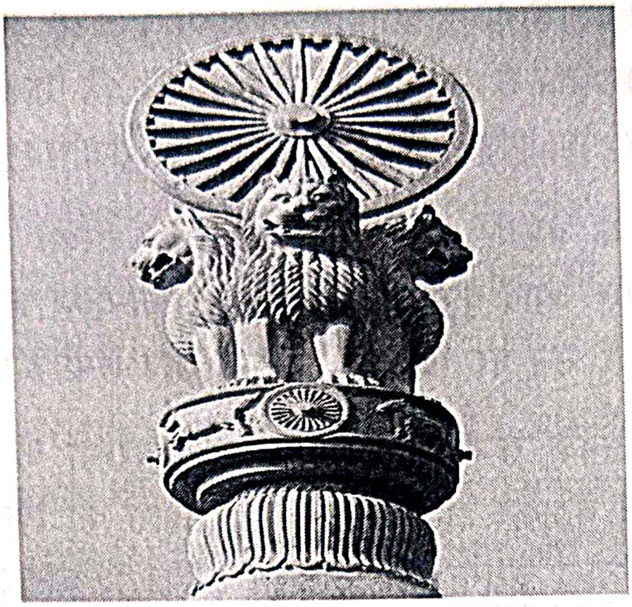
वास्तुकला के क्षेत्र में गुप्त वंश यदि था तो अत्यंत दरिद्र था। नगर, किले, शाही महल आदि कुछ भी नहीं मिलते। ले-देकर ईंट की बनी कुछ इमारतें मिलती हैं, उन पर भी नाग वंश की छाप लगी है।

भारत के अनेक राज घरानों का कल्पित पुराणों के मनगढ़ंत पात्रों से झूठा तालमेल बैठाकर इतिहासकारों ने इतिहास का विरूपीकरण किया है, जिससे एक बौद्ध घराना वाकाटक भी इसका शिकार हुआ है। इतना ही नहीं, वे अनेक इमारतों की हेराफेरी कर गुप्त काल को स्वर्ण युग की उपाधि दे बैठे।



(दुरेहा स्मृति स्तंभ लेख का टेक्स्ट)

68. शासन में बहुजन कल्याण का लिखित सिद्धांत सबसे पहले सम्राट अशोक ने दिया था और वह सिद्धांत उसके द्वितीय स्तंभलेख पर लिखा है—बहुकयाने अर्थात बहुजन कल्याण।



(अशोक का सिंह-स्तंभ)

69. देवानंपिय राजा का पालि में सटीक अर्थ होगा-अर्हत/बुद्ध का प्रिय राजा। विशेष जानकारी के लिए भदंत आनंद कौशल्यायन का पालि-हिंदी कोश देखिए।

सिर्फ अशोक ही नहीं बल्कि उसके समकालीन सिंहल का राजा तिस्स भी देवानंपिय की उपाधि धारण करता था।

इसलिए देवानंपिय को देवानांपिय बनाकर उसका अर्थ देवताओं का राजा करना गलत है। पालि में लिखे अभिलेख का अर्थ पालि से होगा, संस्कृत से नहीं।

इसलिए अशोक के अभिलेख पर देवताओं के प्रिय राजा नहीं बल्कि बुद्ध के प्रिय राजा अशोक लिखा हुआ है।

हँसिया के विवाह में खुरपी का गीत!

70. जब सम्राट अशोक के किसी भी शिलालेख में बुद्ध को छोड़कर किसी देवी-देवता का नाम है ही नहीं तो फिर सम्राट अशोक को देवताओं के प्रिय कहने का क्या मतलब? बुद्ध का प्रिय सम्राट अशोक कहने से संदर्भ जुड़ता है।

71. देवानंपिय का देव/देवा संदर्भ के अनुसार बुद्ध का सूचक है। शिलालेख को आगे पढ़ने से यह बात स्पष्ट हो जाती है। अशोक ने कहा है कि पहले मैं (बौद्ध) उपासक था और अब बौद्ध संघ की संगति में हूँ। ऐसे में देवानंपिय का देव/देवा खुद ही बुद्ध से जुड़ जाता है। शायद इसीलिए फाहियान ने हर जगह बुद्ध को देव ही कहा है–बुद्ध देव!

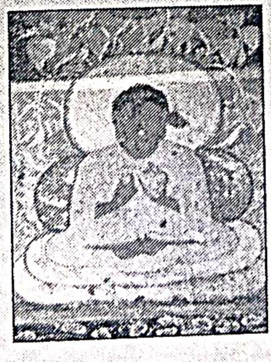


भाषा वैज्ञानिक व इतिहासकार डॉ. राजेंद्र प्रसाद सिंह ने खोजा, शिलालेख के पास ही मिली गुफा, जहां ठहरते थे सम्राट

केमूर पहाड़ी पर मिले सम्राट अशोक का एक और शिलालेख और गुफा

72. गौतम बुद्ध से पहले बुद्ध भी थे और विपस्सना भी थी। विपस्सी नामक बुद्ध ऐसे ही थोड़े न हुए थे।

पालि साहित्य तथा भरहुत लेखों में गौतम बुद्ध के अलावा जिन 5 बुद्धों का उल्लेख है, उनमें एक विपस्सी बुद्ध भी थे जिनकी तस्वीर हमें अजंता की गुफा नं.17 से प्राप्त होती है।



Vipassi Buddha on the panel Cave 17, Ajanta

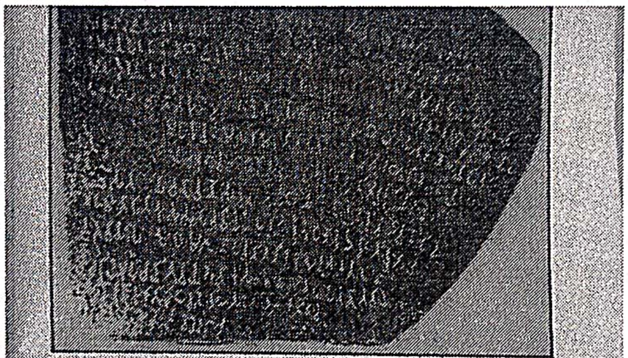
(विपस्सी बुद्ध)

73. चपड़ बनाम चाणक्य!!!

ज्ञात सबूतों के आधार पर कहा जाएगा कि सम्राट अशोक के दरबार का सबसे बड़ा लेखक चपड़ था। ब्रह्मगिरी और जटिंग-रामेश्वर जैसे शिलालेखों को लिखने का श्रेय लेखक चपड़ को ही प्राप्त है। बाकायदे अभिलेखों के नीचे लेखक चपड़ का नाम दर्ज है।

आश्चर्य कि लेखक चपड़ का नाम किसी किताब में दर्ज नहीं है। इतिहासकारों ने मौर्यकालीन लेखकों में चाणक्य की गणना गाजे-बाजे के साथ की है, मगर चपड़ को छोड़ दिया है। मौर्यकाल का जो ऐतिहासिक लेखक है, वह गायब है; जो अनैतिहासिक है, वहीं सिर चढ़कर बोल रहा है।

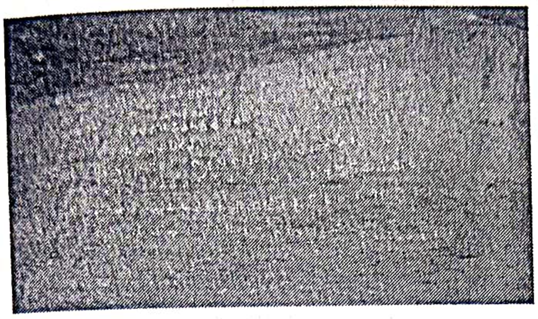
मैं मौर्यकाल के सबसे बड़े लेखक चपड़ की प्रतिभा को नमन करता हूँ।

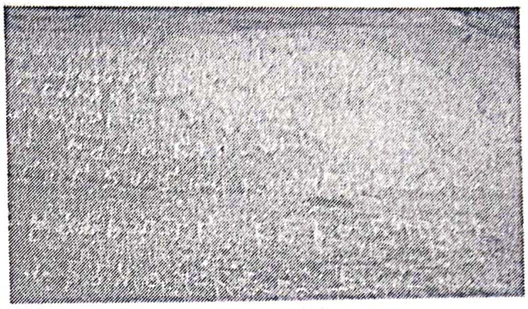

ब्रह्मगिरि का लघु शिलालेख

और देवताओं के प्रिय ऐसा भी कहते हैं—माता-पिता की सेवा करनी चाहिए, इसी प्रकार गुरुओं की भी सेवा करनी चाहिए, प्राणियों के गुणों को आचरण में लाना चाहिए। इसी प्रकार शिष्य को आचार्य का आदर करना चाहिए और अपने जाति भाइयों के प्रति उचित बर्ताव करना चाहिए। यही प्राचीन धर्म की रीति है। इससे आयु बढ़ती है। इसी के अनुसार मनुष्य को चलना चाहिए। चपड़ नामक लिपिकार (लेखक) ने यह लिखा।

(ब्रह्मगिरि का लघु शिलालेख)

74. इतिहासकारों को खबर नहीं है। सम्राट अशोक का नया अभिलेख मिला है, जिसका उल्लेख इतिहास के पन्नों पर नहीं है। यह अभिलेख बिहार प्रांत के कैमूर जिले में बसहा गाँव के पास कैमूर की पहाड़ी पर है। मैंने जाकर पढ़ा। यह महत्वपूर्ण शिलालेख है।





(अशोक का लघु शिलालेख)

75. पठियार शिलालेख का पाठ।

हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा में पठियार गाँव के पास यह शिलालेख है। शिलालेख की तस्वीर फेसबुक के साथी विनोद कुमार से ली गई है। स्थानीय लोगों की मान्यता है कि विस्मयकारी लिपि में लिखे गए इस शिलालेख को कोई समझ नहीं पाया है।

आप तस्वीर में देख सकते हैं कि शिलालेख में नीचे और ऊपर सिर्फ दो पंक्ति लिखी हुई है। ऊपर की लिपि ब्राह्मी और नीचे की लिपि खरोष्ठी है।

ऊपर लिखा है—वायलस पुकरिणी और नीचे लिखा है—राठिदारास वायलस पुकरिणी।

ऊपर का अर्थ हुआ—सार्वजनिक जलाशय और नीचे का अर्थ हुआ—राष्ट्रिक दारा का सार्वजनिक जलाशय।

निष्कर्ष यह कि अशोक कालीन भारत में उत्तरापथ का कोई राष्ट्रिक दारा नामक व्यक्ति था, जिसने सार्वजनिक उपयोग के लिए यहाँ जलाशय का निर्माण कराया था।

अभी तक इतिहासकारों को अशोक कालीन काठियावाड़ प्रांत के राष्ट्रिक तुषस्प का ही नाम ज्ञात था, अब उत्तरापथ के राष्ट्रिक दारा का भी नाम इतिहास में जुड़ जाना चाहिए।



(पठियार शिलालेख)

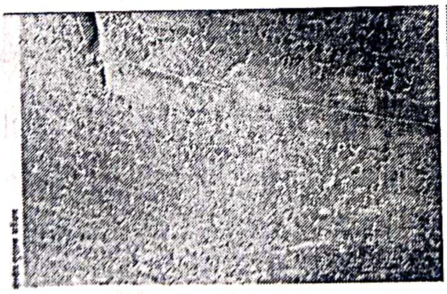
76. जिस जूनागढ़ अभिलेख को संस्कृत का पहला अभिलेख बताकर दूसरी सदी का ढोल पीटा जाता है, वह वस्तुतः सातवीं सदी का या उसके बाद का लिखा हुआ है।

आप जूनागढ़ अभिलेख को पढ़िए। सुविधा के लिए हिंदी भाषांतर दिया हुआ है।

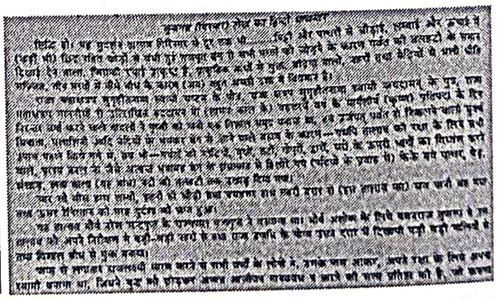
आँखें खोलकर देख लीजिए। इसका एक-एक वाक्य पूरे एक पैराग्राफ का है। सातवीं सदी के संस्कृत कवि बाणभट्ट ऐसे ही लिखते थे। एक-एक वाक्य एक-एक पैराग्राफ के बराबर। उनके पहले किसी ने नहीं लिखा है।

फिर अभिलेख को पढ़िए। आँखें खोलकर देख लीजिए। इसकी भाषा में लंबे-लंबे समास हैं। विशेषणों का अंबार है। इसकी भाषा रामायण, महाभारत और पुराणों से भी अधिक जटिल एवं अलंकृत है। ऐसी ही भाषा सातवीं सदी के बाणभट्ट लिखते थे।

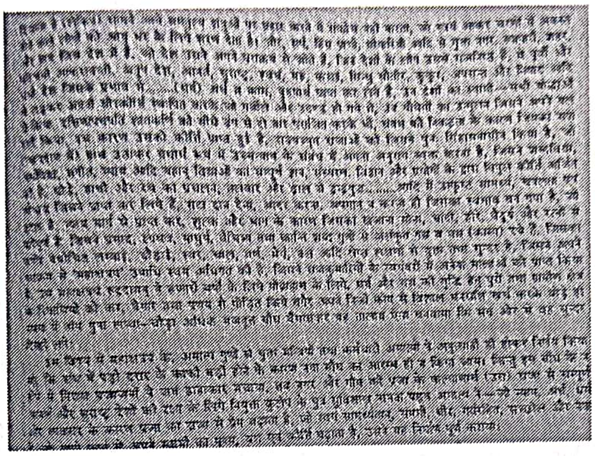
निश्चित जूनागढ़ अभिलेख दूसरी सदी का नहीं बल्कि सातवीं सदी या उसके बाद का लिखा हुआ है।



(जूनागढ़ अभिलेख)



(हिंदी भाषांतर-1)

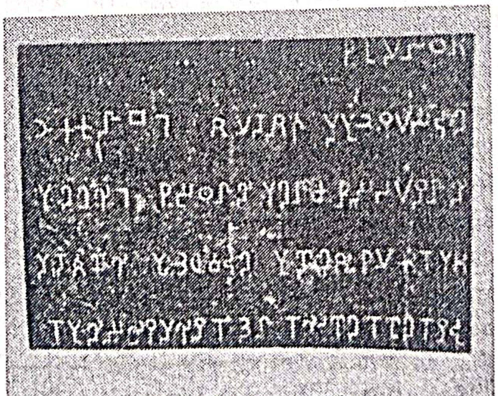


(हिंदी भाषांतर-2)

77. सम्राट अशोक का एक स्तंभलेख है। उसको रुम्मिन देई का स्तंभलेख कहा जाता है। यह स्तंभलेख वहीं खड़ा है, जहाँ गौतम बुद्ध जन्म लिए थे। गौतम बुद्ध जहाँ जन्म लिए थे, वहाँ कोई गाँव नहीं था। वे जंगल के रास्ते में जन्म लिए थे। इसलिए नाम के रूप में बुद्ध के जन्मस्थान की कोई पहचान नहीं थी।

बाद में बुद्ध के जन्मस्थान का नाम बुद्ध की माँ के नाम पर रख दिया गया। गौतम बुद्ध की माँ का नाम लुंमिनि (देवी) था। यही नाम बाद में चलकर रुम्मिन (देई) हो गया। जहाँ अशोक का रुम्मिन देई स्तंभलेख है, वहाँ रुम्मिन देई की पूजा होती है।

अशोक के इस अभिलेख को फिर से पढ़िए। इस गाँव का नाम अभिलेख में लुंमिनि गाम लिखा हुआ है। बुद्ध के समय में तो यहाँ जंगल था। निष्कर्ष यह कि गौतम बुद्ध की माँ का असली नाम लुंमिनि था। महामाया नाम नकली है।



रुम्मिनदेई स्तंभ का अभिलेख

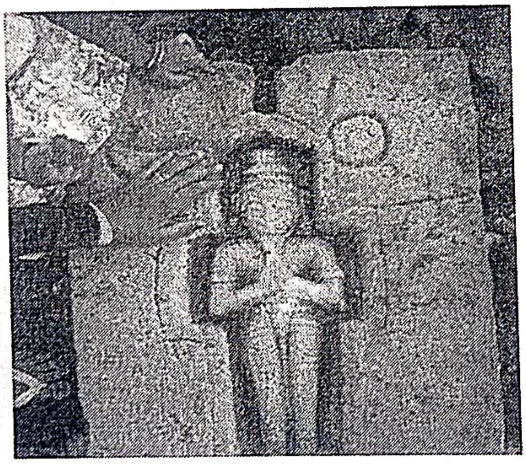
(रुम्मिनदेई स्तंभ अभिलेख का टेक्स्ट)

78. गौतम बुद्ध की यह मूर्ति और उस पर लिखे अभिलेख को मध्य प्रदेश से वीरू जी ने भेजा है। यह मूर्ति अशोकनगर से 9 किमी दूर ग्राम पिपनावदा में मिली है। यह अभिलेखांकित मूर्ति तब मिली, जब जगदीश भंडारी के खेत में बुआई का काम हो रहा था।

आप भी इस अभिलेख को पढ़ सकते हैं। यह नागरी लिपि में है। अभिलेख के पहले गोले में सिद्धि लिखा हुआ है और दूसरे गोले में 1360 साके लिखा है।

1360 साके का मतलब 1438 ई.। अर्थात 15 वीं सदी का दिल्ली सल्तनत।

अभी तक दिल्ली सल्तनत के इतिहासकारों ने बौद्ध मूर्ति कला को भारत के मध्यकालीन इतिहास में रेखांकित नहीं किया है। इसलिए यह मूर्ति और अभिलेख मध्य काल के इतिहास में एक नया आयाम खोलता है।



(पिपनावदा से मिली बुद्ध की मूर्ति)



(मूर्ति का अभिलेख)

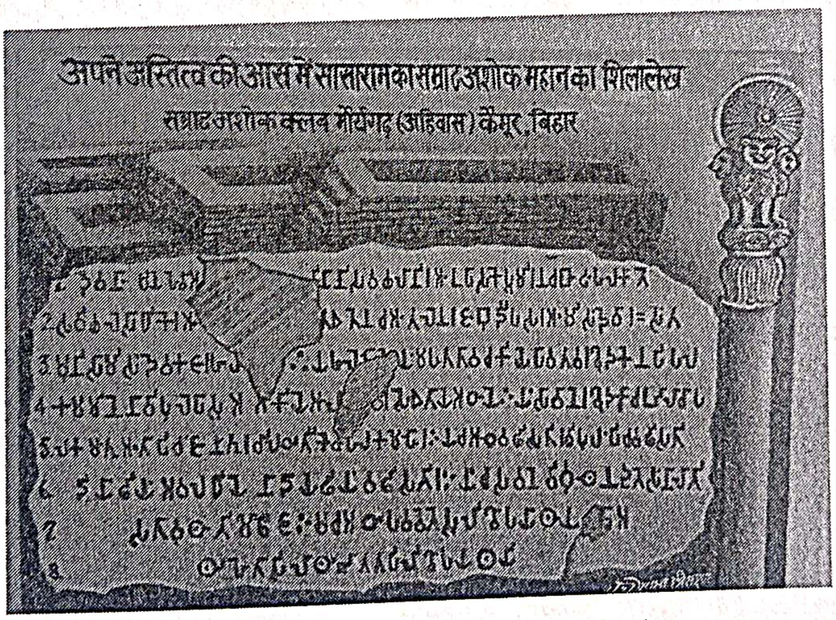
79. भाषावैज्ञानिकों ने "वैश्य" के जिन सजात शब्दों की पहचान की है, वे हैंः—संस्कृत-विश् (जन, निवास)/ लैटिन-वीकुस् (घर, गाँव)/ संस्कृत-वेशम (घर, निवास)/ ग्रीक-ओइकोस (घर, निवास)/ संस्कृत-विश्व (संसार)/ अवेस्ता-विस्प (जगसंसार)/रूसी-वेस् (संपूर्ण, सब) आदि।

जाहिर है कि वैश्य की मूल संकल्पना में व्यापार शामिल नहीं है, जबकि वणिक की मूल संकल्पना में व्यापार शामिल है। इसलिए वैश्य और वणिक को एक बताया जाना संदिग्ध है।

जैसा कि आप जानते हैं कि बौद्ध सभ्यता के विकास में वणिकों का बड़ा योगदान है। ऐसा रोमिला थापर ने भी माना है। अनाथपिंडक, पटाचारा, यश, उपगुप्त आदि वणिक थे और बौद्ध स्थापत्य की अभिव्यक्ति में वणिक और शिल्प श्रेणियों का बड़ा योगदान रहा है।

इसलिए ऐसा जान पड़ता है कि वणिक बौद्ध-सभ्यता के अंग थे, जबकि वैश्य आर्य-सभ्यता से जुड़े थे। सभ्यता के किस मोड़ पर वैश्य और वणिक एकाकार हुए, यह इतिहास का रोचक प्रसंग है।

80. सम्राट अशोक के एक बेहद दुर्लभ अभिलेख की बेहद खूबसूरत पेंटिंग!! कलमकार चित्रप्रभा त्रिसरण को बधाई!!!



(सासाराम लघु शिलालेख की पेंटिंग)

81. सिंधु घाटी में पीपल के पत्ते वाला सील विशिष्ट जान पड़ता है। हो सकता है कि आपने केयर नहीं किया हो। सभी सीलों पर लिखावट तस्वीर के ऊपर है। पीपल के पत्ते वाले सील पर लिखावट नीचे है।



(सिंधु घाटी सभ्यता के सील)

82. कोनागमन बुद्ध की प्रामाणिकता।

रॉबिन कनिंघम ने एक किताब लिखी है। किताब का नाम है—"दि आर्कियोलॉजी ऑफ साउथ एशिया फ्रॉम इंडस टू असोका।" इसमें सिंधु घाटी सभ्यता से लेकर अशोक के समय तक का पुरातात्त्विक विश्लेषण है, जिसमें कोनागमन बुद्ध भी शामिल हैं।

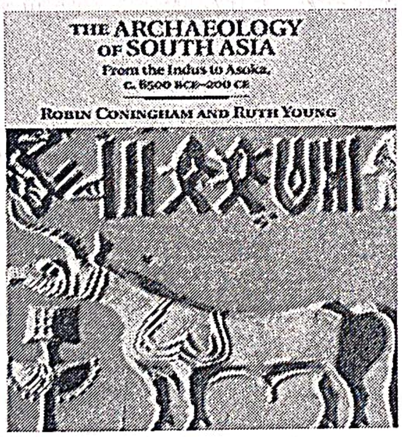
पाँचवीं सदी के आरंभ में फाहियान भारत आया था। उसने अपनी पुस्तक के इक्कीसवें खंड में कोनागमन बुद्ध के स्तूप का आँखों देखा वर्णन किया है।

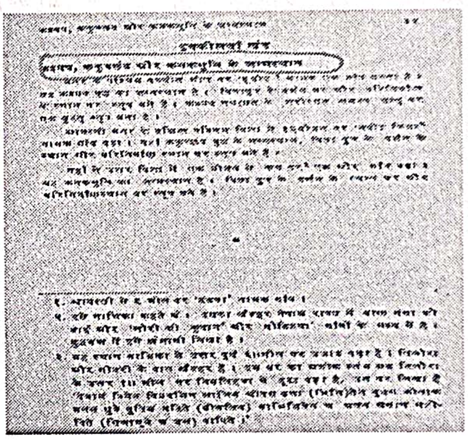
कोनागमन बुद्ध का स्तूप मौर्य काल से काफी पहले मौजूद था। इतना पहले कि वह अशोक के समय तक जर्जर हो चुका था। इसीलिए अशोक को उसकी मरम्मत करानी पड़ी। स्तूप निगाली गाँव के पास था। अशोक ने कोनागमन बुद्ध की स्मृति में स्तूप के पास स्तंभ लिखवाया है। स्तंभ पर "बुधस कोनाकमनस" लिखा है।

तीसरी सदी ईसा पूर्व में भरहुत का स्तूप मौजूद था। स्तूप पर कोनागमन बुद्ध का नाम लिखा है—"भगवतो कोणागमनस्स बोधि।"

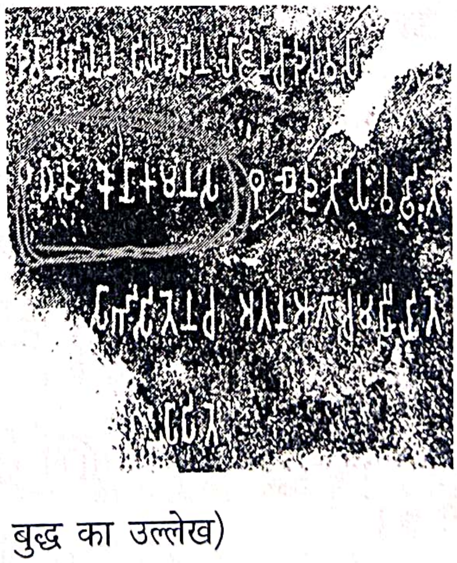
हमारे पास अनेक पुरातात्त्विक और साहित्यिक सबूत हैं कि गौतम बुद्ध से पहले भी बुद्ध थे और गौतम बुद्ध से पहले भी स्तूप थे।

इतिहासकार बताते हैं कि सिंधु घाटी की सभ्यता से लेकर मौर्य काल तक भारत में वास्तुकला का इतिहास एक खाली अलमारी की तरह है। ऐसे इतिहासकार बौद्ध सभ्यता के प्रति चिड़चिड़े बने हुए हैं। दरअसल सिंधु घाटी सभ्यता से लेकर मौर्य काल तक स्तूपों की श्रृंखला है। इसे ठीक से न समझ पाने के कारण उन्होंने इस बीच के काल को वास्तुकला की दृष्टि से खाली अलमारी माना है। ऐसा इसलिए कि वे मौर्य काल से पहले के बने स्तूपों को भी मौर्य काल और उसके बाद खींच लाए हैं।









(कोनागमन बुद्ध का उल्लेख)

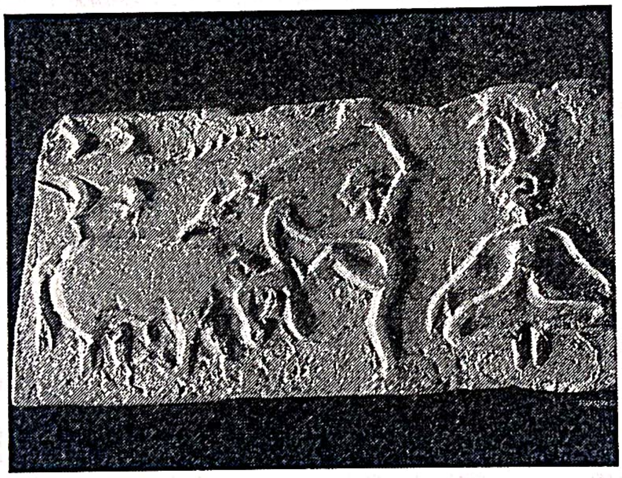
83. ये दोनों सील सिंधु घाटी सभ्यता के हैं। दोनों पर बलि/हिंसा का दृश्यांकन है।

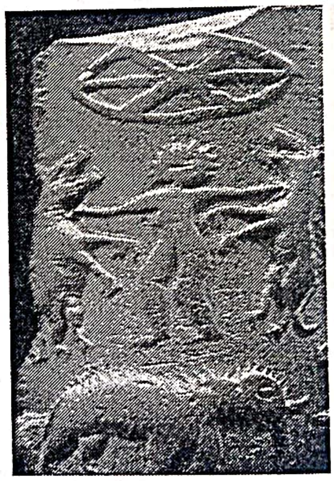
पहले सील में हिंसा सिंधुकालीन बुद्ध के सामने हो रही है।

दूसरे सील में हिंसा धम्म चक्क के ठीक नीचे हो रही है। गौतम बुद्ध ने इन्हीं सब बुराइयों का विरोध किया।

गौतम बुद्ध स्वयं बौद्ध सभ्यता में जन्मे थे और बौद्ध सभ्यता की बुराइयों से लड़ते हुए उसका परिमार्जन भी किया।

गौतम बुद्ध के समय में वैदिक संस्कृत और संस्कृति नहीं थी। इसलिए उन्होंने वैदिक कर्मकांड का विरोध नहीं किया।



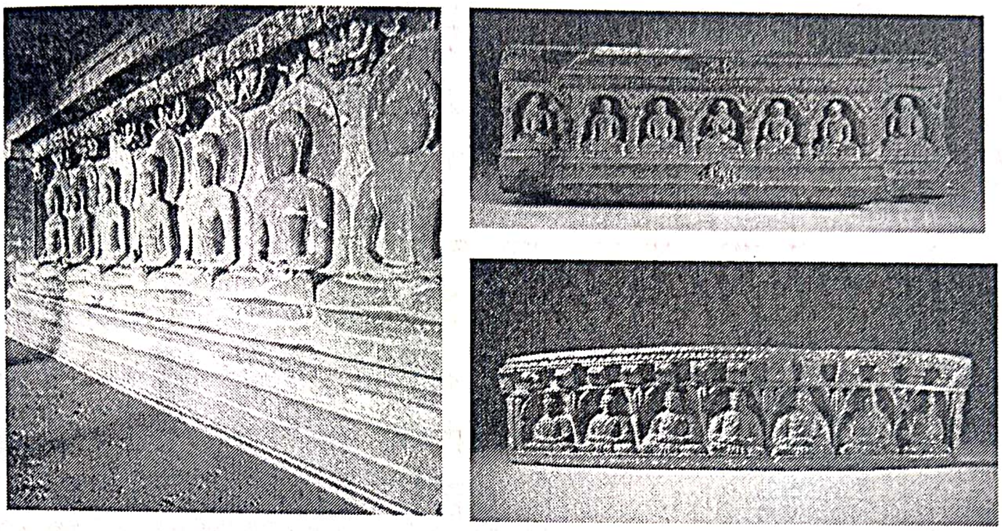


(सिंधु घाटी के सीलों पर हिंसा का दृश्यांकन)

84. बौद्ध मूर्तिकला की गहन खोजबीन से पता चलता है कि सप्तबुद्ध (The Seven Buddhas) की मंडली में सबसे दाएँ गौतम बुद्ध हैं, दूसरे नंबर पर कस्सप बुद्ध हैं, तीसरे नंबर पर कोणागमन बुद्ध हैं, चौथे नंबर पर ककुसंध बुद्ध हैं, पाँचव नंबर पर वेस्सभू बुद्ध हैं, छठे नंबर पर सिखी बुद्ध हैं और सबसे बाएँ विपस्सी बुद्ध हैं।

इस क्रम की जानकारी हमें साँची स्तूप पर अंकित सप्तबुद्ध के रेखांकन से मिलती है।

इसलिए बुद्ध की मुद्रा में बैठी हर मूर्ति गौतम बुद्ध की नहीं है। हर बुद्ध मुद्रा में बैठी मूर्ति को गौतम बुद्ध की मूर्ति मान लेने से इतिहास का कालक्रम बिगड़ा है।



(सात बुद्धों का वास्तविक क्रम)

85. 28 बुद्धों में से सप्तबुद्ध (The Seven Buddhas) की स्तुति बौद्ध साहित्य में अधिक लोकप्रिय है। दीघनिकाय के महापदानसुत में सप्तबुद्ध का विस्तृत वर्णन है। सप्तबुद्ध में विपस्सी बुद्ध, सिखी बुद्ध, वेस्सभू बुद्ध, ककुसंध बुद्ध, कोणागमन बुद्ध, कस्सप बुद्ध और गौतम बुद्ध शामिल हैं।

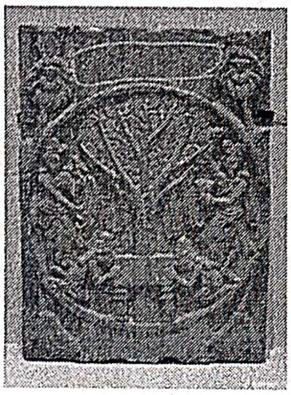
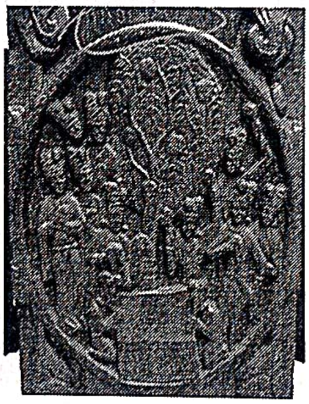
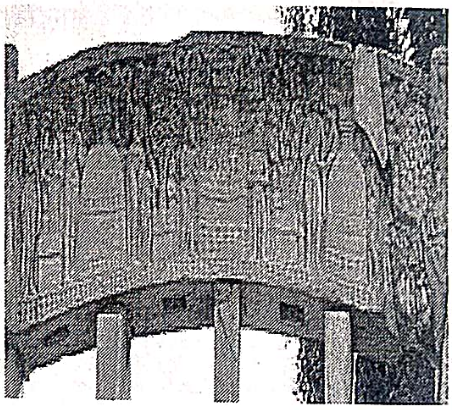
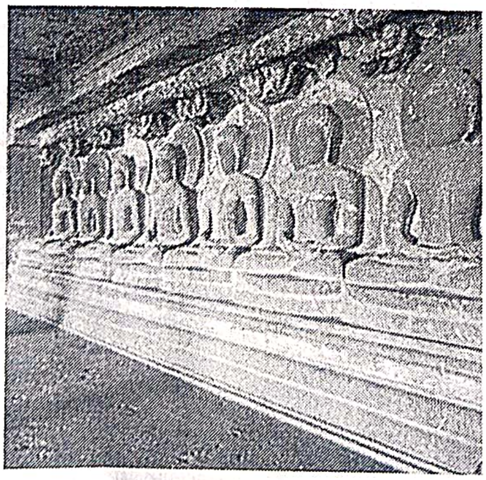
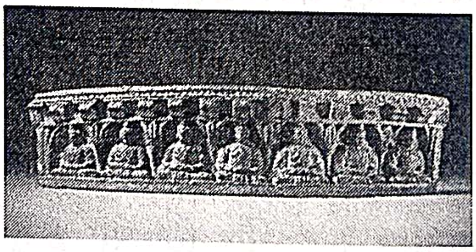
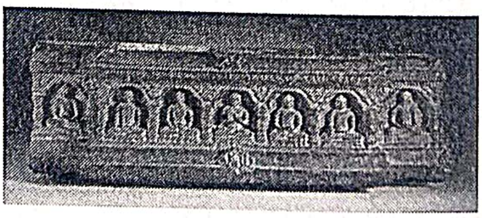
सप्तबुद्ध की मंडली के पाँच नाम भरहुत स्तूप पर अंकित हैं। सिखी बुद्ध का नाम स्पष्ट नहीं है, जबकि वेस्सभू के नाम की जगह "भगवतो बोधि सालो" लिखा है। बाकी पाँच बुद्धों के नाम कोई दो हजार साल से भी पहले अंकित कराए गए हैं। बतौर नमूना भरहुत स्तूप पर अंकित कोणागमन बुद्ध और विपस्सी बुद्ध के अभिलेख क्रमशः तस्वीर एक और दो में दिए गए हैं। एक में लिखा है—भगवतो कोणागमनस्स बोधि और दूसरे में लिखा है—भगवतो विपस्सिनो बोधि।

सप्तबुद्ध का दूसरा प्रमाण हमें साँची स्तूप पर मिलता है। इसमें 3 स्तूप एवं 4 बोधिवृक्ष के माध्यम से सप्तबुद्ध को दर्शाया गया है। तीसरी तस्वीर साँची स्तूप पर अंकित सप्तबुद्ध की है।

सप्तबुद्ध का तीसरा सबूत हमें एलोरा की गुफा संख्या 12 में मिलता है। इसमें सप्तबुद्ध को पत्थरों पर उकेरा गया है। आप इसे चौथी तस्वीर में देख सकते हैं।

सप्तबुद्ध के अनेक पुरातात्त्विक प्रमाण हैं। कैलिफोर्निया के एक म्यूज़ियम में पाकिस्तान एवं भारत से प्राप्त सप्तबुद्ध की अलग-अलग दो मूर्तियाँ रखी हुई हैं। आप इन्हें तस्वीर पाँच और छः में देख सकते हैं।

कुल मिलाकर सप्तबुद्ध का वर्णन हमें न सिर्फ साहित्य में बल्कि हजारों साल पहले की कलाओं में भी अंकित मिलता है। ऐसा पुरातात्त्विक अंकन हमें संस्कृत साहित्य में वर्णित सप्तर्षि का नहीं मिलता है। ऐसे में माना जाना चाहिए कि संस्कृत साहित्य में सप्तर्षि की अवधारणा बौद्ध परंपरा के सप्तबुद्ध की देन है।

(सप्त बुद्धों के अन्य प्रमाण)

86. बुद्धिज्म में Arched Hill Symbol क्या है?

गोरखपुर से 20 किमी दूर राप्ती नदी के तट पर सोहगौरा है। सोहगौरा से एक ताम्रपत्र अभिलेख मिला है। इसकी भाषा प्राकृत और लिपि ब्राह्मी है। इसके ऊपरी भाग पर सात आकृतियाँ उकेरी गई हैं। ठीक बीच में Arched Hill Symbol है। पहली तस्वीर सोहगौरा ताम्रपत्र की है। भारत के अनेक इतिहासकारों ने इसे मेरु पर्वत पर चंद्रमा माना है। वस्तुतः यह मेरु पर्वत पर चंद्रमा नहीं है बल्कि बौद्ध धर्म में इसे चैत्य का प्रतीक माना जाता है।

Arched Hill Symbol बौद्ध धर्म से संबंधित है। इसे श्री लंका के बौद्ध राजा तिस्स के सिक्कों से जाँचा जा सकता है। दूसरी तस्वीर राजा तिस्स के सिक्के की है, जिसमें आप घेरे में Arched Hill Symbol देख सकते हैं।

तीसरी तस्वीर मौर्यकालीन भारत के आहत मुद्रा की है, जिसमें आप Arched Hill Symbol देख सकते हैं।

Arched Hill Symbol में कभी-कभी तीन और कभी-कभी छः गोल घेरे होते हैं। छः गोल घेरे वाला Arched Hill Symbol को आप चौथी तस्वीर की आहत मुद्रा पर देख सकते हैं।

पाँचवीं तस्वीर यह समर्थन करती है कि सोहगौरा ताम्रपत्र पर उकेरी गई आकृति मेरु पर चंद्रमा नहीं है बल्कि बौद्ध धर्म का Arched Hill Symbol है। इतिहासकार संशोधित करें।



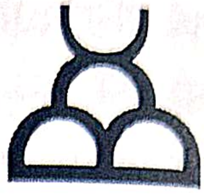
The Cave of la-devieo Varunadata the sister of Great King Devanampiya.



This large handsome coin is believed to have issued by King Devanamptiyatissa to Commemorate the propagation of Buddhism in Ancient Sri Lanka







Arched-hill symbol (here a three arched-hill symbol with crescent).

(Arched Hill Symbol के विभिन्न रेखांकन)

87. सारनाथ के सिंह-स्तंभ पर अशोक-चक्र दो प्रकार के हैं। एक में 32 आरे हैं और दूसरे में 24 आरे हैं।

32 आरे वाला अशोक चक्र मुख्य है। इसीलिए वह शीर्ष पर है और सिंह उसे कंधों पर उठाए हुए हैं।

24 आरे वाला अशोक-चक्र उप है। इसीलिए वह सिंहों की गोल वेदी पर नीचे बने हैं, जिनकी संख्या 4 है।

भारत ने मुख्य को छोड़कर राष्ट्रीय ध्वज में उप अशोक-चक्र का चयन किया है।



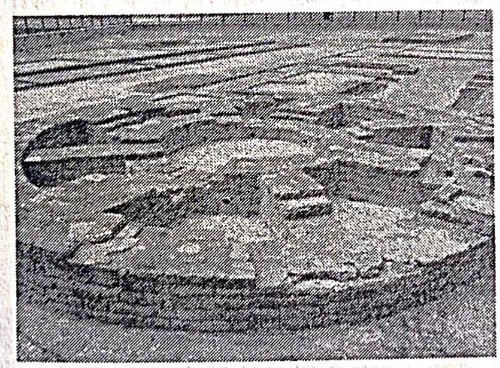
(सारनाथ के सिंह स्तंभ पर दो प्रकार के अशोक-चक्र। एक में 32 आरे हैं, दूसरे में 24)

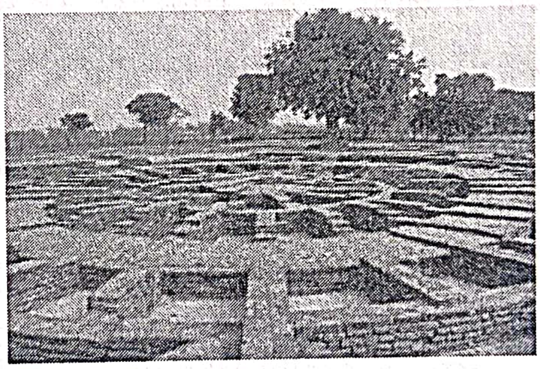
88. स्तूप का नाम सुनते ही दिमाग में एक अर्द्ध गोलाकार संरचना की तस्वीर उभरती है। लेकिन रूकिए, हर जगह का स्तूप अर्द्ध गोलाकार नहीं है। एक स्तूप धम्म चक्क के आकार का है, जिसमें आठ आरे बने हुए हैं। धम्म चक्क में भी 8 आरे हैं।

एक दूसरे स्तूप में आरों की संख्या क्रमशः 12, 24 और 32 है। बीच की संख्या अशोक-चक्र की याद दिलाती है। अशोक-चक्र में भी 24 आरे हैं।

ऐसे स्तूप पंजाब के जिला फतेहगढ़ साहिब के गाँव संघोल में मिले हैं। कभी संघोल में भिक्षु संघ था। इसीलिए इसका नाम संघोल है।

स्तूप की खुदाई 1968 में हुई थी। स्तूप से एक सोप पत्थर की मंजूषा मिली है। मंजूषा के ढक्कन पर खरोष्ठी लिपि में एक बौद्ध स्कॉलर का नाम लिखा है। वह स्कॉलर भद्रक थे। उन्हीं का अस्थि-भस्म उस मंजूषा में है।





(पंजाब के संघोल में प्राप्त स्तूप)

89. देव नी मोरी गुजरात के साबर कांठा जिले में मेसवा नदी के बाएँ तट पर स्थित है। देव नी मोरी में 120 फीट चौड़ा और 40 फीट ऊँचा एक टीला था। लोग इसे "भोज राजा नो टेकरो" कहते थे। 1960 में टीले की खुदाई हुई। खुदाई में महास्तूप मिला।

वह 1963 का साल था। जनवरी की 14 तारीख थी। महास्तूप में 13 फीट नीचे मिट्टी का एक घड़ा मिला। घड़े में एक प्रस्तर मंजूषा मिली। नीचे उस प्रस्तर मंजूषा की तस्वीर है।

मंजूषा हरे रंग के पत्थर की है। इसका व्यास 7 ईंच और ऊँचाई 5 ईंच है। मंजूषा पर अभिलेख है। अभिलेख मंजूषा के एक किनारे से आरंभ होता है और 3 गोलाकार पंक्तियों में समाप्त होता है।

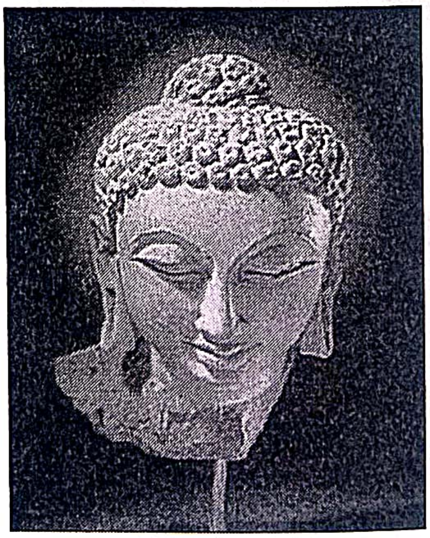
अभिलेख में लिखा है कि यह महास्तूप रुद्रसेन के शासन में खड़ा किया गया। वह साल 127 था और भाद्रपद का 5 वाँ दिन था। रुद्रसेन गुजरात का क्षत्रप राजा था।

मंजूषा में किसकी अस्थि रखी हुई है? इसका जवाब अभिलेख में है। लिखा है—दसबल सरीरा निलय अर्थात दसबल के शरीर का यह निवास है। दसबल गौतम बुद्ध की एक उपाधि थी। मंजूषा के ढक्कन पर भी लिखा है। वह बौद्ध सुत्त है।

देव नी मोरी का प्राचीन नाम पासानतीकापल्लि था। मौर्य राजा अशोक ने यहाँ आरंभिक स्तूप बनवाए थे। अशोक मौर्य के देव बुद्ध थे। इसीलिए बाद में लोगों ने इस स्थान को देव नी मोरी (देव नी मोरिय) कहने लगे। देव नी मोरिय का अर्थ है—मोरियों का देव अर्थात बुद्ध का निलय।

देव नी मोरी की खुदाई में बुद्ध की जो भी मूर्तियाँ मिली हैं, सभी पकी हुई मिट्टी की हैं। पत्थर की मूर्तियाँ यहाँ से नहीं मिली हैं। बतौर नमूना बुद्ध की एक मूर्ति की तस्वीर नीचे दी गई है। मूर्ति बेहद खूबसूरत है।



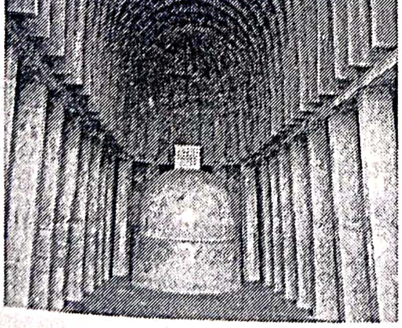


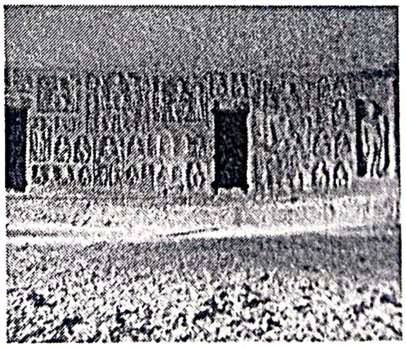
(हरे रंग की प्रस्तर मंजूषा (बायें) और पक्की मिट्टी की बुद्ध की मूर्ति (दायें))

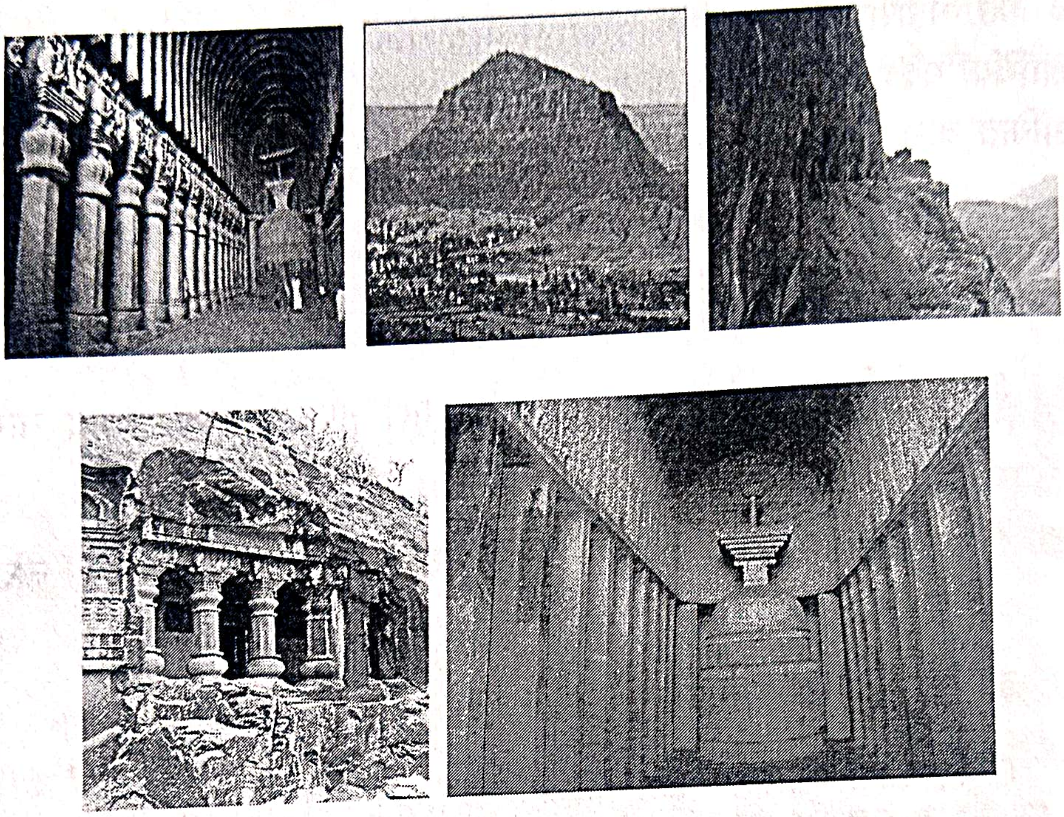
90. महाराष्ट्र की अनेक बौद्ध चैत्य-गुफाओं को नाग दानदाताओं ने आर्थिक मदद की, निर्माण में सहयोग किए तथा अपने नाम शिलालेखों पर अंकित कराए। ये अपने नाम के अंत में "नाक" लिखते थे।

1. भाजे : अनपि नाक, वासुल नाक आदि।
2. पवनी : नद नाक, बाल नाक आदि।
3. कान्हेरी : अपरे नाक, नाकनाक, गोल नाक के पुत्र, खान्द नाग की माता आदि।
4. कार्ले : मितादेव नाक, अगनीमित्तरा नाक के पुत्र, महादेव नाक की माता आदि।
5. जुन्नार : थाभुति नाक आदि।
6. शिवनेरी : विरसे नाक आदि।
7. नासिक : एरोहल्या चालिसाल नाक की पुत्री, छाकलेपाकिया राम नाक आदि।
8. वेडसा : अपदेव नाक की पत्नी, पुस्प नाक के पुत्र आदि।

प्राचीन काल के सभी बौद्ध नाग महानुभावों का आभार, जिन्होंने धम्म के विकास में सहयोग किए और जिनकी अमर गाथाएँ आज भी शिलालेखों पर अंकित हैं।







(बौद्ध स्थलों के दृश्य)

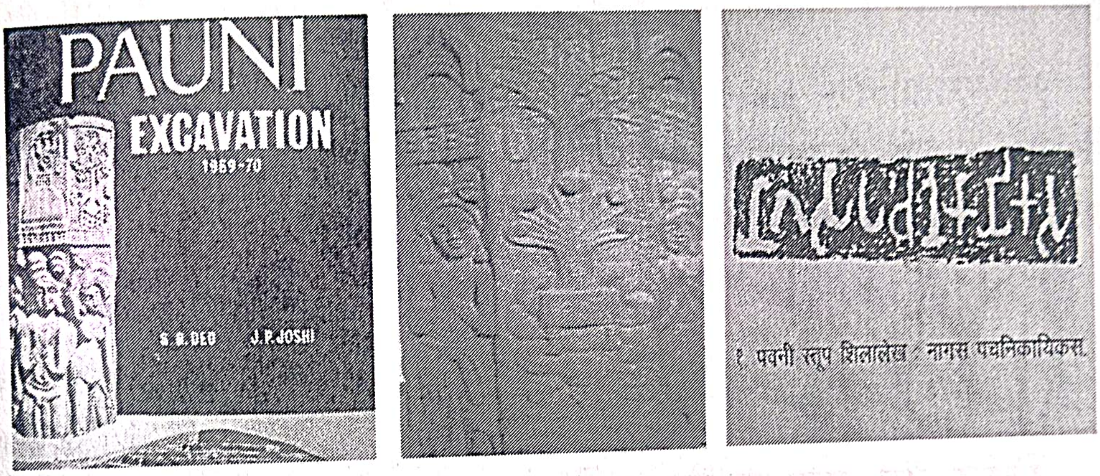
91. महाराष्ट्र के भंडारा जिले में पवनी नामक नगर है। यह वैनगंगा के तट पर नागों का नगर है। नगर के दक्षिण में एक 20 फीट ऊँचा मिट्टी का टीला था। 1969-70 में इसकी खुदाई हुई। खुदाई में महास्तूप मिला।

यह महास्तूप अशोक से पहले का है। इसलिए कि खुदाई में बुद्ध कालीन आहत मुद्राएँ भी मिलीं। समय के साथ-साथ स्तूप का विस्तार होते गया।

अनेक नाग दानदाताओं ने स्तूप के निर्माण में योगदान किया। इनमें एक थे—नाग पचनिकाय। ये पाँचों निकाय के ज्ञाता थे। एक वेदिका स्तंभ पर इनका नाम लिखा है। पंच निकाय का मतलब है—दीघ निकाय, मज्झिम निकाय, संयुत्त निकाय, अंगुत्तर निकाय और खुद्दक निकाय। इससे यह भी साबित होता है कि बौद्ध निकायों की रचना काफी पहले हो चुकी थी।

स्तूप के शिलालेखों पर अनेक बौद्ध नाग दानदाताओं के नाम अंकित हैं। अनेक नाम के अंत में "नाक" है जैसे नदनाक, बालनाक आदि।

आश्चर्य कि कोरेगाँव के शहीद स्मारक पर भी कई नाम अंकित हैं, जिनके अंत में "नाक" है जैसे गोपनाक, बालनाक। उससे भी आश्चर्य यह कि बालनाक जैसे बौद्ध नागवंशीय नाम ईसा पूर्व से लेकर 19 वीं सदी तक मेल खाते हैं।



(एस. बी. देव और जे.पी.जोशी की पुस्तक 'पवनी एम्सकैवेशन' (बायें), पवनी का महास्तूप (बीच में) और पवनी स्तूप के शिलालेख पर नाग दानदाताओं का नाम (दायें))

बुद्ध का नया परिप्रेक्ष्य

92. पुरातात्विक रूप से स्तूप सिंधु घाटी सभ्यता में मिलता है और लिखित रूप में स्तूप वैदिक साहित्य में मिलता है। सिंधु घाटी की सभ्यता प्राचीन हो चाहे वैदिक युग, स्तूप तो दोनों में है।

93. मनुष्य का धर्म-परिवर्तन पढ़े होंगे, मूर्ति का धर्म-परिवर्तन पढ़िए!

जितेंद्र पुष्प, गया के सौजन्य से।

आम लोगों के धर्म परिवर्तन की खबरें तो अकसर आती रहती हैं, लेकिन बिहार के नालंदा और बोधगया में बुद्ध प्रतिमाओं का ही धर्म परिवर्तन हो रहा है. यहां बौद्ध मूर्तियों को हिंदू मंदिरों में स्थापित कर उनकी हिंदू देवी-देवताओं की तरह पूजा-अर्चना हो रही है. गौतम बुद्ध की मूर्ति को तेलिया मसान की संज्ञा देकर तेल चढ़ाने, गोरैया बाबा के नाम पर बुद्ध की मूर्ति पर बलि देने, दारू चढ़ाने और देवी के नाम पर सिंदूर लगाए जाने जैसी बातें आम हैं. भगवान बुद्ध की मूर्तियों को ब्रह्मड्ढ बाबा, भैरों बाबा, विष्णु भगवान, बजरंग बली समेत कई हिंदू देवी-देवताओं के नाम पर पूजा जा रहा है.

94. कैसा इतिहास-बोध है कि सिंधु घाटी की सभ्यता के बाद वैदिक युग आया? कहाँ सिंधु घाटी की सभ्यता का नगरीय जीवन और कहाँ वैदिक युग का ग्रामीण जीवन! भला कोई सभ्यता नगरीय जीवन से ग्रामीण जीवन की ओर चलती है क्या?

सिंधु घाटी के बड़े-बड़े नगरों के आलीशान भवनों की जगह कैसे पूरे उत्तरी भारत के वैदिक युग में अचानक नरकूलों की झोंपड़ी उग आईं? तुर्रा यह कि ये नरकूलों की झोंपड़ियाँ उसी पश्चिमोत्तर भारत में उगीं, जहाँ सिंधु साम्राज्य के बड़े-बड़े भवन थे। आपको ऐसा इतिहास-बोध उलटा नहीं लगता है?

आप पढ़ाते हैं कि सिंधु घाटी की सभ्यता में लेखन-कला विकसित थी और फिर उसके बाद की वैदिक संस्कृति में पढ़ाने लगते हैं कि वैदिक युग में लेखन-कला का विकास नहीं हुआ था। वैदिक युग में लोग मौखिक याद करते थे और लिखते नहीं थे। ऐसा भी होता है क्या? पढ़ी-लिखी सभ्यता अचानक अनपढ़ हो जाती है क्या?

आप यह भी पढ़ाते हैं कि सिंधु घाटी की सभ्यता में मूर्ति-कला थी। फिर उसके बाद पढ़ाते हैं कि वैदिक युग में मूर्ति-कला नहीं थी। क्या यह सब उलटा नहीं है ?

भारत में स्तूप-स्थापत्य, लेखन-कला, मूर्ति-कला आदि का विकास निरंतर हुआ है। कोई गैप नहीं है। यदि इतिहास में ऐसा गैप आपको दिखाई पड़ रहा है तो वह वैदिक संस्कृति को भारतीय इतिहास में एडजस्ट करने के कारण दिखाई पड़ रहा है।

स्तूपों का इतिहास, लेखन-कला का इतिहास, मूर्ति-कला का इतिहास सभी कुछ सिंधु घाटी सभ्यता से निरंतर मौर्य काल और आगे तक जाता है। बशर्ते आप मान लीजिए कि सिंधु साम्राज्य से लेकर मौर्य साम्राज्य और आगे तक टूटती-जुड़ती बौद्ध सभ्यता की कड़ियाँ थीं।

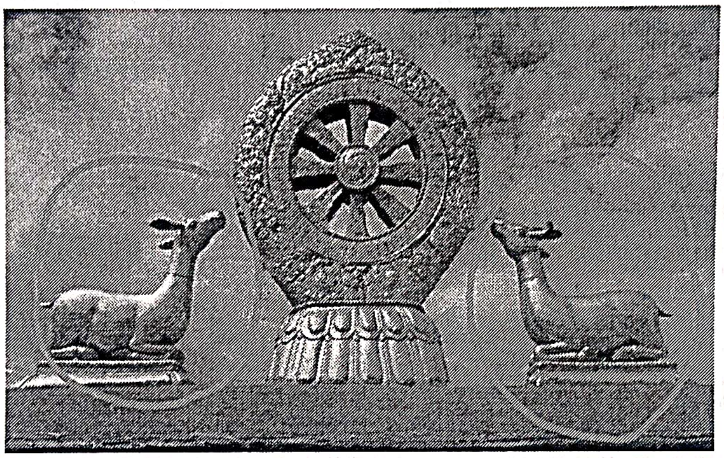
नीचे तीन तस्वीरें हैं। पहली सेनुआरियन सभ्यता की है, दूसरी सिंधु घाटी और तीसरी मौर्य काल के बाद की है। आप तीनों में दर्शक मुद्रा में दो हिरण देख सकते हैं जो बौद्ध सभ्यता का प्रतीक है। यह प्रतीक सिंधु घाटी की सभ्यता से लेकर मौर्य काल और आगे तक निरंतर चलता है।



(सेनुआरियन सभ्यता की मूर्ति)



(सिंधु घाटी की मूर्ति)



(दर्शक मुद्रा में दो हिरण)

95. बूढ़ा देव और बूढ़ा महादेव आदि क्रमशः बुद्ध देव और बुद्ध महादेव का रूपांतरण है। ऐसा रूपांतरण अन्य भाषाओं में "ध" की अनुपस्थिति के कारण हुआ है। इसीलिए बूढ़ा देव और बूढ़ा महादेव आदि को नेट पर सर्च करने से Budha Dev (बुद्ध देव) और Budha Mahadev (बुद्ध महादेव) आदि आएगा।

निष्कर्ष यह कि बुढ़न पहाड़ी, बुढ़वा महादेव, बुढ़ेश्वर, बूढ़ा देव, बूढ़ा महादेव आदि सभी बुद्ध शब्द की उच्चारण-रीति के रूपांतरण हैं।

96. संस्कृत साहित्य को ये पता है कि सम्राट अशोक की उपाधि देवानंपिय का अर्थ मूर्ख होता है। ये भी पता है कि सम्राट अशोक के पुत्र तीवर का अर्थ वर्णसंकर होता है। सब पता है। इतिहास विकृत करने की

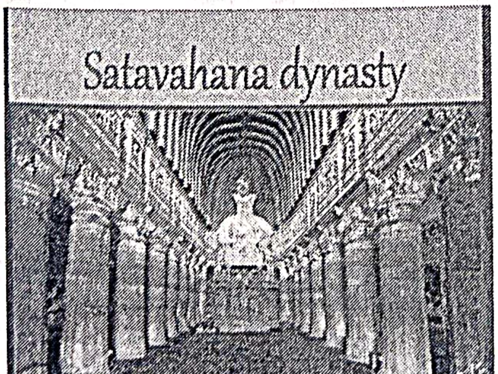
हर चीज पता है। बरसों से पता है। मगर ये बरसों से क्यों नहीं पता है कि उसने स्तंभ लगवाए, अभिलेख भी खुदवाए?

97. सात तो हिंदी का शब्द है। सातवाहन युग में हिंदी नहीं थी। अतः सत्त/सप्त के अर्थ में सात भी नहीं था। इसलिए जो विद्वान सात को सूर्य के सात घोड़ों से जोड़ते हैं और बताते हैं कि जिनका वाहन सूर्य की भाँति सात घोड़े थे या फिर यह बताते हैं कि सातवाहन सूर्योपासक थे, वे गलतफहमी में हैं।

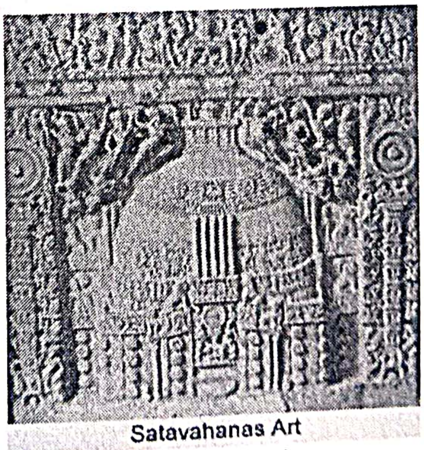
सात नहीं बल्कि सत्तवाहन शुद्ध होगा। सत्त का मतलब वही शक होता है और सत्त शक का ही रूपांतरण है। सत्तवाहन का रूप सक्कवाहन हो या न हो, इतना जरूर है कि सातवाहन राजे बुद्ध के विचारों को वहन करते थे। वे सक्क अर्थात बुद्ध के विचारों के वाहक थे, जिन पर सवार होकर बुद्ध के विचार दक्षिण में फैले।

ताजिंदगी सातवाहनों ने बौद्ध विहार, चैत्यों और बौद्ध गुफाओं का निर्माण कराए—ऐसे कि बौद्ध वास्तुकला को छोड़कर उनकी कोई भी इमारत दूसरी नहीं है।

इसलिए सातवाहन निश्चय ही सक्क अर्थात बुद्ध के विचारों के वाहक थे। इसलिए इनका नाम सक्कवाहन/शक्यवाहन (सत्तवाहन) सत्य के करीब है। इसलिए आश्चर्य नहीं कि सातवाहनों ने चैत्य प्रकार के सिक्के दक्षिण में जारी किए।



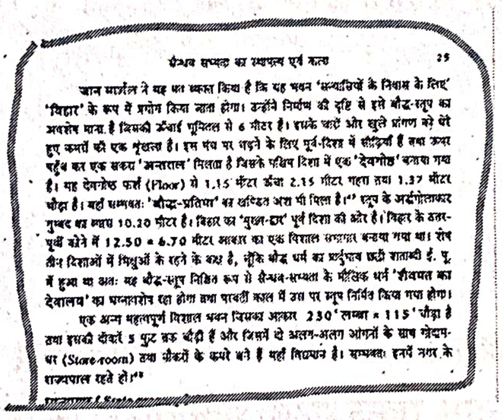
(शैलकर्तित स्थापत्य)



(सातवाहन कला)

98. अब ये मैं नहीं कह रहा हूँ कि सिंधु घाटी सभ्यता बौद्ध सभ्यता थी। ये पढ़िए कि जान मार्शल क्या कह रहे हैं? तब जान मार्शल पुरातत्व विभाग के महानिदेशक थे...मोहनजोदड़ो में खुदाई चल रही थी...जान मार्शल ने सब आँखों देखा...मोहनजोदड़ो के स्नानागार के उत्तर-पूरब में एक विशाल भवन था...मार्शल ने लिखा कि वह भिक्षुओं का विहार है...निर्माण-कला बौद्ध-चैत्य जैसा है...खुले प्रांगण...प्रांगण को घेरे हुए कमरों की श्रृंखला... पूरब दिशा में सीढ़ियाँ हैं...विहार का मुख्यद्वार पूरब की ओर है...विहार के उत्तर-पूरबी कोने पर सभागार है...शेष तीन ओर भिक्षुओं के रहने के कक्ष हैं।

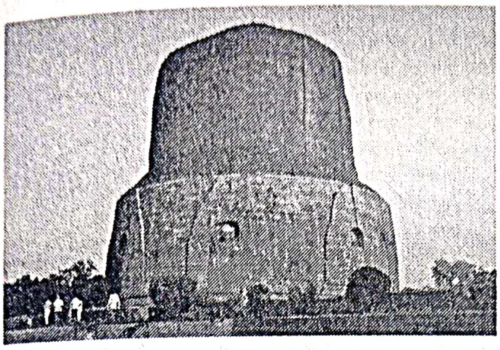
इतिहासकार बेचारे बने हुए हैं। सिंधु घाटी सभ्यता में विहार! चैत्य!! स्तूप!!! गौतम बुद्ध से पहले बौद्ध सभ्यता मान लीजिएगा, हल हो जाएगा।


सैन्धव सभ्यता का स्थापत्य एवं कला 25

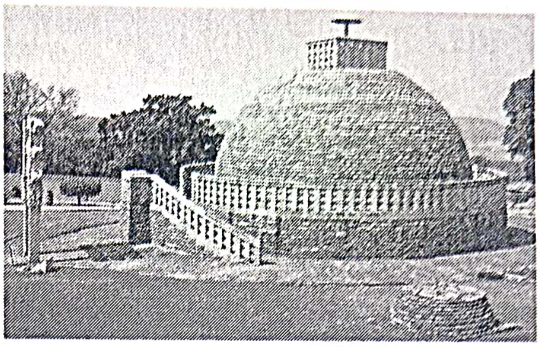
जान मार्शल ने यह मत व्यक्त किया है कि यह भवन 'सन्यासियों के निवास के लिए' 'विहार' के रूप में प्रयोग किया जाता होगा। उन्होंने निर्माण की दृष्टि से इसे बौद्ध-स्तूप का अवशेष माना है जिसकी ऊँचाई भूतल से 6 मीटर है। इसके चारों ओर खुले प्रांगण को घेरे हुए कमरों की एक शृंखला है। इस मंच पर चढ़ने के लिए पूर्व-दिशा में सीढ़ियाँ हैं तथा ऊपर पहुँच कर एक सकरा 'अन्तराल' मिलता है जिसके पश्चिम दिशा में एक 'देवगोष्ठ' बनाया गया है। यह देवगोष्ठ फर्श (Floor) से 1.15 मीटर ऊँचा 2.15 मीटर गहरा तथा 1.37 मीटर चौड़ा है। यहाँ सम्भवतः 'बौद्ध-प्रतिमा' का खण्डित अंश भी मिला है।" स्तूप के अर्द्धगोलाकार गुम्बद का व्यास 10.20 मीटर है। विहार का 'मुख्य-द्वार' पूर्व दिशा की ओर है। विहार के उत्तर-पूर्वी कोने में 12.50 × 6.70 मीटर आकार का एक विशाल सभागार बनाया गया था। शेष तीन दिशाओं में भिक्षुओं के रहने के कक्ष है, चूँकि बौद्ध धर्म का प्रादुर्भाव छठी शताब्दी ई. पू. में हुआ था अतः यह बौद्ध-स्तूप निश्चित रूप से सैन्धव-सभ्यता के मौलिक धर्म 'शैवमत का देवालय' का भग्नावशेष रहा होगा तथा परवर्ती काल में उस पर स्तूप निर्मित किया गया होगा।

एक अन्य महत्वपूर्ण विशाल भवन जिसका आकार 230' लम्बा × 115' चौड़ा है तथा इसकी दीवारें 5 फुट तक चौड़ी हैं और जिसमें दो अलग-अलग आँगनों के साथ भंडार-घर (Store-room) तथा नौकरों के कमरे बने हैं यहाँ विद्यमान हैं। सम्भवतः इनमें नगर के राज्यपाल रहते हों।"

99. संस्कृत का स्तूप मूल रूप से पालि थूप का बिगड़ा हुआ रूप है। पालि में थूप से अनेक शब्द बनते हैं जैसे थूप, थूपिका, थूपीकत, थूपारह आदि। मगर संस्कृत में स्तूप से अनेक शब्द नहीं बनेंगे। कारण कि स्तूप संस्कृत के लिए बाहरी शब्द है। किसी भी भाषा में अमूमन बाहरी शब्द बाँझ होते हैं। उनमें शब्दों को जनने की क्षमता नहीं होती है। संस्कृत के लिए स्तूप बाँझ शब्द है। इसीलिए संस्कृत का स्तूप, पालि थूप का रूपांतरण है और वे भाष्यकार जो ऋग्वेद में प्राप्त स्तूप की व्याख्या किसी अन्य अर्थ में करते हैं, वे गलत हैं।



(धमेख स्तूप)



(बौद्ध स्तूप)

100. यदि मेजर फोर्ब्स पर यकीन करें तो प्राचीन भारत का कालक्रम कुछ ऐसे बनता हैः—

आरंभिक हड़प्पा सभ्यता : 3500 ई.पू.

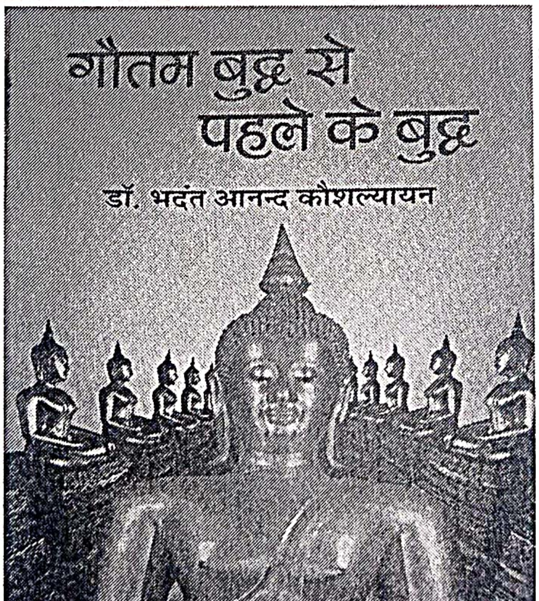
क्रकुच्छंद बुद्ध का काल : 3101 ई.पू.

कोनागमन बुद्ध का काल : 2099 ई.पू.

कस्सप बुद्ध का काल : 1014 ई. पू.

गौतम बुद्ध का काल : 563 ई. पू.

संदर्भ : जनरल ऑफ एशियाटिक सोसायटी, अंक—जून, 1836



101. अशोक ने लिखवाया स्वगम् अर्थात अपनी राह खुद चलिए, अपना दीपक खुद बनिए।

अनुवादकों ने स्वगम् का अर्थ स्वर्ग किया अर्थात लोग स्वर्ग जाएंगे।

भला एक बौद्ध राजा अपनी प्रजा को स्वर्ग भेजने का झाँसा क्यों देगा?

102. अशोक के अभिलेख में देव नहीं है, सिर्फ देवा है। संस्कृत में देवा नहीं है, सिर्फ देव है। देवा और देव में फर्क है। देव आकाशीय होते हैं, देवा धरती पर जन्मे होते हैं। बुद्ध, अर्हत आदि देवा हैं। विष्णु, इंद्र आदि देव हैं। अशोक के अभिलेख में कहीं भी देव नहीं है, सभी जगह देवा लिखा है। इसलिए अशोक के अभिलेखों का जहाँ-जहाँ देव-देवता भाष्य हुआ है, वहाँ-वहाँ बुद्ध-अर्हत पढ़ा जाना चाहिए। भाष्य की इतनी ही गड़बड़ी से अशोक बुद्ध की झोली से निकल जाते हैं।

103. देवानंपिय राजा का अर्थ "देवताओं के प्रिय राजा" नहीं होगा, बल्कि "बुद्ध के प्रिय राजा" होगा। देव नहीं, देवा लिखा है। देवानामपिय नहीं, देवानंपिय लिखा है। संस्कृत में नहीं, पालि में लिखा है। पालि में देवा का अर्थ बुद्ध होता है।

बस! भाष्य की इतनी ही गड़बड़ी से अशोक बुद्ध की झोली से निकल जाते हैं।

104. जैसे बड़े पैमाने पर बौद्ध मूर्तियों का ब्राह्मणीकरण हुआ है, जैसे बड़े पैमाने पर बौद्ध साहित्य का ब्राह्मणीकरण हुआ है, वैसे बड़े-बड़े बौद्ध राजवंशों का भी ब्राह्मणीकरण हुआ है। मिसाल के तौर पर, सातवाहन राजवंश!



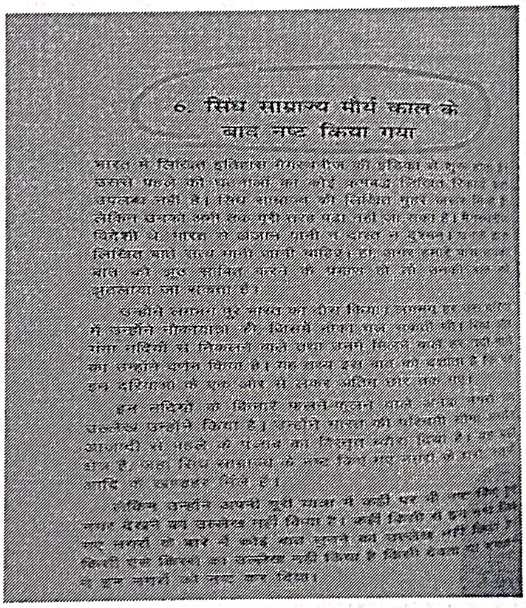
105. मान लीजिए कि 1500 ई. पू. में आर्यों का आक्रमण हुआ...सिंध साम्राज्य जीत लिया गया...और आर्य साम्राज्य स्थापित हो गया...क्या सिंध साम्राज्य के ऊपरी लेयर में आर्य साम्राज्य के निशान मिलते हैं?...क्या मंदिर मिलते हैं?...क्या संस्कृत मिलती है?...क्या शंख-चक्र-गदा-पद्म मिलते हैं?...क्या इंद्र वंश का शासन आया? क्या वरूण वंश का राज आया? नहीं।...फिर वही ढाक के तीन पाँत! मल्ल गणराज्य...शाक्य गणराज्य...कोलिय गणराज्य या फिर बड़े-बड़े साम्राज्य : नागों का शिशुनाग वंश...शूद्रों का नंद वंश...मोरियों का मौर्य वंश आदि-आदि। हो सकता है कि मौर्य साम्राज्य पर शुंगों का कब्जा ही आर्य आक्रमण हो...क्योंकि इसके बाद धीरे-धीरे आर्य-सभ्यता के तमाम निशान मिलने लगते हैं... संस्कृत...यज्ञ...मंदिर आदि-आदि।

106. जब 1500 ई. पू. में सिंधु घाटी पर आर्यों का आक्रमण नहीं हुआ...तब सिंध साम्राज्य कैसे नष्ट हुआ? बकौल कुलदीप कुमार... सिंध साम्राज्य के नगर अमूमन मौर्य काल के बाद नष्ट हुए...नगर बनते, बिगड़ते, उजड़ते रहते हैं...सिंध साम्राज्य में एकबारगी ऐसा कुछ भी नहीं हुआ।

स्ट्रैबो ने लिखा...सिकंदर ने झेलम से लेकर व्यास नदी तक 9 राष्ट्रों और 500 नगरों पर कब्जा किया...जब सिंध साम्राज्य के सभी नगर

आर्य-आक्रमण में नष्ट हो गए...तब 500 नगर सिंध-क्षेत्र में कहाँ से आए? हाँ...जब छठी सदी में ह्वेनसांग आया...तब सिंध क्षेत्र उजाड़ था...मतलब कि सिकंदर के आक्रमण से लेकर ह्वेनसांग के आगमन के बीच सिंध साम्राज्य के नगर धीरे-धीरे नष्ट हुए।

जिस रोडोफा और कालिंपक्ष का उल्लेख मेगास्थनीज ने किया है...वह वस्तुतः सिंध साम्राज्य के नगर रोहड़ांवाली और कालीबंगा है...दोनों जगहों से सिंधु सभ्यता के अवशेष और स्तूप के खंडहर मिले हैं। मेगास्थनीज ने रोडोफा और कालिंपक्ष का जो भूगोल बताया है...दूरियाँ बताई है...वह सिंध साम्राज्य के नगर रोहड़ांवाली और कालीबंगा से मेल खाती है।


6. सिंध साम्राज्य मौर्य काल के बाद नष्ट किया गया

[illegible]

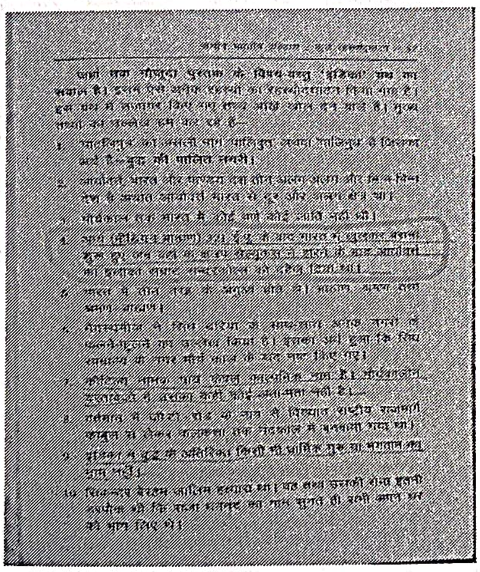
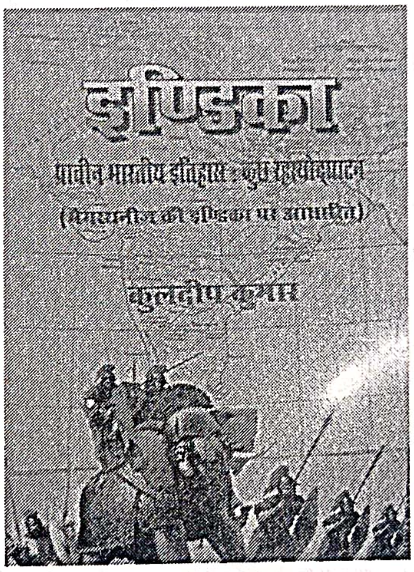
107. पुस्तक है...इण्डिका-प्राचीन भारतीय इतिहास : कुछ रहस्योद्घाटन...लेखक हैं कुलदीप कुमार...लेखक का विचार है कि 1500 ई. पू. से गौतम बुद्ध तक के काल को वैदिक युग और उत्तर वैदिक युग कहना सही नहीं है...आर्य 1500 ई. पू. में नहीं आए थे...ऐसा प्रमाण भी नहीं है...आर्य 1500 ई. पू. में घोड़ों पर बैठकर आए...आते ही सिंध साम्राज्य को नष्ट कर दिए...ये सब काल्पनिक है।

आर्य वस्तुतः 321 ई. पू. में खुलकर बसना शुरु हुए थे...उस इलाके में बसना शुरु हुए थे, जिसे सैल्यूकस ने हारने के बाद चंद्रगुप्त मौर्य को दहेज

में दिया था...वह एरियाना प्रदेश था...यहीं आर्यावर्त है...शायद इसीलिए महाभारत में आर्यावर्त के बाहर के देश को भारत कहा गया है।

लेखक ने यह भी बताया है कि सिंधु घाटी सभ्यता वास्तव में बौद्ध सभ्यता थी...जिसे इतिहासकारों ने पशुपति बताया है...वह पूर्व के बुद्ध हैं...बौद्ध परंपरा सिंधु काल से मौर्य काल तक आती है।

यदि लेखक का यह सिद्धांत स्वीकार है तो हम कह सकते हैं कि पुष्यमित्र शुंग वैदिक युग का पुनरुद्धारक नहीं था...वह वैदिक युग का संस्थापक था...यही वैदिक युग है...और वैदिक युग सही मायने में बौद्ध युग को खत्म करके आया था...वह सिंधु युग को खत्म करके नहीं आया था।

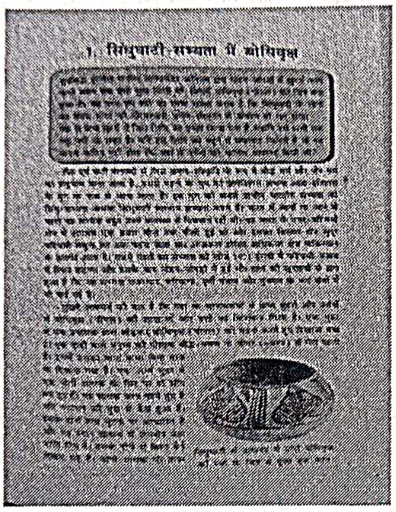



(कुलदीप कुमार लिखित पुस्तक की छाया प्रति)

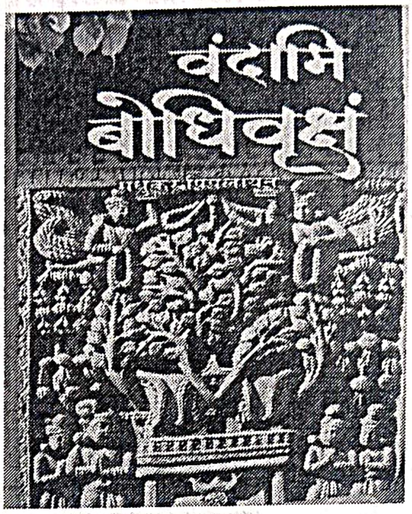
108. मेगास्थनीज ने भारत के दार्शनिकों, देवताओं, भगवानों में से सिर्फ बुद्ध का नाम लिखा है और किसी का नहीं। बुद्ध का नाम कंफर्म है, बाकी अटकलबाजी है। बुद्ध को उसने बौत लिखा है। या तो अन्य थे ही नहीं, या थे तो बुद्ध जैसे लोकप्रिय नहीं थे।

109. "वंदामि बोधिवृक्षं" नामक किताब पढ़ रहा हूँ। इसके लेखक मधुकर पिपलायन हैं। किताब का प्रथम अध्याय है—"सिंधुघाटी-सभ्यता में

बोधिवृक्ष"। लेखक ने बड़े इत्मीनान से बताया है कि सिंधुघाटी के लोग बौद्ध सभ्यता में आस्था रखते थे।

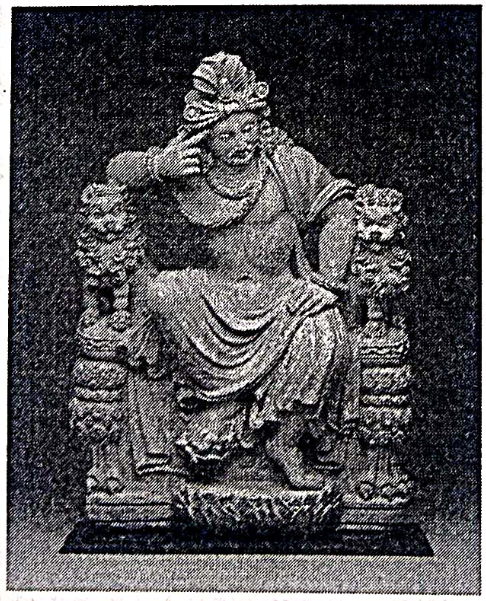


1. सिंधुघाटी सभ्यता में बोधिवृक्ष



110. जिस यूनान के सिकंदर का इतिहास में ढोल पीटा जाता है, उसी यूनान के दूत मेगास्थनीज ने बताया है कि पटना में मौर्यों के शाही महल के मुकाबले फारसी साम्राज्य के सूसा तथा एकबटान के शाही महल कुछ नहीं थे और यह वही फारसी साम्राज्य है जो सिकंदर के अपने साम्राज्य से 40 गुना बड़ा था।

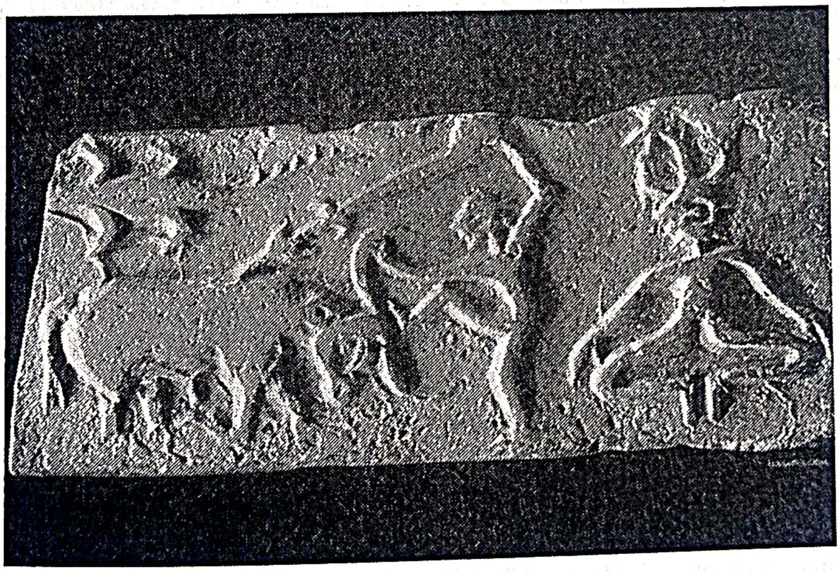
अशोक का मूल्यांकन अभी बाकी है।



(सिंहासन पर सम्राट अशोक)

111. कोने-कोने की खुदाई हो गई। गौतम बुद्ध से पहले संस्कृत मिली नहीं। ये कैसी विडम्बना है कि संस्कृत हड़प्पा काल में नहीं है, महाजनपद युग में नहीं है, नंद युग में नहीं है, मौर्य काल में नहीं है,...और इसी बीच में गौतम बुद्ध पैदा हुए थे तो वे संस्कृत और संस्कृत ग्रंथों में वर्णित सभ्यता का विरोध कैसे कर रहे थे?

112. जैसे सिखों के एक के बाद एक गुरु हुए, वैसे ही बौद्धों के भी एक के बाद एक बुद्ध हुए। जैसे सिख धर्म के गुरु एक के बाद एक पूर्ववर्ती समाज की बुराइयों को परिमार्जित करते गए, वैसे ही बौद्ध धर्म के बुद्ध भी एक के बाद एक पूर्ववर्ती समाज की बुराइयों को परिमार्जित करते गए। गौतम बुद्ध ने हड़प्पा काल से चली आ रही बलि-प्रथा का विरोध किया।



(सिंधु घाटी के एक सील पर बलि का दृश्यांकन)

113. पहला सील सिंधु घाटी की सभ्यता की खुदाई में मिला है और दूसरा सील तेल्हाड़ा बौद्ध सभ्यता की खुदाई में।

कलाएँ मरती नहीं हैं, वह युगों-युगों तक जिंदा रहती हैं और अपनी डीएनए को ढोती हैं!!!

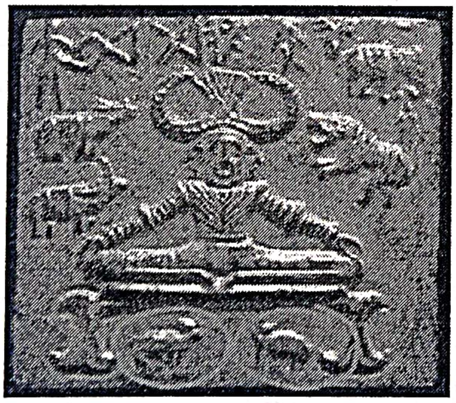


(सिंधु घाटी का सील)

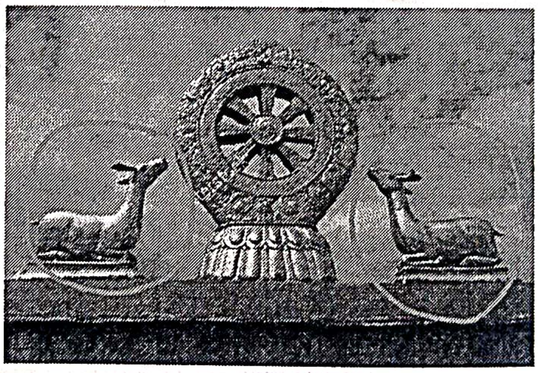


(तेल्हाड़ा का सील)

114. सिंधु घाटी सभ्यता की मुहर पर ध्यानमग्न कोई बुद्ध ही हैं, आप मूर्ति के नीचे दर्शक-मुद्रा में मौजूद दो हिरण को ध्यान से देखिए। दर्शक-मुद्रा में दो हिरण बौद्ध सभ्यता के प्रतीक हैं। आपका इतिहास तभी सीधा होगा, जब सिंधु घाटी की सभ्यता को बौद्ध सभ्यता मानिएगा। स्तूप, पीपल-पूजा, लिपि में धम्म चक्र आदि के अनेकों प्रमाण सिंधु घाटी सभ्यता में हैं।



(ध्यानमग्न मूर्ति के नीचे दो हिरण)

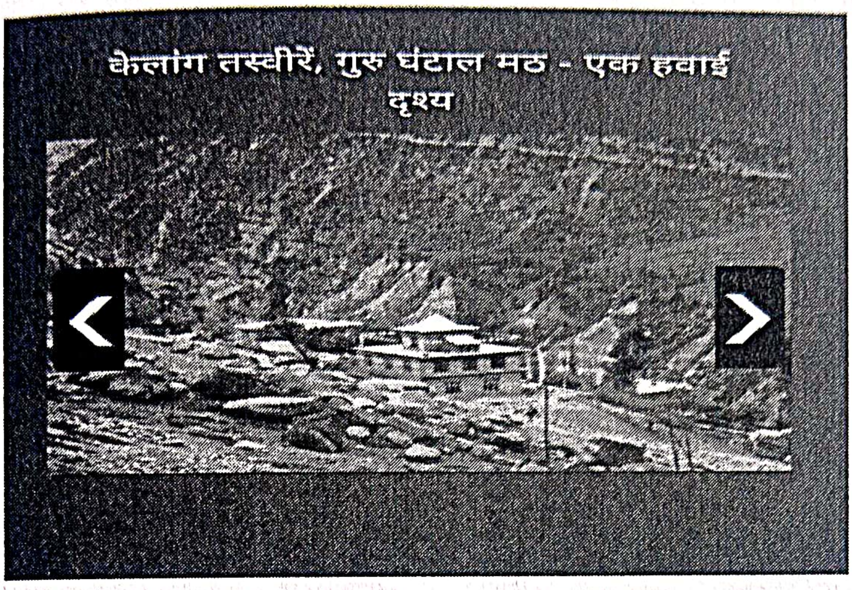


(दर्शक मुद्रा में दो हिरण)

115. एक थे बौद्ध गुरु घंटाल, कम से कम नागार्जुन के समकालीन जिनकी स्मृति में पद्मसंभव ने 8 वीं सदी में गुरु घंटाल मठ की स्थापना की थी।

बौद्ध गुरु घंटाल हिंदी में नाहक बहुत बदनाम हुए हैं—धूर्तता को लेकर, ठगी को लेकर, चालबाजी को लेकर !

गुरु घंटाल का अर्थ धूर्त किसने किया ?



116. यह तुलनात्मक तस्वीरें सिद्धार्थवर्द्धन सिंह ने भेजी है।

पहली तस्वीर सिंधु घाटी की सभ्यता में एक सील पर प्राप्त तथाकथित पशुपति की है और दूसरी तस्वीर गौतम बुद्ध के मार-बंधन की है।

यदि चित्र के प्रतीक भी संकेतों की भाषा है तो इसे गुनिए।

विचार कीजिए, क्या तथाकथित पशुपति की तस्वीर किसी बुद्ध की हो सकती है?





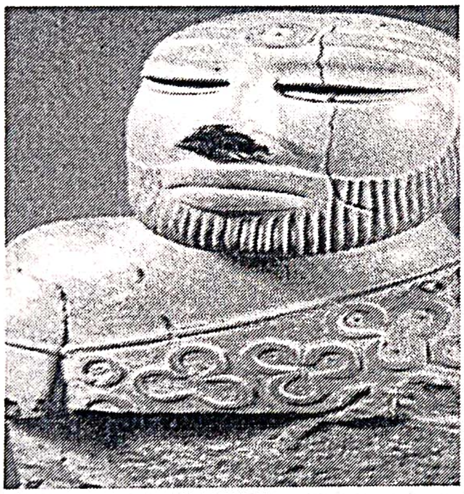
(मार-बंधन की बौद्ध-शैली)

नीचे दो मूर्तियाँ हैं। एक सिंधु काल के पुरुष की मूर्ति है तथा दूसरी मौर्य काल की यक्षिणी की मूर्ति है और दोनों मूर्तियाँ विख्यात हैं।

दोनों मूर्तियों की नाक टूटी हुई है और दोनों का एक-एक हाथ टूटा हुआ है। यह आकस्मिक हो सकता है।

मगर दोनों मूर्तियों के सिर पर जो गोलाकार शिरोभूषण है, वह आकस्मिक नहीं है, वह एक खास किस्म की सभ्यता के संकेतक है और वह सभ्यता है-बौद्ध सभ्यता।

मौर्य काल और सिंधु काल दोनों बौद्ध सभ्यता में भीगा हुआ काल है। इसीलिए दोनों काल की मूर्तियों में मौजूद गोलाकार शिरोभूषण की समानता आकस्मिक नहीं है।



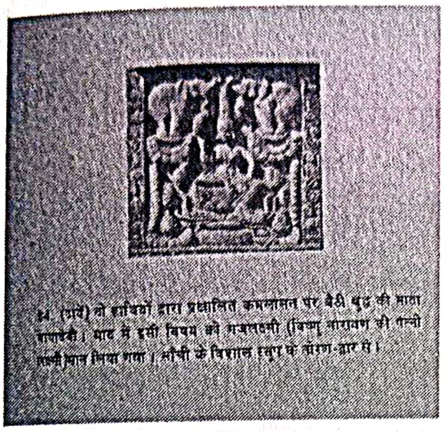
(सिंधु काल के पुरुष की मूर्ति)



(मौर्यकालीन यक्षिणी की मूर्ति)

117. इतिहासकार डी. डी. कोसंबी गणित के प्रोफेसर थे—बीएचयू में, एएमयू में, फर्ग्युसन कालेज में और अंत में टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च में। सो उन्होंने मिथक से हटते हुए 2 + 2 = 4 बता दिया।

उन्होंने बताया कि विष्णु की पत्नी गजलक्ष्मी की परिकल्पना दो हाथियों द्वारा प्रक्षालित कमलासन पर बैठी बुद्ध की माता से की गई है।



(कोसंबी की पुस्तक की प्रतिलिपि)



(भरहुत कला)

118. जिसका साम्राज्य दुनिया के 52 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला था। जिसका शासन दुनिया की 33 फीसदी आबादी पर था, यह मौर्य साम्राज्य था।

मौर्य साम्राज्य दक्षिण भारत के कुछ हिस्सों को छोड़ कर पूरे भारतीय उपमहाद्वीप पर फैला था। इसकी जनसंख्या तकरीबन 5 करोड़ थी जो उस समय संसार की कुल आबादी का 33 फीसदी हिस्सा था।

मौर्य वंश के निम्नलिखित राजा हुए–

1. चन्द्रगुप्त मौर्य, 323-298 ईसा पूर्व – (25 वर्ष)
2. बिन्दुसार, 298-273 ईसा पूर्व – (25 वर्ष)
3. अशोक, 273-232 ईसा पूर्व – (41 वर्ष)
4. दशरथ मौर्य, 232-224 ईसा पूर्व – (8 वर्ष)
5. सम्प्रति, 224-215 ईसा पूर्व – (9 वर्ष)
6. शालिसुक, 215-202 ईसा पूर्व – (13 वर्ष)
7. देववर्मन्, 202-195 ईसा पूर्व – (7 वर्ष)
8. शतधन्वन्, मौर्य 195-187 ईसा पूर्व – (8 वर्ष)

साम्राज्य का नाम–क्षेत्रफल–वो वर्ष जब सबसे ज्यादा विशाल रहा

1. मौर्य साम्राज्य–52 लाख वर्गकिलोमीटर–250 ईसवी पूर्व
2. मुगल सल्तनत–40 लाख वर्गकिलोमीटर–1690 ईसवी

3. चोल राजवंश–36 लाख वर्गकिलोमीटर–1030 इसवी

4. गुप्त साम्राज्य–35 लाख वर्गकिलोमीटर–400 ईसवी

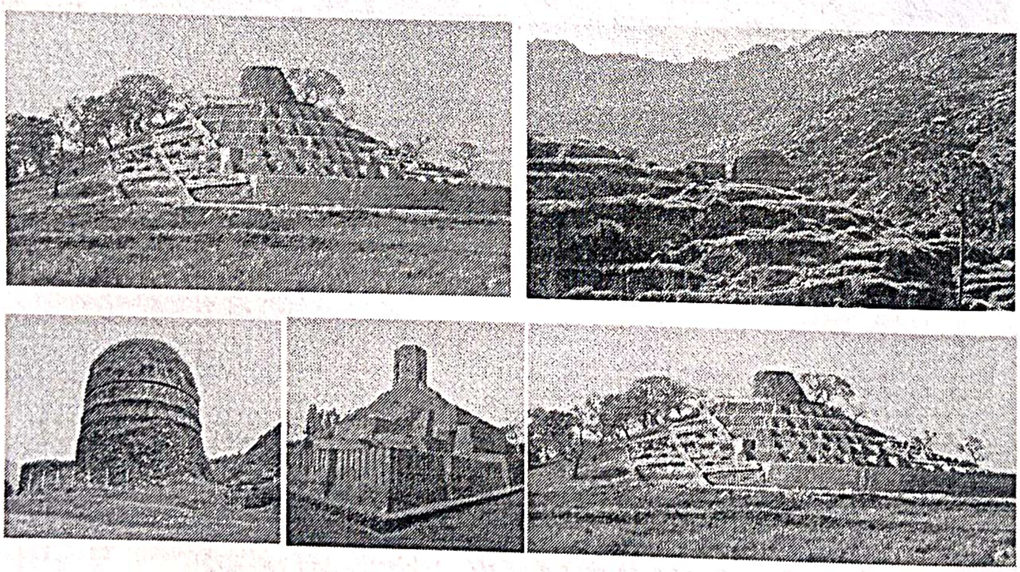
5. दिल्ली सल्तनत–32 लाख वर्गकिलोमीटर–1312 ईसवी

6. मराठा साम्राज्य–28 लाख वर्गकिलोमीटर–1760 ईसवी

7. कुषाण साम्राज्य–20 लाख वर्गकिलोमीटर–200 ईसवी

8. हर्ष साम्राज्य–10 लाख वर्गकिलोमीटर–647 ईसवी

119. कोई भी शिल्प-कला रातों-रात पैदा नहीं होती है। स्तूप-कला का भी बाकायदे विकास हुआ है। एक ही सम्राट अशोक के शासन में 84000 स्तूप खड़ा कर देना तिलिस्म है। ये कहना कितनी नादानी है कि उसके पहले एक भी स्तूप नहीं था।



(विभिन्न क्षेत्रों के विभिन्न स्तूप)

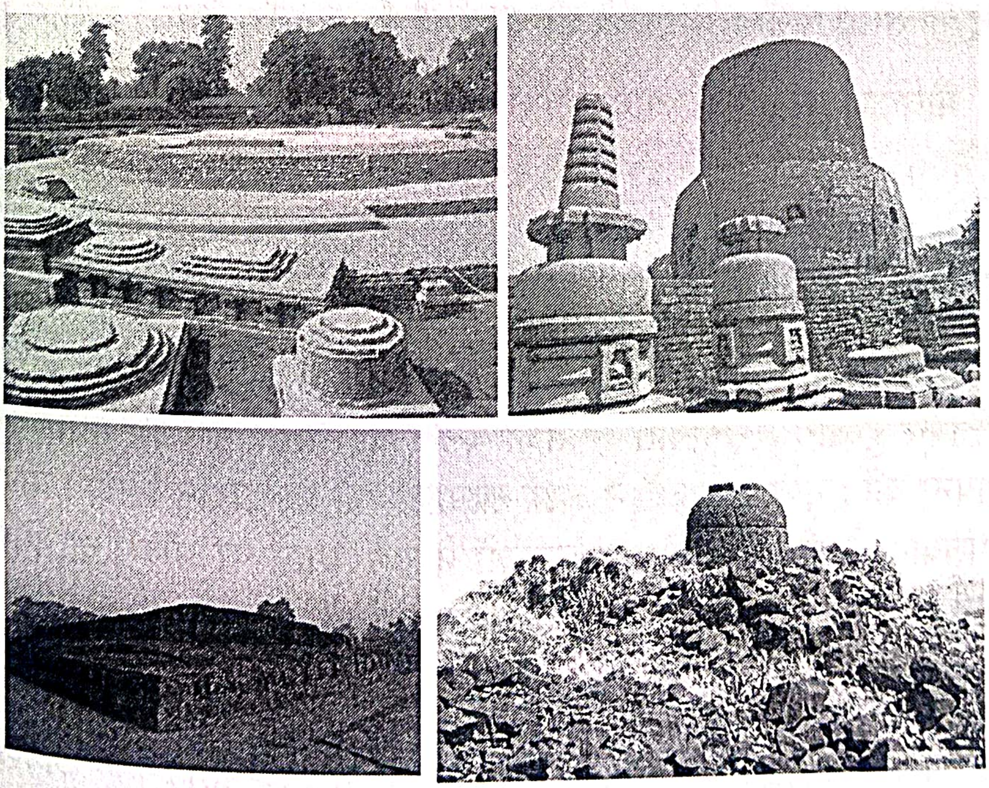
120. मिट्टी का स्तूप...पत्थर का स्तूप...ईंट का स्तूप...संगमरमर का स्तूप...मनौती स्तूप...छोटा स्तूप...मझोला स्तूप...बड़ा स्तूप...गोल स्तूप...चौकोर स्तूप...अति प्राचीन स्तूप...प्राचीन स्तूप...वेदी का स्तूप...बिना वेदी का स्तूप...सीढ़ीदार स्तूप...बिना सीढ़ी का स्तूप ! सभी अलग-अलग प्रकार

के सैकड़ों स्तूपों को इतिहासकारों ने मौर्य काल से लेकर कुषाण काल के चंद पन्नों में समेट लिया है।

जबकि इतिहास गवाह है कि सिंधु काल में भी स्तूप था और पूर्व मौर्य काल में भी स्तूप था। पिपरहवा का स्तूप मौर्य काल से पहले का है। खुद मौर्य काल में नए स्तूप बने और पूर्व मौर्य काल के कई स्तूपों की मरम्मत हुई, जिसमें निग्लिवा सागर का स्तूप भी शामिल है।

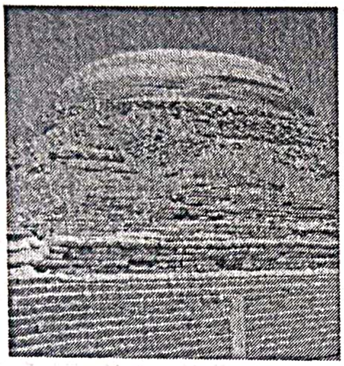
मगर एक कथा कहकर 84000 स्तूपों को सिर्फ मौर्य काल में घुसेड़ दिया जाता है। भारत और भारत के बाहर भी जो बड़े पैमाने पर स्तूप मिलते हैं, वे सभी मौर्य काल के बाद के नहीं हैं बल्कि अनेक सिंधु घाटी और मौर्य काल के बीच के भी हैं। मगर इतिहासकार गौतम बुद्ध से पहले स्तूप होने की बात सोचते ही नहीं हैं।

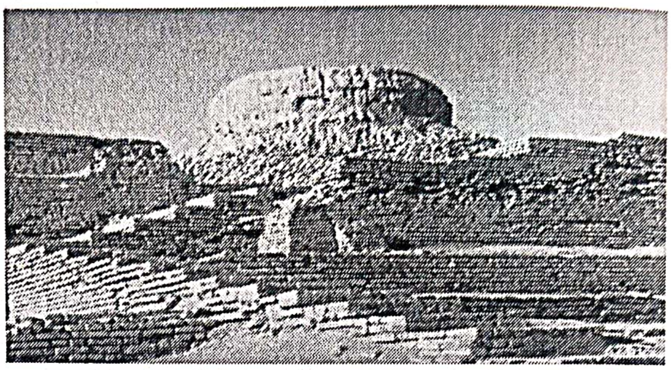
परिणामतः वे मौर्य काल से पहले के बने सभी स्तूपों को भी खींचकर मौर्य काल तथा उसके बाद लाते हैं। यदि वे ऐसा नहीं करते तो सिंधु काल से लेकर मौर्य काल तक कहीं भी स्तूपों की शृंखला नहीं टूटेगी।



(स्तूपों के विभिन्न प्रकार)

121. हड़प्पा में स्तूप मिला...मोहनजोदड़ो में स्तूप मिला...राखीगढ़ी में स्तूप मिला। सैंधव सभ्यता के कई स्थलों से स्तूप मिला। स्तूप मिला... बौद्ध सभ्यता के अनेक प्रमाण मिले। मगर गौतम बुद्ध का कोई सबूत नहीं मिला। इसलिए कि ये स्तूप गौतम बुद्ध से पहले के हैं।





(मोहनजोदड़ो स्तूप का दृश्य)

122. ईरान के शासक आर्यपुत्र डेरियस प्रथम (532-486 ई. पू.) ने जब पंजाब पर कब्जा किया, तब उसके कुछ सामंत और कर्मचारी भी प्रशासन के लिहाज से पंजाब में बस गए। आर्यों की पहली कॉलनी भारत के पंजाब में इसी समय बसी। ये ईरानी ही आर्य थे।

मौर्यकाल में भी ये आर्य सामंत और कर्मचारी बने रहे। मौर्य राजाओं ने ईरानी सामंतों और कर्मचारियों को अपनी सेवा में रखा। अशोक ने एक ईरानी सामंत तुषस्प को कठियावाड़ का शासक बनाया। धीरे-धीरे ये आर्य सामंत और कर्मचारी मजबूत होते गए।...और एक दिन एक ईरानी सामंत पुष्यमित्र ने मौर्य सम्राट बृहद्रथ से सेनापति का पद हासिल कर लिया।

फिर पुष्यमित्र सेनापति से राजा बना और भारत में आर्य-साम्राज्य की स्थापना की। गुप्त राजाओं ने आर्य-साम्राज्य को बल प्रदान किया। बाद में, सामंतवाद के दौर में विभिन्न राजवंशों ने बड़े पैमाने पर मंदिरों का निर्माण कराया। यही है भारत में आर्यों के आगमन की कहानी।

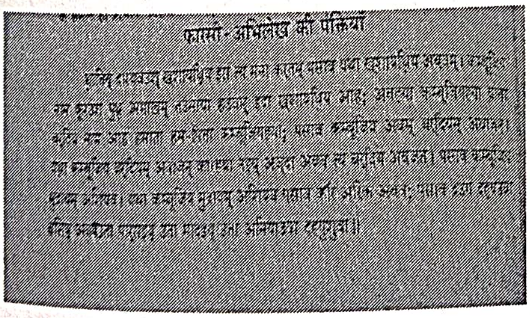
1500 ई. पू. में आर्यों के आने की बात सही नहीं है। उनके विजय की बात भी सही नहीं है। भारत का आर्यीकरण डेरियस प्रथम के समय से अर्थात छठी सदी ई. पू. से धीरे-धीरे क्रमशः हुआ।

अब संस्कृत भाषा पर आते हैं। आर्यपुत्र डेरियस प्रथम के अभिलेख और संस्कृत भाषा मिलती-जुलती है। ये जो पंजाब में आर्य सामंत और कर्मचारी डेरियस प्रथम के समय में बसे थे, उनकी भाषा भारत के लोगों से टकराकर संस्कृत में बदल रही थी। मगर उसको पूरी तरह से बदलने में समय लगा।...और आज जिस रूप में संस्कृत है, वह रूप ईसा के आसपास तैयार हुआ।

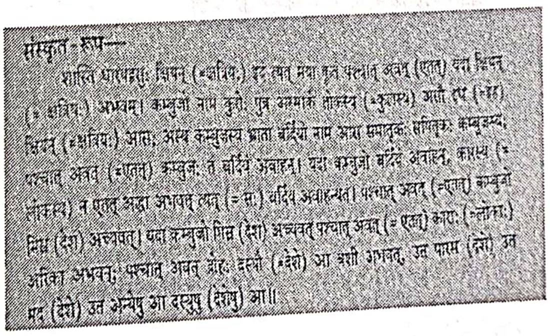
सिंधु घाटी से लेकर गौतम बुद्ध के समय तक बौद्ध सभ्यता चलती रही। कई बौद्धों ने समय-समय पर इसमें कुछ जोड़ा और घटाया। जैसे विपस्सी बुद्ध ने विपस्यना जोड़ी, गौतम बुद्ध ने मध्यमार्ग जोड़ा। बौद्ध सभ्यता धीरे-धीरे क्रमशः बढ़ती गई। फिर समय बदला और धीरे-धीरे आर्य सभ्यता आई।

इस प्रकार बौद्ध सभ्यता की इमारत पर धीरे-धीरे आर्य-सभ्यता का उदय हुआ।

123. ईरान के शासक डेरियस प्रथम (532-486 ई. पू.) के शिलालेख की भाषा (फारसी-अभिलेख) और संस्कृत भाषा का यह तुलनात्मक अध्ययन देख लीजिए। आर्य कौन थे, कब आए और संस्कृत भाषा का निर्माण कैसे हुआ, यह जानने के लिए यह देखना जरूरी है।


फारसी-अभिलेख की पंक्तियाँ

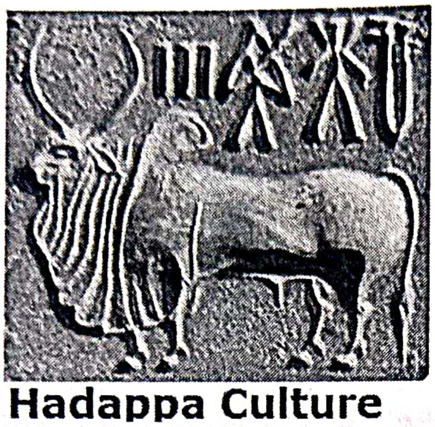
[illegible]

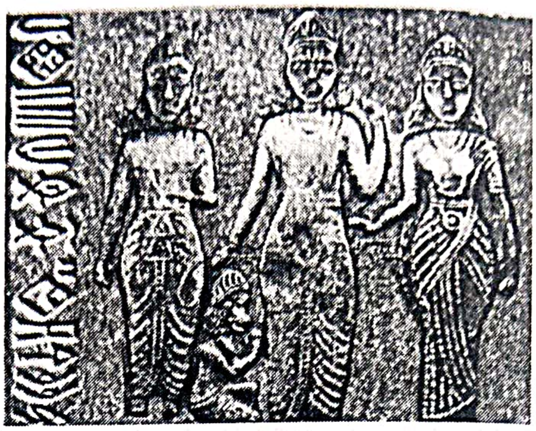

संस्कृत-रूप—

[illegible]

(फारसी अभिलेख और संस्कृत की तुलना)

124. लक्ष्मण और सीता संग राम की छाप लगी सिंधु घाटी सभ्यता का यह सील जाली है। इसलिए कि सिंधु घाटी की मुहरों पर साइड में लिखावट नहीं होती थी। सिंधु घाटी के सीलों पर लिखावट हमेशा ऊपर होती है।



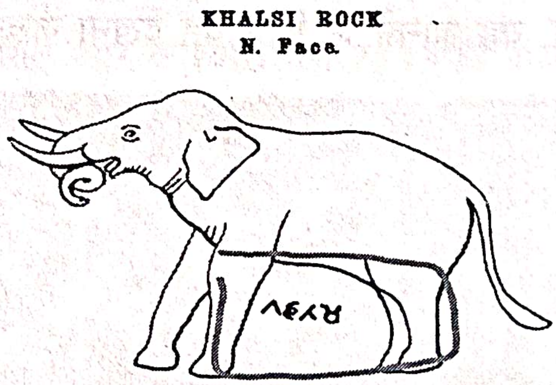


(हड़प्पाई सील) (जाली सील)

125. हाथी की पहली तस्वीर सिंधु काल की है। हाथी की दूसरी तस्वीर मौर्य काल की है। सिंधु काल में पशुओं की तस्वीर के ऊपर लिखा जाता था। मौर्य काल में पशुओं की तस्वीर के नीचे भी लिखे जाने की परंपरा बनी।

सिंधु घाटी से पशुओं की तस्वीर के नीचे लिखे जाने का प्रमाण मेरी जानकारी में अभी नहीं मिला है।





(सिंधु घाटी का हस्ती-सील) (कालसी शिलालेख पर हाथी)

126. वैदिक युग, महाकाव्य युग और सूत्र युग मूलतः इतिहास का नहीं बल्कि संस्कृत साहित्य के चैप्टर्स हैं वरना दुनिया के इतिहास में किसी देश के ऐतिहासिक चैप्टर्स के नाम बाइबिल युग, कुरान युग और हदीस युग नहीं हैं।



127. बागपत के सनौली गाँव से 4-5 हजार साल पुरानी शाही कब्रें खुदाई में मिली हैं।

जहाँ भी, किसी कोने से खुदाई में कुछ मिलता है...और वहाँ कल्पना करने का अवकाश होता है...या कहें मनमानी करने की जगह होती है... वैदिक परंपरा के इतिहासकार उसे वैदिक संस्कृति से जोड़ने एवं साबित करने के लिए जूझ पड़ते हैं।

हो सके तो वैदिक संस्कृति से काम चलाइए...मगर वैदिक सभ्यता कहना कठिन है। सभ्यता उसे कहते हैं, जिसकी खुदाई में ईंटों की...पत्थरों की तरह-तरह की बनी इमारतें मिलती हैं...भग्नावशेष मिलते हैं...औजार मिलते हैं...बर्तनें मिलते हैं...तभी हम सिंधु घाटी की सभ्यता कहते हैं।

ईंट विशेषज्ञ बताते हैं कि मौर्य काल की ईंटें लाल होती थीं...शुंग काल की ईंटें पीली-सी होती थीं...कुषाण काल की ईंटें कुछ लालिमा लिए राख जैसी होती थीं...और गुप्त काल की ईंटें बूझी-सी लाल होती थीं।

अभी हमें वैदिक सभ्यता की ईंटों के रंग का इंतजार है।


बागपत की धरती में झांकती उत्तर वैदिक संस्कृति

128. गणेश के जो 108 नाम मिलते हैं, वे हस्ती से नहीं, गज से बनते हैं जैसे गजबदन, गजानन, गजमुख आदि। वेदों में गज नहीं है, हस्ती है। अशोक के अभिलेखों में हस्ती नहीं है, गज है।



(गणेश)

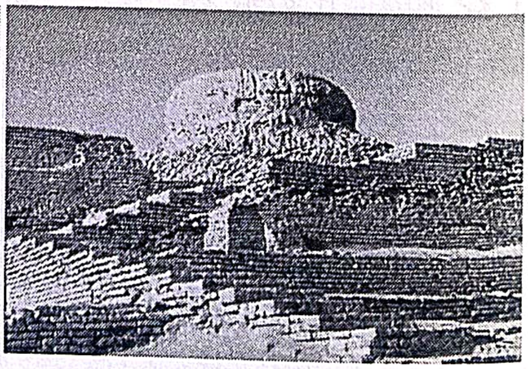
129. सिंधु घाटी सभ्यता से अनेक स्तूप मिलते हैं, मगर गौतम बुद्ध की मूर्ति एक भी नहीं मिलती है।

इसलिए कि ये स्तूप गौतम बुद्ध से पहले के बने हुए हैं। इतिहासकार गलत बता रहे हैं कि ये स्तूप कुषाण काल के हैं।

यदि ये स्तूप कुषाण काल के होते तो सिंधु घाटी की गली-गली, हर चौक-चौराहे गौतम बुद्ध की मूर्तियों से पटे होते।



(हड़प्पा स्तूप)



(मोहनजोदड़ो का स्तूप)

130. बुद्ध की ये तस्वीर और अभिलेख मुम्बई से सिद्धार्थ कसबे ने भेजी है। दाएँ से बाएँ, बाएँ से दाएँ, ऊपर से नीचे...कैसे नहीं लिखे गए

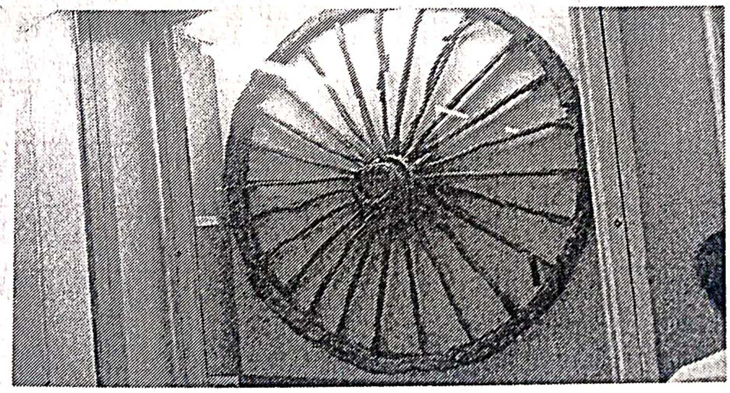
बुद्ध? अभिलेख ऊपर से नीचे लिखा गया है। अभी तक भारत के किसी भी महापुरुष का ऐसा अभिलेख प्राप्त नहीं हुआ है। बुद्ध इकलौते हैं।



मांचु लिपि में 'मांचु' (मान्जु') शब्द लिखा हुआ



131. यह तस्वीर मौर्य कालीन रथ के पहिए का है। यह पटना म्यूजियम में है। सम्राट अशोक भारत के प्रथम चक्रवर्ती थे। इसलिए चक्रवर्ती की अवधारणा और चक्रवर्ती सम्राटों का जितना भी संस्कृत साहित्य में वर्णन है, वह सब अशोक के बाद का है।



(मौर्यकालीन रथ का पहिया)

प्रथम चक्रवर्ती शासक

'चक्रवाल चक्रवर्ती' की उपाधि ग्रहण करने वाले सबसे पहले सम्राट अशोक (तीसरी शताब्दी ई.पू.) थे। अशोक ने अपने अभिलेखों में 'चक्रवर्ती' उपाधि का उल्लेख नहीं किया है। बाद के साहित्य में उनका इस रूप में वर्णन मिलता है। उस काल के बौद्ध और जैन दार्शनिकों ने 'चक्रवाल चक्रवर्ती' की अवधारणा को नैतिक कानूनों को बनाए रखने वाले राजा के साथ जोड़ दिया। धर्मनिरपेक्षता में

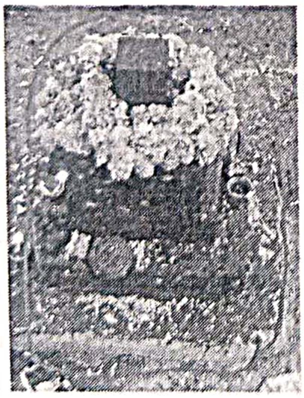
'चक्रवर्ती' को बुद्ध के समकक्ष माना जाता है, उन्हें बुद्ध के समान ही कई गुणों से जोड़ा जाता है।

132. ये मनौती स्तूप झारखंड के भदुली से प्राप्त हुए हैं। बस...कुछ ही साल तो बीते हैं। बौद्धों ने मनौती स्तूप के चौतरफा बुद्ध की मूर्ति उत्कीर्ण करा दिए। इसलिए कि बाद में ये शिवलिंग न हो जाए। फिर भी लोगों ने बता दिया कि भदुली तो भद्रकाली का रूपांतरण है।

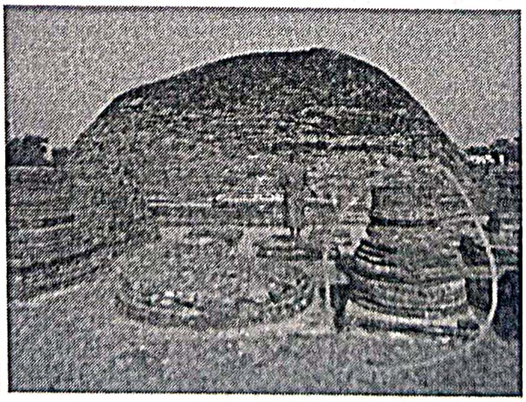


(भदुली से प्राप्त मनौती स्तूप)

133. पहली तस्वीर कपिल मौर्य ने भेजी है। यह छठ के सिरसौता या कहिए घाट की वेदी की है। दूसरी तस्वीर मौर्य काल के मनौती स्तूप की है। आपको एक जैसा लग रहा है? छठ की वेदी और मनौती स्तूप दोनों को स्थापित करने का उद्देश्य भी एक है—मनोकामना पूर्ण हो। यह संयोग कहिए कि सिरसौता या छठ की वेदी पर छठ का प्रसाद रखा है, जिस पर चक्र है। छठ हर हाल में बौद्ध पर्व है।

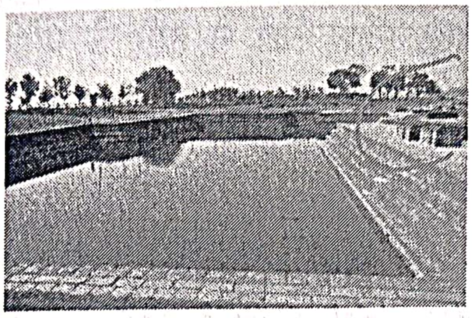


(घाट की वेदी)

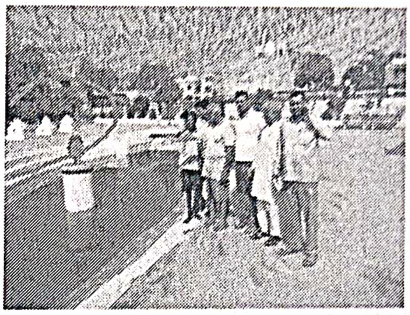


(मनौती स्तूप)

134. प्रथम तस्वीर मौर्य काल की है। तालाब के किनारे मनौती स्तूप है। दूसरी तस्वीर आधुनिक काल की है। तालाब के किनारे छठ का सिरसौता है। तालाब के किनारे के मनौती स्तूप और छठ के सिरसौता की तुलना कीजिए। यहीं से छठ का इतिहास खुलता है।



(मौर्यकालीन मनौती स्तूप)



(छठ का सिरसौता)

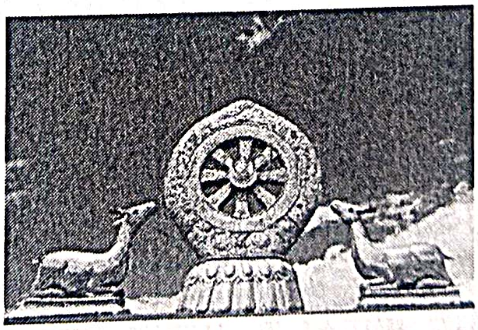
135. गौतम बुद्ध की यह मूर्ति सेनुआरियन सभ्यता से मिली है। बुद्ध की मूर्ति के ठीक नीचे ध्यान ले जाइए। दो हिरणों के बीच धम्म चक्क है। यह मंगोलियन प्रतिदर्श है। मंगोलियन प्रतिदर्श की दूसरी तस्वीर से तुलना कीजिए।

अब ऊपरी कोने की लिपि पर गौर कीजिए। लिपि ऊपर से नीचे की ओर लिखी गई है। यह भी लिपि का मंगोलियन प्रतिदर्श है।

अभी तक पुरातत्वविद, इतिहासकार और लिपि विशेषज्ञ भारत की प्राचीन लिपियों में ब्राह्मी और खरोष्ठी की चर्चा करते रहे हैं। एक बाएँ से दाएँ लिखी जाती है और दूसरी दाएँ से बाएँ लिखी जाती है। अभी तक ऊपर से नीचे की ओर लिखे जाने वाली किसी लिपि का सबूत भारत में नहीं मिला था। सेनुआरियन सभ्यता इसे तोड़ती है।



(सेनुआरियन मूर्ति)

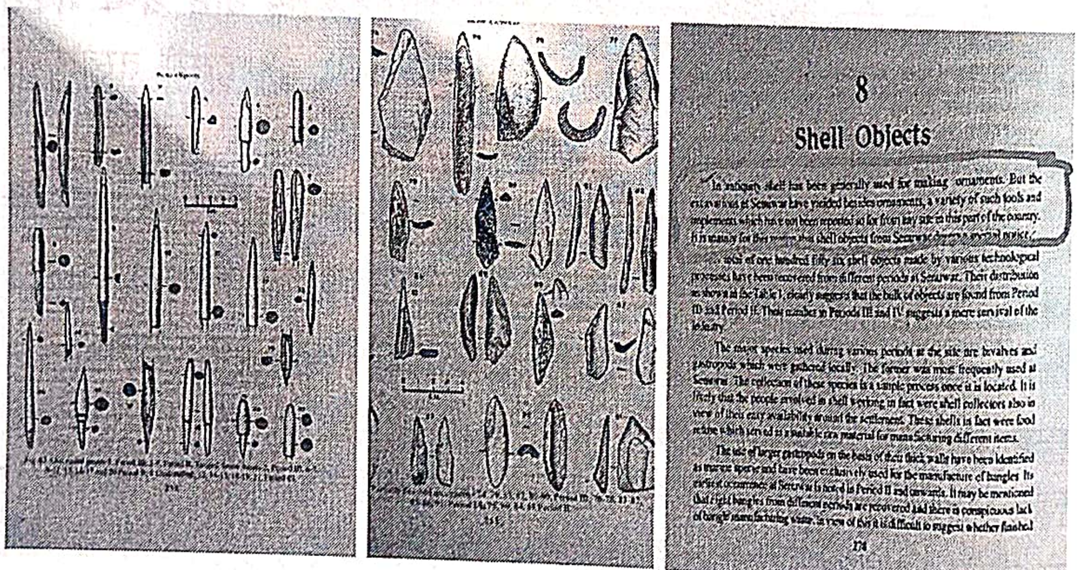


(दर्शक मुद्रा में हिरण)

136. सेनुआरियन सभ्यता की खास विशेषता शेल की बनी वस्तुएँ हैं। शेल के बने आभूषण तो कई सभ्यताओं में पाए जाते हैं। मगर शेल के बने औजार पूरे देश में सिर्फ सेनुआरियन सभ्यता में मिलते हैं। ब्लेड ऐसा कि आप आज भी उससे नाखून काट सकते हैं।

पशुपालन को जानने के लिए उत्खननकर्ताओं ने हड्डी के बने औजारों का सहारा लिया है। दाँतेदार सामान, खोदनेवाला औजार, खुरचनेवाला बोरर, एरो हेड हथियार की हड्डियाँ साबित करती हैं कि सेनुआरियन सभ्यता के लोग भैंस, गाय, बैल, बकरा, सूअर आदि का पालन करते थे।

सेनुआरियन सभ्यता की थोड़ी-बहुत खुदाई सिर्फ जमीन के तल और कहीं-कहीं थोड़ी गहरी हुई है। वरना भारत की एक विराट आदिम सभ्यता इस टीले के नीचे दफन है।



(सेनुआरियन सभ्यता पर लिखी पुस्तक के पन्ने)

137. बौद्ध साहित्य में संस्कृत बौद्ध काल में क्यों नहीं घुसी? इसलिए कि संस्कृत नहीं थी।

बौद्ध साहित्य में संस्कृत मौर्य काल में क्यों नहीं घुसी? इसलिए कि संस्कृत नहीं थी।

बौद्ध साहित्य में संस्कृत कनिष्क काल में क्यों घुसी? इसलिए कि संस्कृत थी।

138. खुदाई में सिर्फ चीजें नहीं मिलती हैं, संकेत भी मिलते हैं।

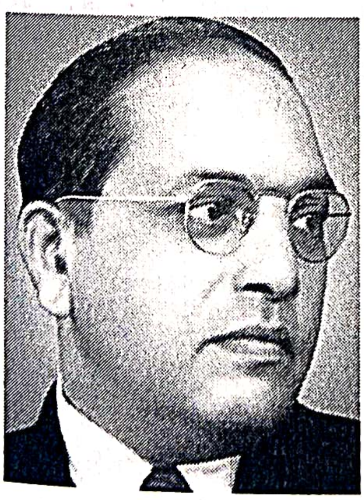
उदाहरण; इतिहासकार बताते हैं कि सिंधु घाटी सभ्यता के कालीबंगा से सूती कपड़े के प्रमाण मिले हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि कालीबंगा से सूती कपड़े मिले हैं। सूती कपड़े तो पाँच हजार साल में सड़ जाएंगे। मिलेंगे कैसे?

दरअसल कालीबंगा से मिट्टी के बरतन पर सूती कपड़े की छाप मिली है। इसी सूती कपड़े की छाप से अनुमानित किया गया है कि कालीबंगा में सूती कपड़े का प्रचलन था।

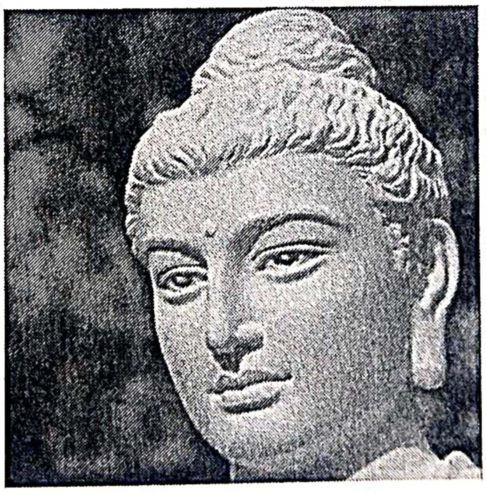
ऐसे ही यदि ठेकुए पर चक्र और पीपल के पत्ते की छाप मिलती है तो आप अनुमानित कर सकते हैं कि ये छाप किसी सभ्यता और संस्कृति के संकेतक हैं। वह सभ्यता और संस्कृति निश्चय ही बौद्धों की है।

139. बौद्ध परंपरा में दीपंकर होते हैं। आश्चर्य कि जिन लोगों ने दीपावली पर दावा ठोका, उनके यहाँ कोई दीपंकर (दीप जलानेवाला) नहीं हुए।

140. प्राचीन काल में सबसे अधिक मूर्तियाँ गौतम बुद्ध की बनीं और आधुनिक काल में डा. अंबेडकर की।



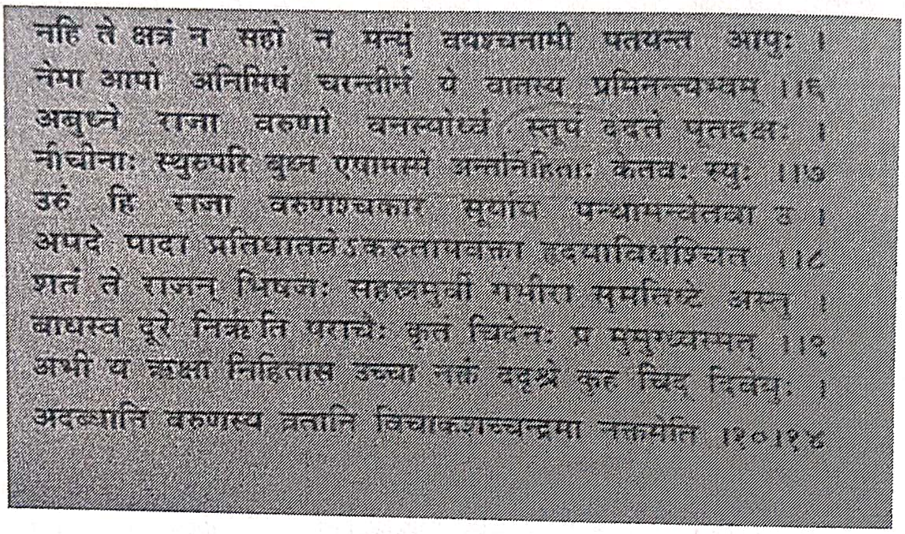
(डॉ. अंबेडकर)



(गौतम बुद्ध)

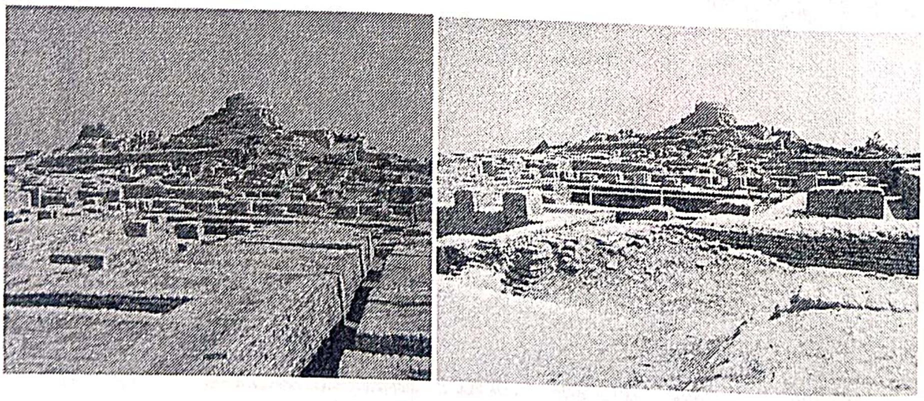
141. ऋग्वेद में स्तूप का वर्णन है, स्तूप में बुद्ध के वास का भी वर्णन है। बताइए कौन-सा पुराना है बुद्ध या वेद?

यह तो बहुत बताया जाता है कि ऋग्वेद में गंगा का एक बार और यमुना का तीन बार वर्णन है, मगर यह बहुत कम बताया जाता है कि ऋग्वेद में स्तूप का वर्णन दो बार है।


नहि ते क्षत्रं न सहो न मन्युं वयश्चनामी पतयन्त आपुः ।
नेमा आपो अनिमिषं चरन्तीर्न ये वातस्य प्रमिनन्त्यभ्वम् ॥६
अबुध्ने राजा वरुणो वनस्योर्ध्वं स्तूपं ददते पूतदक्षः ।
नीचीनाः स्थुरुपरि बुध्न एषामस्मे अन्तर्निहिताः केतवः स्युः ॥७
उरुं हि राजा वरुणश्चकार सूर्याय पन्थामन्वेतवा उ ।
अपदे पादा प्रतिधातवेऽकरुतापवक्ता हृदयाविधश्चित् ॥८
शतं ते राजन् भिषजः सहस्रमुर्वी गभीरा सुमतिष्टे अस्तु ।
बाधस्व दूरे निरृतिं पराचैः कृतं चिदेनः प्र मुमुग्ध्यस्मत् ॥९
अभी य ऋक्षा निहितास उच्चा नक्तं ददृश्रे कुह चिद् दिवेयुः ।
अदब्धानि वरुणस्य व्रतानि विचाकशच्चन्द्रमा नक्तमेति ॥१०॥२४

(ऋग्वेद में स्तूप का वर्णन)

142. पहले जो दिखाई पड़ रहा है, वह मोहनजोदड़ो का स्नानागार है और दूर वाला स्तूप है। दोनों जुड़वाँ हैं—एक ही निर्माण-सामग्री, एक ही ईंट और एक ही तल पर। आप बताइए कि स्नानागार यदि हड़प्पायुगीन है तो स्तूप क्यों नहीं? (दोनों फोटोग्राफ एक ही स्थल के हैं)



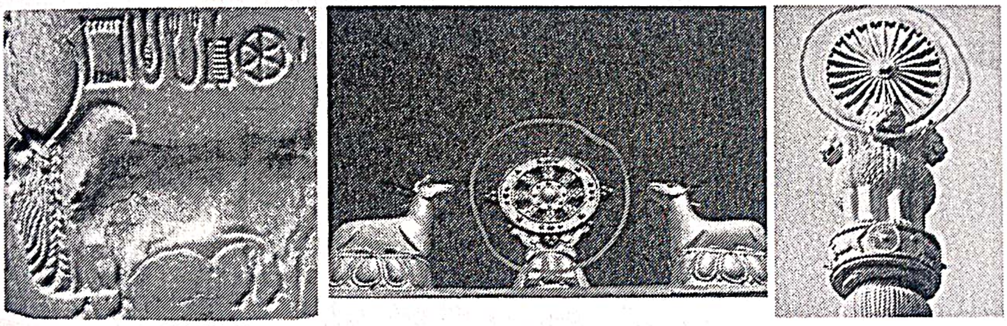
(मोहनजोदड़ो का स्तूप)

143. सिंधु घाटी की सभ्यता ने 6 तिलियों वाले धम्म चक्र का इस्तेमाल लिपि में किया था। (चित्र-1)

गौतम बुद्ध ने 8 तिलियों वाले धम्म चक्र का इस्तेमाल शिक्षा में किया था। (चित्र-2)

सम्राट अशोक ने 24 तिलियों वाले धम्म चक्र का इस्तेमाल शासन में किया था। (चित्र-3)

ऐसे ही धम्म चक्र का कदम सिंधु घाटी सभ्यता से मौर्य काल तक बढ़ते गया।



(धम्म चक्र के बढ़ते कदम)

144. पालि का एक शब्द है—ककुध। ककु अर्थात शिखर। ककुसन्ध बुद्ध इसी से संबंधित हैं। ककुध के तीन रूप है—ककुध, ककुभ और ककुद।

ककुध के तीन अर्थ प्रमुख हैं—शीर्ष, राजचिह्न और वृषभ का कूबड़। विशेषण के अर्थ में यह उत्तम पुरुष का द्योतक है—अध्यात्म के क्षेत्र में भी और सत्ता के क्षेत्र में भी।

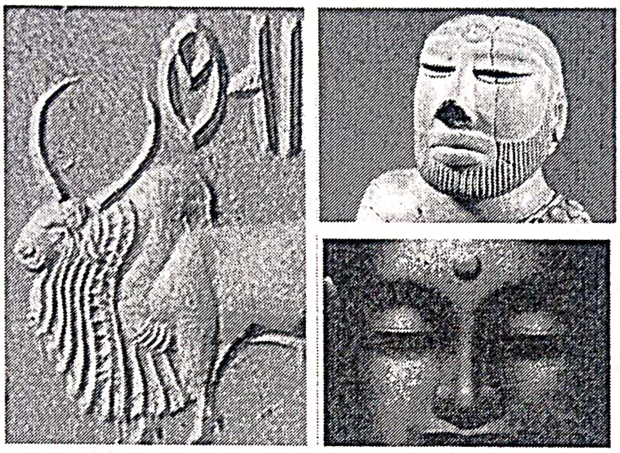
सिंधु घाटी सभ्यता में सेलखड़ी पत्थर की बनी जिस प्रतिनिधि पुरुष की मूर्ति को इतिहासकारों ने पुरोहित, नरेश या कोई शक्ति केंद्रित पुरुष की मूर्ति बताई है, उसके मस्तक पर गोल अलंकरण है, वह ककुध है।

कई सील-चित्रों पर कूबड़दार वृषभ का अंकन है और जिनके बारे में इतिहासकारों की राय है कि उनकी पूजा होती होगी, उनकी पीठ के शीर्ष भाग पर ककुध है।

गौतम बुद्ध के मस्तक पर जो उठी हुई गोलाई है, यदि आप उसे टीका या मांसपिंड समझते हैं तो यह गलतफहमी है।

बौद्ध मत में इसे ककुध कहा जाता है।

ककुध की परंपरा सिंधु घाटी सभ्यता को बौद्ध सभ्यता से जोड़ती है।



(ककुध के विभिन्न रूप)

145. मगहर में मरने पर जीव नरक को जाएगा। इसलिए कि मगहर बौद्ध क्षेत्र था। कबीर ने इस मिथक को तोड़ा। हर दृष्टि कबीर नहीं होती!

विख्यात जनकवि और दार्शनिक महात्मा
कबीर के नाम पर बनाये गए जिले संत
कबीर नगर का मगहर क़स्बा कबीर का
पर्याय होने के साथ कहीं न कहीं तथागत
बुद्ध और महायोगी योगी गोरख के
पदचिन्हों का भी गवाह है| इसके अलावा
भी अगर ध्यान दिया जाए तो इसके आस-
पास का पूरा इलाक़ा बौद्धकालीन संस्कृति
का गवाह है| यहीं के लहुरादेवा में
सिंधुकालीन सभ्यता के समकालीन
अवशेष दिखते हैं और जनकथाएँ कहती हैं
कि बुद्ध ने यही के चकदही स्थित खुदवा

146. पृथ्वी से 5000 प्रकाश वर्ष दूर किसी ग्रह पर यदि कोई सभ्यता है तो वहाँ के लोग सिंधु घाटी सभ्यता को अभी इसी वक्त जिंदा देख रहे होंगे।

कारण कि ऐसे ग्रह पर सिंधु घाटी सभ्यता की सारी हलचलों के बिंब-दृश्य अभी इसी वक्त यानि 5000 साल बाद वहाँ पहुँच रहे होंगे।

जहाँ तक दुनिया का मनुष्य सोच सकता है, वहाँ तक उसका कार्य-रूप संभव है।

147. वैशाखनंदन कौन है? वही बुद्ध, जिनका जन्म, ज्ञान परिनिर्वाण-वैशाख में हुआ था।

गधा को वैशाखनंदन बुद्ध को अपमानित करने के लिए कहा गया है।

प्रमाण यह कि संस्कृत में वैशाखनंदन को देवानांप्रिय भी कहा जाता है।

वैशाखनंदन (बुद्ध), देवानांप्रिय (अशोक) और बुद्धू (बौद्ध)—इन तीनों का एक अर्थ मूर्ख, बौद्ध विरोधियों ने किए हैं।

मृणाल पांडे का तर्क है कि संस्कृत में 'वैशाखनंदन' को देवानांप्रिय भी कहते हैं,

148. यदि मौर्य साम्राज्य का पतन बौद्ध-नीति के कारण हुआ होता तो अशोक के समय में ही इसका पतन हो जाना चाहिए था, मगर इसका उल्टा हुआ। अशोक के समय में ही मौर्य साम्राज्य सबसे अधिक फला-फूला।

इसका मतलब यह हुआ कि अशोक की बौद्ध-नीति से मौर्य साम्राज्य का पतन नहीं हुआ।

अशोक के उत्तराधिकारियों में से कई ने बौद्ध नीति का परित्याग किया। इसलिए मौर्य साम्राज्य कमजोर हुआ। रायचौधरी, मजूमदार एवं डा. भंडारकर जैसे ब्राह्मणवादी इतिहासकारों ने बौद्ध धर्म को बेइज्जत करने के लिए कहा है कि मौर्य साम्राज्य का पतन बौद्ध नीति के कारण हुआ है।

मौर्य साम्राज्य का पतन बौद्ध नीति को अपनाने से नहीं बल्कि त्यागने से हुआ था।

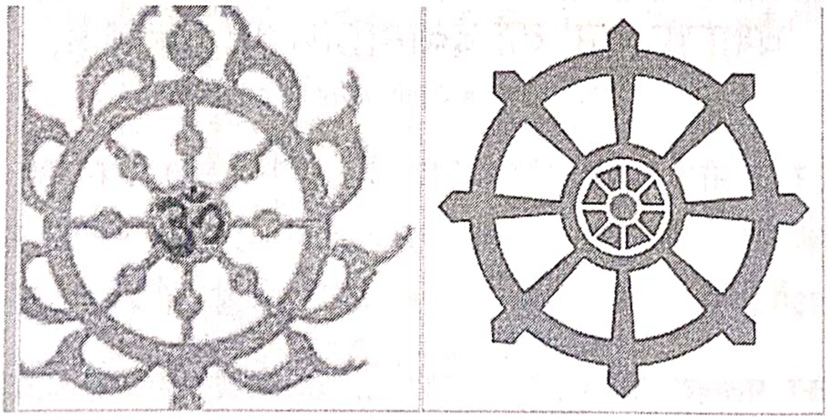
149. वेदों में जो स्तूप का विवरण है, रामायण में जो चैत्यों का विवरण है, आखिर वे किस सभ्यता के प्रतीक हैं, जबकि माना जाता है कि बौद्ध सभ्यता से वैदिक सभ्यता प्राचीन है।

150. डा. एम.एन. बसु ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "माडर्न बुद्धिज्म" में बताया है कि शंख और कुछ नहीं बल्कि संघ का प्रतीक रूपांतरण है।

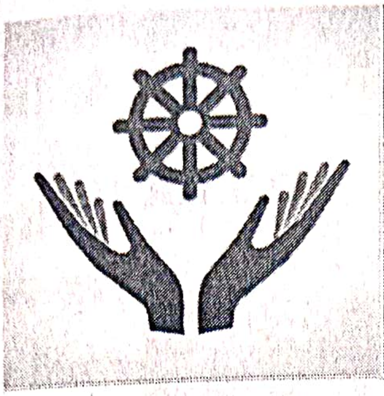
संघ (सङ्घ) का रूपांतरण शंख (सङ्ख) है, ये तो बसु ही बताएंगे, मगर धम्म चक्क का रूपांतरण सुदर्शन चक्र है, ये भाषार्थ साबित करता है।

धम्म का मतलब क्या-अच्छा दर्शन, अच्छी फिलासफी और सुदर्शन का मतलब क्या-अच्छा दर्शन, अच्छी फिलासफी।

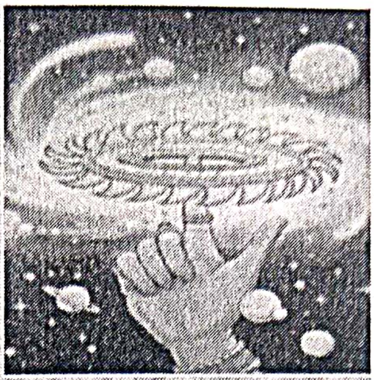
इसलिए भाषार्थ की दृष्टि से धम्म चक्क का रूपांतरण सुदर्शन चक्र है !!!



151. बौद्ध संस्कृति ने चक्र का इस्तेमाल शांति के लिए किया और युद्ध संस्कृति ने चक्र का इस्तेमाल युद्ध के लिए किया।



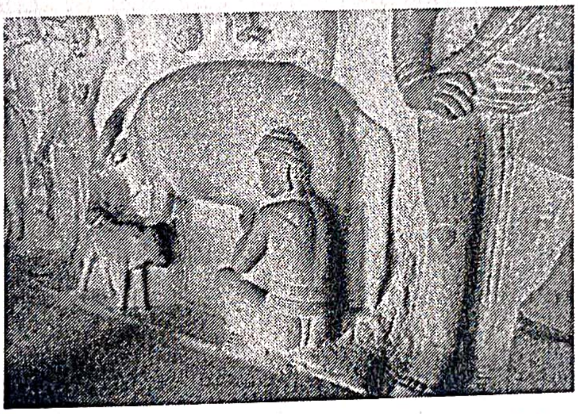
(धम्म चक्र)



(सुदर्शन चक्र)

152. ये पत्थर पर बने चित्र मामल्लापुरम का है। हजार साल पहले का है। दूध दुहने वाले भी बौद्ध थे। देखते नहीं, दूध दुहने वाले के सिर के घुँघराले बाल! ये लंबे कान!! मानों बुद्ध ही दूध दुह रहे हों।

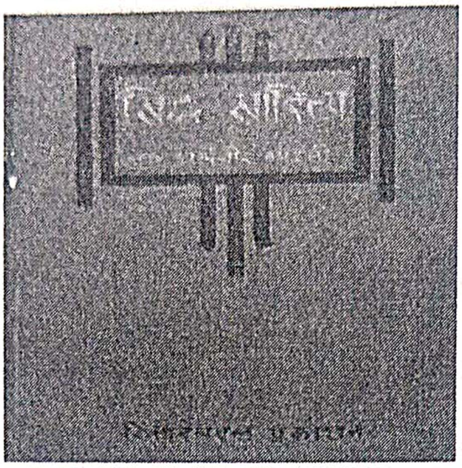
एक आप हैं कि श्रमजीवी में बौद्धों को मानते ही नहीं हैं?



(मामल्लापुरम में उकेरे गए चित्र)

153. धर्मवीर भारती ने अपना रिसर्च सिद्ध साहित्य पर किया था। यह रिसर्च 1955 में किताब महल, प्रयाग से छपा। उन्होंने रिसर्च में लिखा है कि जयदेव के समय में अर्थात 1200 ई. के आसपास गौतम बुद्ध को विष्णु के अवतारों में शामिल किया गया था।

निष्कर्ष यह कि जिन-जिन ग्रंथों में गौतम बुद्ध को विष्णु का अवतार बताया गया है, वे सभी ग्रंथ 1200 ई. के बाद के हैं या यह प्रसंग 1200 ई. के बाद जोड़े गए हैं।



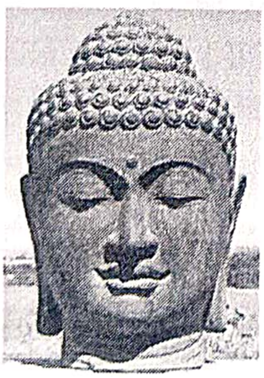
(सिद्ध साहित्य का कवर)

154. बुद्ध को विष्णु का अवतार इसलिए बताया गया कि विष्णु को बुद्ध से प्राचीन साबित किया जा सके, जबकि साबित-सी बात है कि खुद वैष्णव धर्म ही बौद्ध महायान से प्रभावित है।

155. वैदिक संस्कृत पश्चिम से आई, भारत में आकर वह संस्कृत बनी, फिर वह दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों में फैली। इसीलिए हमें दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों में वैदिक संस्कृत के प्रमाण नहीं मिलते हैं। दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों में हमें संस्कृत के प्रमाण मिलते हैं। ये प्रमाण प्राचीनता के दृष्टिकोण से अधिक से अधिक ईसा की दूसरी से तीसरी सदी तक के हैं।

156. यदि बुद्ध के अहिंसा-सिद्धांत से देश गुलाम हुआ तो गाँधी के अहिंसा-सिद्धांत से देश आजाद कैसे हुआ?

इतिहासकार मुँह देखकर फैसला सुना देते हैं।



(गौतम बुद्ध)



(महात्मा गाँधी)

157. 1826 में मैसन ने पहली बार हड़प्पा में बौद्ध स्तूप ही देखा था, बर्नेस (1831) और कनिंघम (1853) ने भी। राखालदास बंदोपाध्याय ने भी 1922 में बौद्ध स्तूप की खुदाई में ही सिंधु घाटी की सभ्यता की खोज की थी। राखीगढ़ तो हाल की घटना है, वहाँ भी सिंधु घाटी की सभ्यता बौद्ध स्तूप की खुदाई में ही मिली है—सिंधु घाटी सभ्यता का विशाल स्थल!

इसलिए सिंधु घाटी की सभ्यता की खुदाई में बौद्ध स्तूप नहीं मिला है बल्कि बौद्ध स्तूप की खुदाई में सिंधु घाटी की सभ्यता मिली है।

मगर इतिहासकारों को सिंधु घाटी की सभ्यता के इतिहास को ऐसे लिखने में जाने क्या परेशानी है, जबकि सच यही है कि सिंधु घाटी की सभ्यता बौद्ध सभ्यता है।

158. गौतम बुद्ध ने वैदिक साहित्य का विरोध नहीं किया था बल्कि वैदिक साहित्य ही गौतम बुद्ध के विरोध में लिखा गया है।

159. बुद्ध की शिक्षाओं को सिद्धांत क्यों कहा जाता है, अन्य देवी-देवताओं के धर्मोपदेश को सिद्धांत क्यों नहीं कहा जाता है?

160. आप्त से, आस्था करके ज्ञान प्राप्त करना वेद है। विवेक से, विवेचन-पद्धति से ज्ञान प्राप्त करना थेर है। ग्रीक के शब्द थॅओरॅओ का संस्कृत में कोई प्रतिरूप नहीं है, पालि में है, वह है थेर, थेरवाद।

ग्रीक में क्रिया है—थॅओरॅओ अर्थात देखना, चिंतन करना। थॅओरेम का अर्थ है—चिंतन का विषय, चिंतन का निष्कर्ष अर्थात सिद्धांत। अंग्रेजी थ्योरी (सिद्धांत) का आधार यही क्रिया है।

आपने बुद्ध का सिद्धांत सुना होगा, क्या विष्णु का सुना है?



BBC Doc Proves Jesus Was A Buddhist Monk Named Issa Who Spent 16+ Years In India & Tibet

BY BRENT LAMBERT • JANUARY 19, 2017 • BOOKS, HISTORY, INSPIRATION, SPIRITUALITY • COMMENTS (0) • ♡349712

161. अर = चक्र की तीली।

अरि = चक्र।

अरिय = चक्र से संबंधित।

अरिय धम्म = चक्र से संबंधित धर्म।

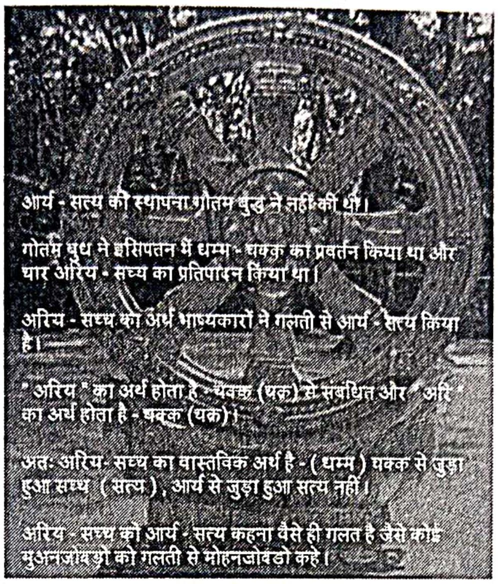
अरिय मग्ग = चक्र से संबंधित मार्ग।

अरिय सच्च = चक्र से संबंधित सत्य।

धम्म चक्क पवत्तन का चक्क (चक्र) इसी अरिय मग्ग और अरिय सच्च से जुड़ा है।

इतिहासकार और भाषावैज्ञानिकों ने अरिय मग्ग और अरिय सच्च का जो भाष्य आर्य मार्ग और आर्य सत्य के रूप में किया है, वह गलत है। पालि में आर्य के लिए अलग शब्द है, वह है-अय्य। आर्य को पालि में "अय्य" कहा जाता है, "अरिय" नहीं।

अरिय और अय्य दोनों अलग-अलग रूट के शब्द हैं जिसका घालमेल हो गया है।



(धम्म-चक्क)

162. यदि बौद्ध धर्म का उदय वैदिक धर्म की प्रतिक्रिया में हुआ था तो इसका उदय पश्चिमोत्तर भारत में होना चाहिए था। पश्चिमोत्तर भारत में वैदिक धर्म का प्रभाव अधिक था और आगे भी रहा।

मगर उलटा हुआ। बौद्ध धर्म का उदय पूर्वी भारत में हुआ, जहाँ वैदिक प्रभाव कम था।

163. सोलह देशों के 127 सैन्य अफसरों ने जिस बुद्ध को नमन किया तो आप कैसे कहते हैं कि बुद्ध को अपनाने से सैन्य शक्ति कमजोर हो जाएगी या सम्राट अशोक ने बौद्ध धर्म अपनाकर अपनी सैन्य शक्ति को कमजोर किया?



सोलह देशों के सैन्य अफसरों की टीम ने किया बुद्ध को नमन

164. मुअनजोदड़ो अर्थात मुर्दों का टीला और कंकाली टीला अर्थात कंकालों का टीला।

मुअनजोदड़ो में सिंधुजन दफन हुए तो मथुरा के कनिष्ककालीन कंकाली टीले में किनके कंकाल रहे होंगे?

कनिष्क की सिर कटी मूर्तियाँ ऐसे ही हैं या उसका कोई मायने है?



(कनिष्ठ की सिर कटी मूर्ति)

165. बुद्ध ही बुत है, बुद्ध ही भूत हैं, इसीलिए कहा जाता है कि पीपल (बोधिवृक्ष) में भूत बसते हैं।

भूत काल अर्थात बुद्ध काल!!!

166. श्रमण बनाम ब्राह्मण संस्कृति की लड़ाई शब्दों की तलवार से भी लड़ी गई है।

पालि में भद्द का अर्थ आदरणीय होता है। इसीलिए गौतम बुद्ध की पत्नी को भद्द कच्चाना कहा जाता था।

भद्द का विस्तृत रूप भदन्त और संक्षिप्त रूप भन्ते है। हिंदी का भद्दा और भोंदू इसी भद्द से बदनाम हुए शब्द हैं।

जैसे मूर्ख के अर्थ में बुद्ध से बुद्धू बना, वैसे सीधा-सादा बेवकूफ के अर्थ में भद्द से भोंदू बना।

167. लोक का लिखा इतिहास मौखिक होता है, मगर झूठ नहीं बोलता!

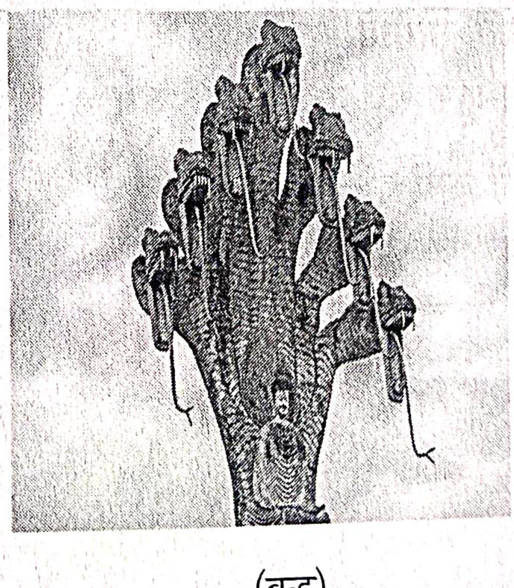
श्रमण परंपरा का प्रतीक मठ है और ब्राह्मण परंपरा का प्रतीक मंदिर है। कबीर के नाम पर कबीर-मठ मिलते हैं और तुलसी के नाम पर तुलसी-मंदिर मिलते हैं। इसके विपरीत कबीर के मंदिर नहीं मिलते और तुलसी के मठ नहीं मिलते। लोक खुद इतिहासकार होता है।

रही बात शंकराचार्य की। शंकराचार्य ने मंदिर नहीं मठ बनवाए थे। इसलिए कि शंकराचार्य खुद प्रच्छन्न बौद्ध थे।

168. अवतारना का मूल अर्थ है—उतारना, नकल करना, कापी करना। अवतार किसी चीज की कॉपी है, नकल है। जब हम किसी दूसरे के कथन या लेख को ज्यों का त्यों ले लेते हैं तो उसे अवतरण कहते हैं। ये दूसरे से कापी की गई सामग्री को अवतरण-चिह्न (" ") में रखते हैं। यह लेखन की मर्यादा है। यदि कोई मूर्तिकार किसी मूर्ति की कॉपी करता है तो उसे बताना चाहिए कि कॉपी कहाँ से की गई है। यह मूर्तिकला की मर्यादा है।



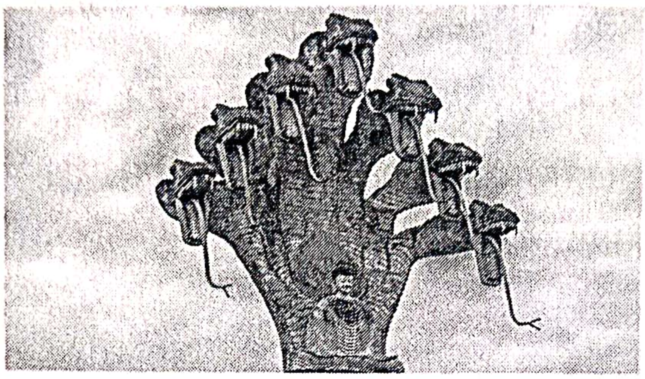
(विष्णु)



(बुद्ध)

169. अभी कुछेक दिन पहले ओडिशा के खुर्दा जिले के गोविंदपुर गाँव में 1400 साल पुरानी गौतम बुद्ध की प्रतिमा मिली है। 5 फीट की इस प्रतिमा का 80 % भाग जमीन में गड़ा हुआ था। प्रतिमा की खासियत यह

है कि एक सात फन वाला नाग गौतम बुद्ध की मूर्ति का रक्षक है। यदि मूर्तिकला के प्रतीकात्मक अर्थ में विश्वास है तो आप कह सकते हैं कि नाग राजाओं ने बौद्ध धर्म की सुरक्षा की।

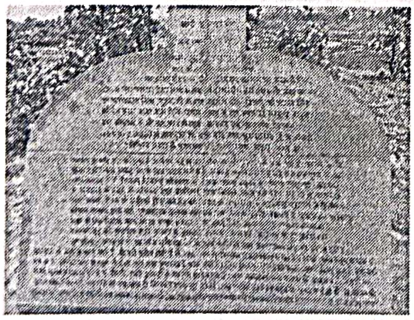


भगवान बुद्ध के सिर पर 7 मुंह वाले नाग की प्रतिमा भुवनेश्वर के उत्कल विश्वविद्यालय के एक विद्यार्थी ने ओडिशा के खुर्दा जिले के गोविंदपुर से खोजी है। माना जा रहा है कि भगवान बुद्ध की खोजी गई यह 1400 वर्ष पुरानी प्रतिमा 5 फिट की है, पर जब इस प्रतिमा को देखा गया था

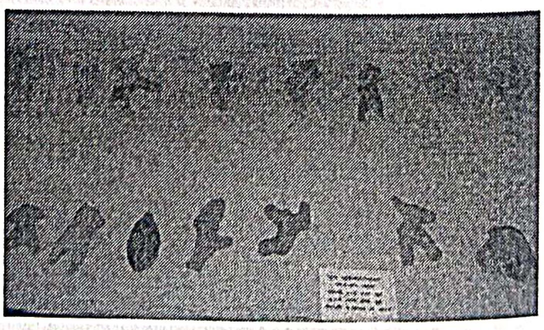
170. पहला बोर्ड पुरातत्व विभाग का है, जिसमें देउर कोठार के स्तूपों के बारे में बताया गया है कि ये मौर्य-शुंग राजाओं की देन है।

दूसरी सामग्री गया म्यूजियम की है, जिसमें मिट्टी की बनी वस्तुओं को मौर्य-शुंग राजाओं की देन बताया गया है।

जानें क्यों इतिहासकार मौर्य-शुंग राजाओं को एक साथ जोड़कर एक लेवल पर ला देते हैं? कहाँ मौर्य, कहाँ शुंग? दोनों विपरीत सांस्कृतिक धाराओं के वंश थे। ये जोड़ी कुछ जमती नहीं है।



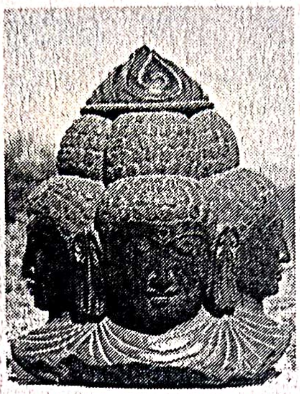
(देउर कोठर का बोर्ड)

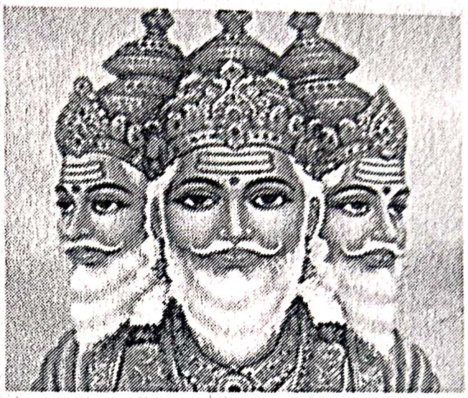


(गया म्यूजियम में रखी वस्तुएँ)

171. सम्राट अशोक के सिंहचतुर्मुख ने सबसे पहले बौद्ध कला को प्रभावित किया और गौतम बुद्ध की चार मुख वाली मूर्ति को जन्म दिया, फिर ब्रह्मा के चार मुख की परिकल्पना की गई।







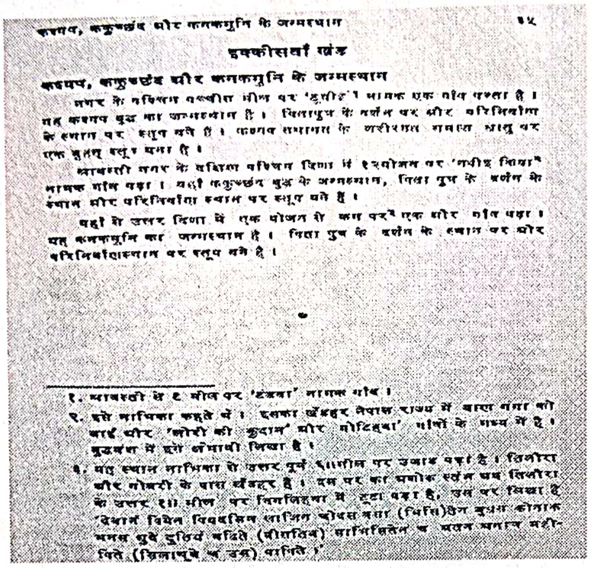
172. स्वपन कुमार बिस्वास ने पूरे विश्वास के साथ अनेक पुरातात्विक प्रमाण, देशी-विदेशी विद्वानों का संदर्भ देकर डंके की चोट पर लिखा है कि सिंधु घाटी की सभ्यता शत-प्रतिशत बौद्ध सभ्यता थी।



173. कश्यप बुद्ध, ककुच्छंद बुद्ध और कनकमुनि बुद्ध के जन्मस्थान पर जाने का यात्रा-विवरण फाहियान ने अपनी पुस्तक के इक्कीसवें खंड में लिखा है।

आप भी पढ़िए, गौतम बुद्ध से पहले भी बुद्ध हुए हैं और यदि हुए हैं तो बौद्ध सभ्यता का पिछला छोर पीछे कहाँ तक जाएगा?

अमूमन 28 बुद्ध माने जाते हैं। एक बुद्ध का कार्य-काल यदि 50 साल भी मानें तो 28 बुद्ध का 1400 साल हुए। अब गौतम बुद्ध के कार्य-काल से 1400 साल पीछे की ओर जाइए तो कहाँ पहुँचिएगा ? वही सिंधु घाटी सभ्यता में!


कश्यप, ककुच्छंद और कनकमुनि के जन्मस्थान १५

इक्कीसवाँ खंड

कश्यप, ककुच्छंद और कनकमुनि के जन्मस्थान

नगर के पश्चिम पचास ली पर 'तुवाइ'[१] नामक एक गाँव पड़ता है। यह कश्यप बुद्ध का जन्मस्थान है। पिता-पुत्र के दर्शन पर और परिनिर्वाण के स्थान पर स्तूप बने हैं। कश्यप तथागत के शरीरावशेष समस्त धातु पर एक बृहत् स्तूप बना है।

श्रावस्ती नगर के दक्षिण पश्चिम दिशा में १२ योजन पर 'नपीक'[२] नामक गाँव पड़ा। यहाँ ककुच्छंद बुद्ध के जन्मस्थान, पिता पुत्र के दर्शन के स्थान और परिनिर्वाण स्थान पर स्तूप बने हैं।

यहाँ से उत्तर दिशा में एक योजन से कम पर[३] एक और गाँव पड़ा। यह कनकमुनि का जन्मस्थान है। पिता पुत्र के दर्शन के स्थान पर और परिनिर्वाणस्थान पर स्तूप बने हैं।

१. श्रावस्ती से ९ मील पर 'टंडवा' नामक गाँव।
२. इसे नाभिका कहते थे। इसका खँडहर नेपाल राज्य में बाणगंगा की बाईं ओर 'कोरी की कुदान' और 'गोटिहवा' गाँवों के मध्य में है। बुद्धवंश में इसे खेमावती लिखा है।
३. यह स्थान नाभिका से उत्तर पूर्व ६ मील पर उजाड़ पड़ा है। तिलौरा और गोबरी के पास खँडहर है। इस पर का अशोक स्तंभ अब तिलौरा के उत्तर १½ मील पर निगलिहवा में टूटा पड़ा है, उस पर लिखा है 'देवानं पियेन पियदसिन लाजिन चोदस वसा (भिसि)तेन बुधस कोनाकमनस थुबे दुतियं वढिते (वीसतिव) साभिसितेन च अतन आगाच महीयिते (सिलाथबे च उसा) पापिते।'

(फाहियान का यात्रा-विवरण)

174. गौतम बुद्ध से पहले भी बुद्ध थे। यह बात मेरी अपनी थोड़ी न है?

देशी और विदेशी दोनों स्रोत बताते हैं कि गौतम बुद्ध के पहले बुद्ध थे। साहित्यिक और पुरातात्विक स्रोत भी बताते हैं कि गौतम बुद्ध से पहले बुद्ध थे।

फाहियान बताता है, श्रीलंकाई-तिब्बती स्रोत बताते हैं, अशोक का निग्लीवा अभिलेख बताता है, भरहुत अभिलेख बताता है, अजंता की गुफाएँ बताती हैं, पालि साहित्य बताता है, ये सभी बताते हैं कि बुद्ध के पहले बुद्ध थे।

यदि सभी देशी-विदेशी, साहित्यिक-पुरातात्विक स्रोत झूठा ही है तो इन्हीं आधारों पर लिखा गया प्राचीन भारत का इतिहास सच कैसे है?

175. हर नजर इतिहास नहीं है!!!

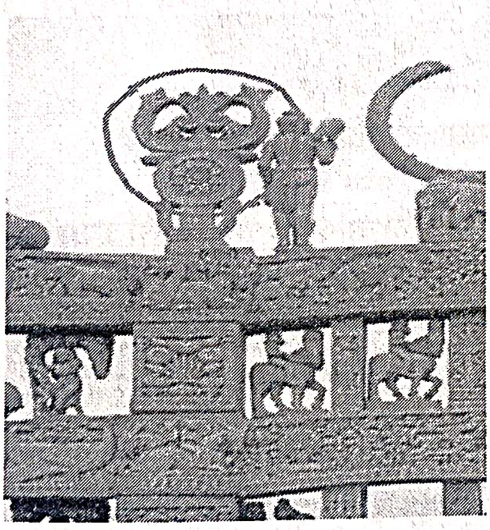
रेल के ठेकेदारों ने हड़प्पा को ईंटों का ढेर समझा, चोर-दृष्टि से देखा और इसकी ईंटों को ले जाकर 160 किमी लंबी पटरी पर डाल दिया।

यह इतिहास-दृष्टि नहीं है बल्कि फायदे की दृष्टि है। अभिलेखों को पढ़ने में...खुदाई की चीजों को छेड़ने में...अन्य कई मामलों में फायदे की यह दृष्टि जारी है।

इतिहास की वास्तविक खोज तब से शुरु होती है, जब से उसका तटस्थ मूल्यांकन आरंभ होता है।

176. पहली तस्वीर साँची स्तूप के तोरण द्वार की है जिसमें धर्मचक्र के ऊपर त्रिरत्न है।

दूसरी तस्वीर सिंधु घाटी की एक ध्यानस्थ मूर्ति की है जिसके सिर पर इतिहासकारों ने त्रिशूल जैसा बताया है।



(तोरण द्वार)

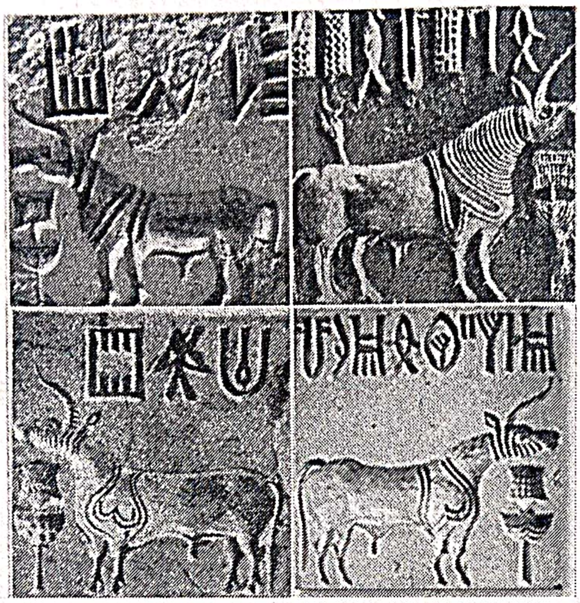


(सिंधु घाटी की ध्यानस्थ मूर्ति)

177. सम्राट अशोक ने स्पेशल प्रज्ञापन जारी कर मोर और हिरन की हत्या पर रोक लगा दी थी। मोर की हत्या पर रोक लगाकर उसने कुलधर्म (मौर्य वंश का मोर) का पालन किया और हिरन की हत्या पर रोक लगाकर उसने राजधर्म (धर्मचक्र का हिरन) का पालन किया।

178. प्रियदर्शन राम ने आखेट के लिए हिरन को मारा और प्रियदर्शी अशोक ने हिरन के आखेट पर रोक लगाई।

यह संयोग कहिए कि यही हिरन (यूनिकार्न) सिंधु घाटी का टोटेम था। इसलिए कि सिंधु घाटी से प्राप्त कुल 1755 सीलों में से 1156 यानि 66% सीलों पर यही एकसिंगा हिरन की आकृति है।



(सिंधु घाटी सभ्यता के सील)

179. भारत में बौद्ध धर्म का विकास वैदिक धर्म की प्रतिक्रिया में नहीं हुआ वरना चीन और जापान में कौन-सा वैदिक धर्म था?

चलिए, मान लिया कि भारत वैदिक धर्म से पीड़ित था और उसने पीड़ा को दूर करने के लिए बौद्ध धर्म की दवा खाई, मगर चीन-जापान-कोरिया ने क्यों खाई, जबकि उसके पास तो वैदिक धर्म की पीड़ा नहीं थी?

180. पालि में जो "थेर/थेरी" है, वही उत्तर भारत में "श्री" है, दक्षिण में "तिरु" है और लोक बोलियों में "सिरी" है।

नामों के अंत में "श्री" जोड़ने की परंपरा बौद्धों की है।

पालि साहित्य में पटचारा थेरी, सुभा थेरी, उसभ थेर, चित्तक थेर आदि में थेर/थेरी नामों के अंत में जुड़ा है।

बाद में भी थेर/थेरी का संस्कारित रूप श्री बौद्ध नामों के अंत में मिलेगा जैसे मंजू श्री, राज्य श्री।

बौद्धों की यह परंपरा काफी बाद में हिंदी में आई है। सुश्री वगैरह का लेखन तो आधुनिक काल के छायावाद युग में आया है।

181. जब सिंधु घाटी सभ्यता की व्यवस्थित खुदाई हो रही थी, तब जान मार्शल भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग के महानिदेशक थे।

जान मार्शल को एहसास था कि सिंधु घाटी की सभ्यता बौद्ध सभ्यता जैसी है।

जान मार्शल ने इसीलिए मोहनजोदड़ो के एल एरिया में स्थित सभा-भवन की बनावट पर यह टिप्पणी दी थी कि यह बौद्ध चैत्य जैसा है, उस चैत्य जैसा, जिसमें बौद्ध भिक्षु लंबी पंक्ति में आसीन होते थे।

> **सभा भवन-** मोहनजोदड़ो में स्तूप टीले से कुछ दूर दक्षिण में **एल** एरिया में एक विशाल भवन था। मैके की धारणा है कि यह शहर के आर्थिक जीवन से सम्बद्ध था। इसे कुछ विद्वानों ने सभा मण्डप अथवा विद्यालय भवन माना है। गढ़ी टीले पर स्थित 27.43 मीटर का यह वर्गाकार भवन जो मूलत: बीस स्तम्भों पर आधारित था, ये स्तम्भ चार पंक्तियों में विभक्त है और प्रत्येक पंक्ति में पांच स्तम्भ हैं इमारत तक पहुँचने के लिए उत्तरी छोर के मध्य से रास्ता था। इसकी फर्श भली-भाँति बिछाई गई ईंटों द्वारा निर्मित की गयी, जो कई भागों में विभक्त थी। इनका उपयोग सम्भवत: बैठने के लिए किया जाता होगा। इस तरह के निर्माण की तुलना मार्शल ने बौद्ध गुहा मन्दिरों से की है जिनमें बौद्ध भिक्षु लम्बी पंक्ति में आसीन होते थे। मैके, इसे शहर के आर्थिक

182. गौतम बुद्ध का कपिलवस्तु ठीक वैसा ही बसा हुआ था, जैसे—हड़प्पा, मोहनजोदड़ो के नगर बसे हुए थे।

दो भागों में-एक रिहायशी क्षेत्र और दूसरा धार्मिक क्षेत्र।

कपिलवस्तु का रिहायशी क्षेत्र गनवरिया था और धार्मिक क्षेत्र पिपरहवा था। गनवरिया और पिपरहवा दोनों मिलकर कपिलवस्तु था। बुद्ध का घर गनवरिया के रिहायशी क्षेत्र में था।

हड़प्पा, मोहनजोदड़ो जैसे नगरों में भी रिहायशी क्षेत्र अलग था और धार्मिक क्षेत्र अलग था, जिसे पुरातात्विकों ने स्तूप क्षेत्र कहा है।

सिंधु घाटी की सभ्यता बौद्ध सभ्यता थी।

प्रस्तुत है कपिलवस्तु पर पुरातत्व अधीक्षक की रिपोर्ट !

पुरातत्व विभाग के शोध के अनुसार गनवरिया में कपिलवस्तु का रिहायशी क्षेत्र स्थित था। पिपरहवा (कपिलवस्तु) धार्मिक क्रिया कलाप का केन्द्र था। गनवरिया के विकास को चार चरणों में बाटा गया है। प्रथम चरण उत्कृष्ट कोटि धूसर एवं कृष्ण मार्जिल मृदभाण्ड, द्वितीय चरण में उत्तरी कृष्ण मार्जिल मृदभाण्ड परम्परा प्राप्त होता है। द्वितीय चरण को महात्मा बुद्ध के समकक्ष रखा गया है। तृतीय चरण में शुंग एवं चतुर्थ कुषाण काल का द्योतक है। चतुर्थ चरण के स्तरों में अत्याधिक संख्या में मृण्मूर्तियां प्राप्त हुई जिसके कारण इस स्थल को टेराकोटा की खान भी कहा गया है।

पुरातत्व विभाग के मुताबिक गनवरिया में पक्की ईटों के आवास द्वितीय चरण में मिलने आरम्भ हो जाते है। इस स्थान के सघन विस्तार का विवरण तृतीय व चतुर्थ चरण में होना पाया गया है। तृतीय चरण में निर्मित 38 मीटर भुजा का वर्गाकार आवास पश्चिम की ओर स्थित है। इसके मध्य में 18.70 मीटर भुजा का वर्गाकार आंगन विशेष उल्लेखनीय है। आंगन के पूर्व-उत्तर कोण पर एक कुंआ भी प्राप्त हुआ है। वृहद आवास के प्रारम्भ में 25 कमरे थे। इसका अभिप्राय कपिलवस्तु के राजप्रसाद से किया गया है। इसके अतिरिक्त अन्य भवन, संघाराम, मनौती स्तूप आदि के अवशेष भी उत्खनन में पाये गये है।

....

"कपिलवस्तु राज्य का प्रमुख अंग गनवरिया रहा है। यह बातें शोध में सावित भी हुई। पश्चिम दिशा में दीवाल बनाने के लिए स्थानीय ग्रामीणों से बात हो रही है। जल्द ही दीवाल का निर्माण पूर्ण कर दिया जायेगा। बजट का हिसाब विभाग के लेखा कार्यालय में है।"

डा. प्रवीण मिश्रा

परिशिष्ट

183. भक्ति का सबसे बड़ा दुश्मन तर्क और बुद्धि है। तर्क और बुद्धि के सबसे बड़े कवि कबीर हैं। मरे हुए कबीर भक्त हैं, जिंदा कबीर ज्ञानी हैं।

कबीर भक्ति के नहीं बल्कि तथाकथित भक्ति से मुक्ति के कवि हैं। भक्ति से मुक्ति के कवि को भक्ति-साहित्य में क्यों रखते हैं?

संतो आई ज्ञान की आँधी !!!

184. कबीर की यह तस्वीर ई. मार्सडिन की पुस्तक "भारत का इतिहास" से ली गई है। अधेड़ कबीर...न कंठी...न माला...न तिलक...न बूढ़े...ऐसे ही रहे होंगे कबीर...कोई पचास साल के।

कबीर के बुढ़ापे के चित्र तो फर्जी हैं। ऐसे चित्र इसलिए तैयार किए गए ताकि किसी को यह संदेह न हो कि वे पचास साल की उम्र में मरे थे। उनके 120 साल जीने की परिकल्पना भी एक पोंगापंथी लेखक ने ही की है।

और सिकंदर लोदी से कबीर की हत्या भी झूठी बात है। यह साजिश एक मुसलमान से मुसलमान को मरवाए जाने की है। सिकंदर लोदी तो कबीर की मृत्यु के 38 वर्षों बाद गद्दी पर बैठा था। भला वह कबीर की हत्या कैसे करवा सकता है ?



(कबीर)

185. बारह का डीएनए टेस्ट।

1. आर्य परिवार की दो भाषाएँ सिंधी और गुजराती दो के लिए मूल रूप से "बा" का इस्तेमाल करती हैं। सिंधी में दो के लिए ब और गुजराती में बे का प्रयोग होता है।

2. द्रविड़ परिवार की भाषाएँ दो के लिए "बा" से परहेज करती हैं।

3. चीनी-तिब्बती परिवार की भाषाएँ भी "बा" से दूरी बनाई हुई हैं।

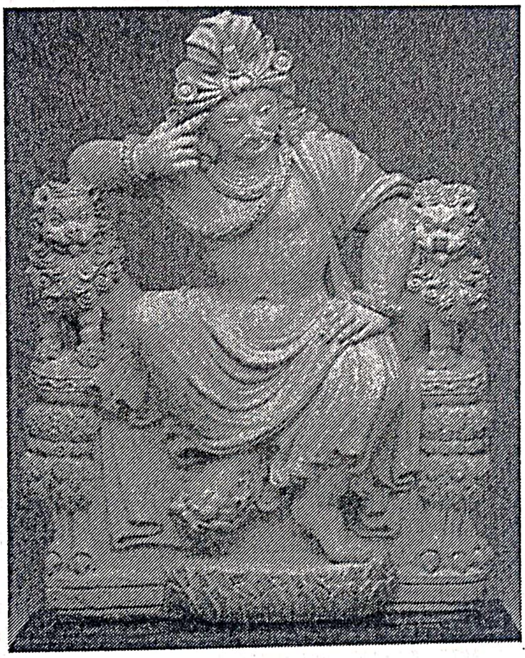
4. मगर मुंडा परिवार की भाषाएँ दो के लिए "बा" का सर्वाधिक इस्तेमाल करती हैं। दो के लिए संताली में बार, मुंडारी में बिर, हो में बर, खड़िया में उबार, कोरकू में बरी, सावारा में बार, बिरहोड़ में बरे, मोन में बा, ख्मेर में बिर, बहनार में बेर, स्तेइंग में बर, तरेङ में बर का प्रचलन है।

साबित हुआ कि बा/बार मुंडा परिवार का डीएनए है।

इसलिए बारह मूल रूप से मुंडा भाषाओं का डीएनए है। उसी के खून में बा/बार के तत्व सर्वोपरि है।

186. हर भाषा के शब्दों में ध्वनियों की एक विशेष प्रकार की सजावट होती है। इस विशेष प्रकार की सजावट से हम कई मामलों में जान सकते हैं कि कौन-सा शब्द किस भाषा का है।

189. प्रस्तुत मूर्ति अफगानिस्तान के हद्दा क्षेत्र से मिली थी। इसे डेविड टी. ओस्ले ने डैलस म्यूजियम आफ आर्ट, टेक्सास को गिफ्ट किया है। मूर्ति की प्रामाणिक पहचान नहीं हो पाई है। मेरा अनुमान है कि ये कोई दूसरा बोधिसत्व नहीं हैं बल्कि खुद सम्राट अशोक हैं, जिन्होंने लिखित रूप से अपने को बौद्ध शाक्य बताया है और ये चिंतन-मुद्रा बौद्ध शाक्य अशोक की है। सिंहासन के छोरों पर वही सिंह हैं जो अशोक के सिंह-स्तंभ पर हैं और ये दोनों सिरों के सिंह अपने सिंहासन नाम को सार्थक करते हैं।



(सम्राट अशोक)

190. फिर से समझिए। भारत में जो बाहर के देश से आता है, उसे हम अभारतीय कहते हैं। इसी प्रकार जब भारत द्रविड़ देश था, तब जो भारत में आया, उसे अद्रविड़ कहेंगे। मगर इतिहास आर्यवादी दृष्टिकोण से लिखा गया है। इसीलिए ये आर्य उल्टे द्रविड़ को ही गैर आर्य या अनार्य कहते हैं।

191. हर भाषा किसी दूसरी भाषा के संपर्क में आती है तो उनके बीच शब्दों का आदान-प्रदान होता है।

मध्य काल में फारसी आई तो हिंदी में फारसी के शब्द आ गए। आधुनिक काल में अंग्रेजी आई तो अंग्रेजी के शब्द हिंदी में आ गए।

मगर अशोक कालीन प्राकृत में एक भी शब्द संस्कृत का नहीं आया। ऐसा हो नहीं सकता कि अशोक काल में संस्कृत मौजूद हो और संस्कृत के एक भी शब्द अशोक के अभिलेखों में न आए।

192. मान लीजिए कि बंदर से मानव का विकास हुआ है तो बंदर का सबसे अधिक गुण प्राचीन मानव में मिलेगा और आधुनिक मानव में कम मिलेगा।

इसी सिद्धांत को भाषा के विकास में लागू कीजिए और परीक्षण करिए।

मान लीजिए कि संस्कृत से प्राकृत का विकास हुआ है तो संस्कृत के सबसे अधिक शब्द प्राकृत में मिलने चाहिए। मगर प्राकृत में संस्कृत के शब्द नहीं मिलते हैं। उलटे संस्कृत के सबसे अधिक शब्द आधुनिक भाषाओं में मिलते हैं।

193. गुप्त लिपि नाम की कोई लिपि नहीं थी। इस नाम का कोई सबूत नहीं मिलता है। जिसे हम गुप्त लिपि कहते हैं, वह वास्तव में ब्राह्मी लिपि की विकसित शैली है। इसे हम बाद की ब्राह्मी लिपि (परवर्ती ब्राह्मी) कह सकते हैं। भारत में संस्कृत के जो अभिलेख मिलते हैं, वे इसी बाद की ब्राह्मी लिपि में लिखे गए हैं। मतलब कि प्राकृत के अभिलेख ब्राह्मी लिपि में हैं और संस्कृत के अभिलेख बाद की ब्राह्मी लिपि में हैं। निष्कर्ष यह कि संस्कृत का जन्म प्राकृत के बाद हुआ है।

194. पालि पहले की भाषा है। इसीलिए त्रिपिटकों, धम्मपद आदि का संस्कृत में अनुवाद हुआ। संस्कृत बाद की है। इसीलिए वेद, पुराणों आदि का पालि में अनुवाद नहीं हुआ।

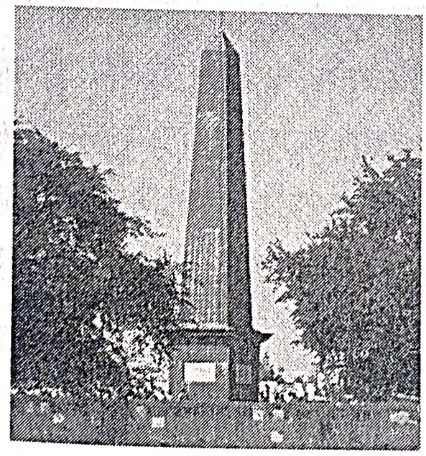
195. बचपन में एक दोहा सुना था:—

सार सार सूरा कही, तुलसी कही अनूठ।

बची खुची कबीरा कही, और कही सब झूठ।।

दोहे का भाव यह है कि जो बातें सूर और तुलसी के कहने से बच गईं, वो कबीर ने कही। मगर यह दोहा उल्टा है। कबीर पहले हुए हैं, इसलिए कबीर की बची-खुची बातें सूर और तुलसी ने कही है।

196. आप कहते हैं कि नाम में क्या रखा है। ये नाम ही हैं, जिसने पाताल से कोरेगांव के शहीदों की जाति को खोज निकाला है। स्मारक पर उत्कीर्ण मृतक सैनिकों के नामों में से करीब 20 नाम ऐसे हैं, जिसके अंत में "नाक" आता है। ये "नाक" नामांत के नाम महार आदि अछूतों के हैं। वेरियर एल्विन ने बताया है कि इसी "नाक" से "नाग" जुड़ा हुआ है। उन्होंने यह भी बताया है कि "नाक" शब्द आदमी या लोग का बोधक है। आओ भाषा में "पार नाक" का अर्थ "वे लोग" और "न नाक" का अर्थ "तुम लोग" होता है। अर्थात नाक का अर्थ लोग होता है। जाने कब से ये महार आदि जाति के लोग नाग वंश आदि से जुड़े हुए हैं!



स्मारक(स्तम्भ) पर अंकित हैं। जो इस प्रकार हैं-

1:गोपनाक मोठेनाक
2:शमनाक येशनाक
3:भागनाक हरनाक
4:अबनाक काननाक
5:गननाक बालनाक
6:बालनाक घोंड़नाक
7:रूपनाक लखनाक
8:बीटनाक रामनाक
9:बटिनाक धाननाक
10:राजनाक गणनाक
11:बापनाक हबनाक
12:रेनाक जाननाक
13:सजनाक यसनाक
14:गणनाक धरमनाक
15:देवनाक अनाक
16:गोपालनाक बालनाक
17:हरनाक हरिनाक
18जेठनाक दीनाक
19:गननाक लखनाक

(भीमा कोरेगाँव का शहीद स्मारक)

197. पुरातत्व में तिथि-निर्धारण की वैज्ञानिक पद्धति को कार्बन-14 (C14) कहा जाता है। इसकी खोज अमेरिकन रसायनविज्ञानी वी. एफ. लिवि ने 1946 में की थी। सिद्धांत यह है कि प्रत्येक जीवधारी का शरीर कार्बन-12 (C12) तथा कार्बन-14 (C14) से युक्त होता है। मृत्यु अथवा विनाश की अवस्था में कार्बन-12 तो बना रहता है, मगर

कार्बन-14 (C14) का क्रमिक ह्रास आरंभ हो जाता है। ह्रास की यह गति 5568±30/5730±40 सालों में अपनी मूल मात्रा की आधी रह जाती है। जिस पदार्थ में कार्बन-14 की मात्रा जितनी ही कम रहती है, वह उतना ही प्राचीन माना जाता है। इसके विपरीत जिस पदार्थ में इसकी जितनी अधिक मात्रा होती है, वह उतना ही बाद का होता है।

मगर भारत के प्राचीन इतिहास के लेखन में अमूमन ऐसी पुस्तकों का सहयोग लिया जाता है, जिसका लेखन-काल विवादास्पद है। पुस्तकों की प्राचीनता की जाँच कार्बन-14 (C14) से नहीं की जा सकती है। कारण कि वह जीवधारी नहीं है। बस, यहीं इतिहासकारों को मनमानी करने का विशाल क्षेत्र प्राप्त हो जाता है। ऐसे में पुस्तकों की उम्र भाषाकालक्रम विज्ञान और पाठ विज्ञान से जानी जा सकती है। मगर इतिहासकार इस क्षेत्र के अमूमन विशोषज्ञ नहीं होते हैं। परिणामतः इतिहास-लेखन अराजकता का शिकार हो जाता है।

198. डा. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या ने बताया है कि प्राचीन चीनी में जो "कांग" है, दक्षिणी चीनी में जो "किआंग" है, उत्तरी चीनी में जो "चिआंग" है, वही भारत में "गांग" है और इसी "गांग" का संस्कृत रूप "गंगा" है। इसलिए मूल रूप से गंगा नदी का नाम नहीं बल्कि नदी का वाचक है जैसे कांग, किआंग और चिआंग नदी का नाम नहीं बल्कि नदी का वाचक है।

आज भी चकमा भाषा में नदी को "गांग" कहते हैं। सिंहली में तो सभी नदियों को "गंगा" ही कहा जाता है।

जैसे चीन में अनेक नदियों के नाम में "किआंग" जुड़ा होता है, वैसे भारत में भी अनेक नदियों के नाम में "गंगा" जुड़ा होता है। इसलिए कि गंगा और किआंग नदी बोधक शब्द हैं। चीन में सी-किआंग है, यू-किआंग है, लुंग-किआंग है, पे-किआंग है, लो-किआंग है। भारत में भी बाण गंगा है, रुद्र गंगा है, राम गंगा है, वैन गंगा है, गिरथी गंगा है।

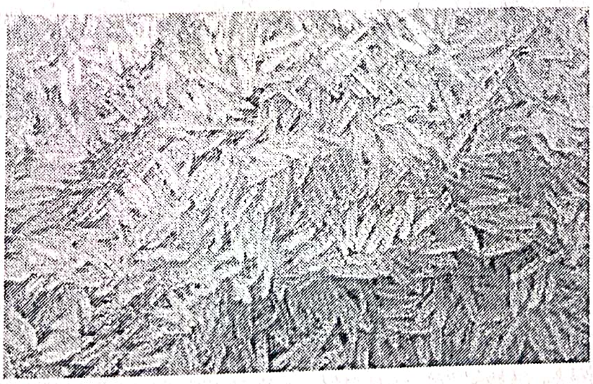
डा. चन्द्रेश बहादुर सिंह ने एक शोध में लिखा है कि भारत में कुल मिलाकर 46 नदियाँ ऐसी हैं जिनके नाम में "गंगा" जुड़ा है। इन 46 नदियों

में 32 नदियाँ गंगा में मिलती हैं। शेष 14 नदियाँ गंगा से कहीं नहीं मिलती हैं। ये 14 नदियाँ जो गंगा से नहीं जुड़ी हैं, उनके नाम में भी गंगा का जुड़ना शायद इसीलिए है कि गंगा कभी नदी का वाचक शब्द था।



(गंगा नदी)

199. चावल से मिलता-जुलता कोई शब्द बताइए संस्कृत में? नहीं मिलेगा। चावल से कोई नया शब्द भी नहीं बनेगा। बनाकर देखिए, जैसे पत्र से पत्रा, पत्रिका, पत्राचार आदि बनता है। चावल से बनाइए कोई शब्द संस्कृत में? आप आस्ट्रिकों की भाषा "हो" में देख लीजिए, चावल संज्ञा भी है, क्रिया भी है और चावल से उस भाषा में अनेक शब्द भी बनते हैं। चावल आस्ट्रिकों का है, तंडुल द्रविड़ों का है और ब्रीहि किरातों का है। संस्कृत में चावल के लिए कोई शब्द नहीं है।



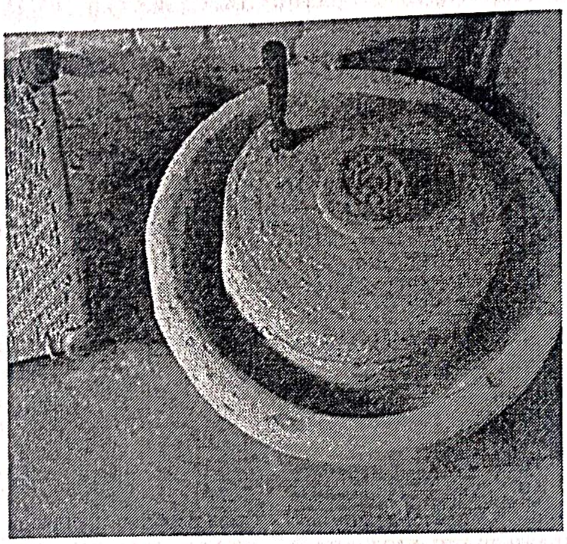
(चावल का ढेर)

200. फेसबुक पर घूमते हुए जाँता की तस्वीर दिखाई पड़ी। जाँता गेहूँ पीसने की चक्की है। भाषावैज्ञानिकों ने इसे यंत्र से जोड़ा है। बताया है कि यंत्र से जाँता बना। यंत्र युग से जाँता युग-एकदम उल्टी छलाँग!

जाँता की खोज में लोक-परंपरा की दुनिया में आइए। जाँतना अर्थात दबाना। जो जाँत दे, वह जाँता है। जो गेहूँ को दबा दे, वह जाँता है, जो दबाकर आटा बना दे, वह जाँता है।

सेर भर गेहुँआ रे बाँस के चँगेलिया।
आरे पिसन चलेली जँतसरिया हो रामा।

अफसोस कि जाँतना डिक्शनरी से गायब है। बेटा है, माई गायब है। देखिए न, लौकना (दिखना) गायब है, मगर लोकन, विलोकन तथा अवलोकन का धड़ल्ले से प्रयोग है।

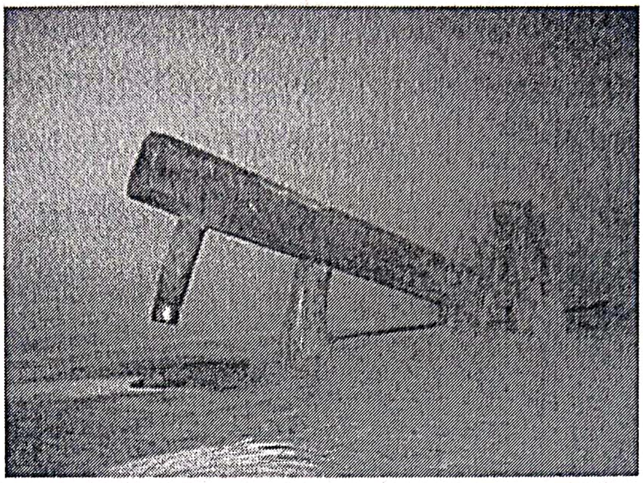


(जाँता)

201. रोमिला थापर के शब्दों में, "आर्य भाषाओं में खेतिहर गतिविधियों से जुड़े शब्द द्रविड़ भाषाओं से आए हैं, मिसाल के तौर पर लांगल (हल), उलूखल (ऊखल), कुद्दाल (कुदाल), खल (खलिहान) आदि।"

टी.बरो.की मानें तो अलाबु (लौकी), कदली (केला), कर्पास (कपास), ताम्बुल (पान), मरिच (मिर्च), दाड़िम्ब (अनार), बैगन आदि की आरंभिक खेती भारत में आस्ट्रिकों की देन हैं।

निष्कर्ष यह कि आर्यों ने भारत में श्रम-संस्कृति नहीं अपितु यज्ञ-संस्कृति को लाया था।



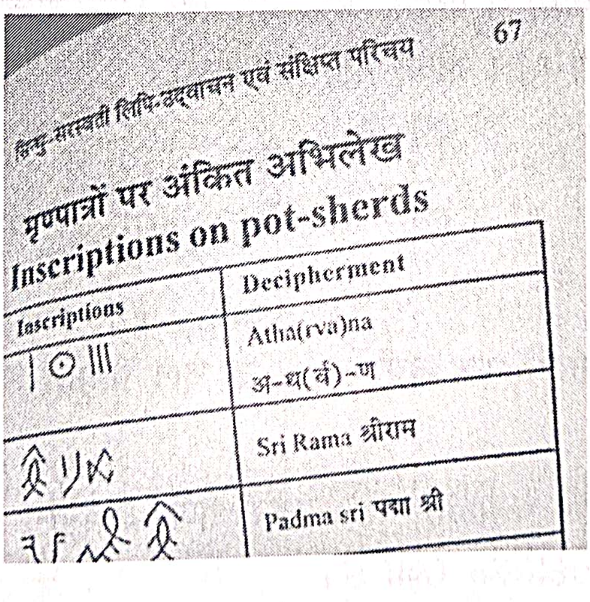
(ढेंका)

202. सिंधु लिपि में कुल मिलाकर लगभग 400 संकेत हैं। यदि सिर्फ मूल संकेतों को लिया जाए तो इनकी संख्या लगभग 250 तक पहुँचती है।

जिस लिपि में लगभग 250 संकेत हों तो समझिए कि वह ध्वन्यात्मक और चित्रात्मक लिपि के बीच की चीज है।

कारण कि ध्वन्यात्मक लिपि में संकेतों की संख्या लगभग 50 रहती है और चित्रात्मक लिपि में संकेतों की संख्या हजारों होती है।

किसी लिपि विज्ञानी ने इसे ध्वन्यात्मक लिपि मानकर श्रीराम, पद्मा श्री आदि पढ़ लिए हैं, जो सरसरी नजर में गलत है।



सिन्धु-सरस्वती लिपि-उद्वाचन एवं संक्षिप्त परिचय 67

मृण्पात्रों पर अंकित अभिलेख

Inscriptions on pot-sherds

Inscriptions	Decipherment
| ⊙ |||	Atha(rva)na अ-थ(र्व)-ण
[illegible]	Sri Rama श्रीराम
[illegible]	Padma sri पद्म श्री

203. पुष्यमित्र ने जब धोखे से पाटलिपुत्र पर कब्जा किया, तब उसने पाटलिपुत्र का नाम बदल दिया। उसने अपने नाम पर पाटलिपुत्र का नामकरण पुष्यपुर कर दिया। कालिदास ने पुष्यपुर का तत्समीकरण किया। उन्होंने पुष्यपुर का नाम पुष्पपुर लिख दिया। बाद के संस्कृत आचार्यों और पुराणों ने एक कदम आगे बढ़कर पुष्पपुर का अनुवाद कुसुमपुर कर दिया। इसलिए कि पुष्प का अर्थ कुसुम होता है। इस प्रकार पुष्यमित्र का दिया हुआ नाम पुष्यपुर धीरे-धीरे पुष्पपुर होते हुए कुसुमपुर हो गया।

204. प्रसिद्ध भाषावैज्ञानिक टी. बरो ने प्राकृत और संस्कृत की घनघोर लड़ाई को अपनी मशाहूर पुस्तक "संस्कृत भाषा" में उकेरा है।

प्राकृत और संस्कृत की यह लड़ाई ईसा की प्रथम सदी में आरंभ होती है। सर्वप्रथम यह लड़ाई उत्तरी भारत के मैदान में लड़ी गई। बताया जाता है कि प्राकृत को प्रथम गोली अयोध्या में मारी गई। दूसरी गोली जूनागढ़ में। धांय! धांय!! मगर प्राकृत का पुरातात्विक किला पूरी तरह से नेस्तनाबूद नहीं हो सका। फिर प्रयाग के मैदान में प्राकृत और संस्कृत का निर्णायक युद्ध हुआ। राजशाही ने पूरी फौज झोंक दी। कोई 350 साल की भीषण लड़ाई के बाद किले को फतह कर लिया गया।

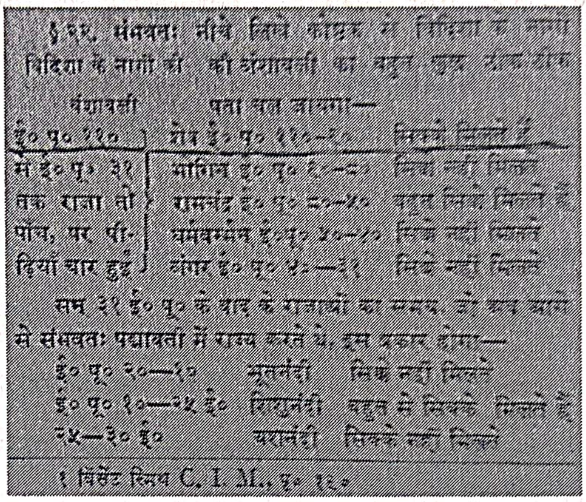
दक्षिण भारत में प्राकृत ने संस्कृत को कड़ी टक्कर दी। पाँचवीं सदी तक दक्षिण के मैदान में प्राकृत अपराजेय रही और लाख कोशिशों के बाद भी संस्कृत उसका बाल बाँका नहीं कर सकी।

संस्कृत के खिलाफ बौद्धों की अपेक्षा जैनियों ने जमकर लोहा लिया। बौद्धों ने तो पहले ही हथियार डाल दिए। मगर जैनियों ने 526 ई. तक संस्कृत की अधीनता स्वीकार नहीं की।

.....और अंत में एक लंबी लड़ाई के बाद प्राकृत हार-सी गई।

205. पुराण की कथाओं में पीसकर राजा शेषनाग मिथक हो गए हैं वरना वे एक ऐतिहासिक राजा हैं।

शेषनाग की राजधानी विदिशा में थी। उन्होंने कुल मिलाकर 20 सालों तक शासन किया था। उनका शासन-काल 110-90 ई. पू. तक माना जाता है। सबूत के तौर मुंशी देवीप्रसाद की पुस्तक प्रस्तुत है।



§ ३१. संभवतः नीचे लिखे कोष्ठक से विदिशा के नागों की वंशावली का बहुत कुछ ठीक ठीक पता चल जायगा—

वंशावली		
ई० पू० ११०	शेष ई० पू० ११०–९०	सिक्के मिलते हैं
से ई० पू० ३१	भोगिन ई० पू० ९०–८०	सिक्के नहीं मिलते
तक राजा तो	रामचंद्र ई० पू० ८०–५०	बहुत सिक्के मिलते हैं
पांच, पर पी-	धर्मवर्म्मन ई० पू० ५०–४०	सिक्के नहीं मिलते
ढ़ियाँ चार हुईं	वंगर ई० पू० ४०–३१	सिक्के नहीं मिलते

सन ३१ ई० पू० के बाद के राजाओं का समय, जो अब आगे से संभवतः पद्मावती में राज्य करते थे, इस प्रकार होगा—

ई० पू० ३०–१०	भूतनंदी	सिक्के नहीं मिलते
ई० पू० १०–२५ ई०	शिशुनंदी	बहुत से सिक्के मिलते हैं
२५–३० ई०	यशनंदी	सिक्के नहीं मिलते

१ विंसेंट स्मिथ C. I. M., पृ० १८०

206. राजा शेषनाग के सिक्के ब्रिटिश म्यूजियम में सुरक्षित हैं।

शेषनाग के फन पर टिकी है पृथ्वी-मिथक और यथार्थ।

नागपुर, छोटानागपुर, अनंतनाग, नागौर, नगवाँ, नागलोई जैसे नाम ऐसे ही थोड़े न है? निश्चित कभी दूर-दूर तक नागों का शासन था।

पृथ्वी नाग के फन पर टिकी है। इसका क्या मतलब? यही कि कभी दूर-दूर तक नागों का शासन था।

207. जिस बक्सर में विश्वामित्र का आश्रम था, संस्कृत का मंत्रोच्चार था, उस संस्कृत में "क" और "स" मिलकर "क्स" बनाते ही नहीं हैं। संस्कृत के एक भी शब्द में "क्स" नहीं है। बक्सर संस्कृत का नहीं, अंग्रेजी की उच्चारण पद्धति है जैसे बाक्सिंग, सिक्स, मैक्सिमम आदि।

208. जब "स" और "ल" आपस में संयोग कर ले तो समझिए कि वह संस्कृत का शब्द नहीं है। गारंटी।

209. यूनानी शब्द "इन्डिका" या अंग्रेजी शब्द "इण्डिया" "हिन्दीक" से जुड़े हैं, "सिन्धीक" से नहीं जुड़े हैं। तॉसी ने इसीलिए फ्रेंच में "हिन्दूस्तानी" को "एन्दुस्तानी" और "हिन्दवी" को "ऐन्दुई" कहा है। उसने "सिन्धुस्तानी" या "सिन्धवी" को "एन्दुस्तानी" या "ऐन्दुई" नहीं कहा है। ऐसे ही सिकंदर के इतिहासकार ने "हिन्दुकुश" को "इन्दिकौश" कहा है, "सिन्धुकुश" को नहीं। मेगास्थनीज की "इण्डिका" या सिकन्दरकालीन "इन्दिकौश" "हिन्द" की मौजूदगी को स्वीकार करते हैं, "सिन्ध" की मौजूदगी को प्रमाणित नहीं करते हैं। भारत का कोई भी प्राचीन अभिलेख "सिन्ध" की मौजूदगी को स्वीकार नहीं करता है, जबकि पश्चिमोत्तर के अभिलेख ईसा से पाँच सौ साल पहले "हिन्द" की मौजूदगी की गवाही देते हैं। इसी "हिन्द" का संस्कारित रूप "सिन्ध" है जो वेदों में मौजूद है।

210. जब मुगल काल में तुलसीदास की अवधी रामायण जब्त नहीं की गई, तब आजाद भारत में सच्ची रामायण क्यों जब्त की गई? क्या आजाद भारत में लिखने की आजादी कम हुई?

211. आप यदि ध्यान नहीं दिए होंगे तो डिक्शनरी खोलकर देखिएगा कि "सेक्युलर" का वास्तविक अर्थ "लौकिक" होता है। जो "परलोक" में विश्वास करता है, वह "सेक्युलर" नहीं हो सकता है। दुनिया के सभी बड़े धर्मों में से सिर्फ बौद्ध धर्म की जीवन-दृष्टि ही लौकिक है, सेक्युलर है। बाकी परलोक में विश्वास करते हैं। इसलिए वे सेक्युलर नहीं हो सकते।

212. प्राकृत को, अपभ्रंश को और उनसे जुड़ी भारत की तमाम भाषाओं को आचार्यों ने "देशी भाषा" कहा है, मगर किसी भी आचार्य ने संस्कृत को "देशी भाषा" नहीं कहा है। आप निष्कर्ष दे सकते हैं कि संस्कृत "देशी भाषा" नहीं है।

213. भारत का कोई भी प्रसिद्ध मंदिर खुदाई में धरती के नीचे नहीं मिला, जबकि भारत का कोई भी प्रसिद्ध बौद्ध विहार बगैर खुदाई धरती के ऊपर नहीं मिला।

बताइए, कौन-सा प्राचीन अवशेष है-धरती के ऊपर का या धरती के नीचे का?

214. मुसलमानों ने बड़े पैमाने पर बौद्ध ग्रंथ जला दिए तो बड़े पैमाने पर संस्कृत ग्रंथ बचे कैसे रह गए?

215. भाषावैज्ञानिकों ने बताया है कि प्राचीन काल में घुटने के निचले हिस्से को "जंघा" कहा जाता था।

यदि "जंघा" के घुटने के निचले हिस्से वाले अर्थ की खोज में भाषाओं की खुदाई करें तो संथाली आदि भाषाओं में इसके पूरे अवशेष मिलते हैं, पालि आदि में इसके अधूरे अवशेष मिलते हैं और संस्कृत आदि में इसके नहीं के बराबर अवशेष मिलते हैं।

यदि यह आधार हमें स्वीकार हो तो संथाली आदि का लेयर सबसे प्राचीन है, पालि आदि का लेयर बीच का है और संस्कृत आदि का लेयर सबसे ऊपर का है।

216. क्या आप बौद्ध राजा चुटकुलानंद को जानते हैं?

ये प्रथम शताब्दी के बौद्ध राजा थे। इनकी राजधानी कर्नाटक के उत्तर कन्नड जिले के बनवासी में थी।

चुटकुलानंद के सिक्के कारवार में उपलब्ध हुए हैं। ये चुटु वंश के थे। चुटु वंश के सिक्के सीसे के बने हैं। सिक्कों पर बौद्ध धर्म के चिह्न मिलते हैं, जैसे स्तूप, त्रिरत्न आदि।

चुटिया, चुटिया नागपुर (छोटा नागपुर) इन्हीं लोगों का था। पूरे कर्नाटक में यदि अशोक के अभिलेख के बाद किसी राजवंश का अभिलेख मिलता है तो वह चुटु वंश है।

217. किसी ने पूछा है कि भरहुत नाम कैसे पड़ा? जैसे बिहार में तिरहुत है, वैसे मध्यप्रदेश में भरहुत है। नदी तीरों का प्रांत है—तीरहुत और भरों

का प्रांत है—भरहुत। गुप्तकाल में प्रांतों को भुक्ति कहा जाता था। यदि तिरहुत का संस्कारित रूप तीरभुक्ति है तो भरहुत का भरभुक्ति। भरहता, भरौली, भरजुना जैसे भर सूचक स्थानों के बीच बसा है—भरहुत। कभी भरों का प्रांत था-भरहुत।

218. चारों वेद की कोई 22443 ऋचाओं में से एक भी शब्द ऐसा नहीं है जो ट, ठ, ड, ढ से आरंभ होता है, जबकि प्राकृत भाषाओं में ट, ठ, ड, ढ से आरंभ होनेवाले शब्दों की संख्या सैकड़ों है।

यदि वैदिक भाषा ही प्राकृत भाषाओं का भी स्रोत है तो फिर वैदिक शब्दावली से एकदम अलग ट, ठ, ड, ढ से आरंभ होनेवाले इतने सारे शब्द प्राकृत भाषाओं में कहाँ से आए हैं?

219. हमारी वर्णमाला में क-वर्ग ध्वनियों का उच्चारण कंठ, च-वर्ग का तालु, ट-वर्ग का मूर्धा, त-वर्ग का दाँत और प-वर्ग का ओठ की मदद से होता है।

हमारे मुँह में इनके उच्चारण-स्थान का क्रम भीतर से बाहर की ओर ऐसे है-पहले कंठ, फिर मूर्धा, फिर तालु, फिर दाँत और अंत में सबसे बाहर ओठ।

यदि हम वर्णमाला में क-वर्ग के बाद ट-वर्ग रखेंगे तो हमारी वर्णमाला उच्चारण-स्थान के क्रम में व्यवस्थित हो जाएगी। क-वर्ग के बाद च-वर्ग को रखने से हमारी वर्णमाला अभी व्यवस्थित नहीं है।

ये गड़बड़ी इसलिए हुई कि हमारी वर्णमाला में ट-वर्ग को द्रविड़ों से उधार लिया गया है। इसीलिए अभी तक हमारी वर्णमाला में उसे सही सीट नहीं मिली है। वह आज भी गलत सीट पर बैठी है।

220. अरबी में "तमर" का अर्थ "सूखा खजूर" है। अरब के लोग जब भारत की "इमली" से परिचित हुए, तब वे इमली को "तमर-ए-हिंद" (तमर हिंदी) कहा अर्थात भारत का सूखा खजूर।

इंग्लैंड के लोग जब अरब के "तमर-ए-हिंद" से परिचित हुए, तब वे इमली को "Tamr-ind" कहा अर्थात "Tamr of India"।

मगर वे लोग कौन थे जो आम और इमली का फर्क नहीं समझे तथा "इमली घोंटाइ" में आम का पत्ता घोंटवाने लगे?

221. तुम मेरे जीवन में कब आई हो, राधा!!!

कृष्ण के साथ राधा की परिकल्पना बाद की है। ऐसा निष्कर्ष शशिभूषणदास गुप्त ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "श्री राधा का क्रम विकास" में दिया हैं। यह पुस्तक हिंदी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी से छपी है। इसमें राधा का विस्तृत इतिहास है।

कृष्ण-चरित्र का स्रोत-ग्रंथ "श्रीमद्भागवत" है। श्रीमद्भागवत में राधा का नामोल्लेख नहीं है। राधा वेदों में भी नहीं हैं। राधा का प्रथम उल्लेख हाल रचित "गाहा सत्तसई" में मिलता है। यह पुस्तक अनुमानतः प्रथम सदी से 7 वीं सदी के बीच की हो सकती है।

आश्चर्य कि पुरातत्व में भी राधा का प्रथम प्रमाण हमें 7 वीं सदी की एक अनुमानित मूर्ति में मिलता है। यह मूर्ति बंगाल के पहाड़पुर नामक स्थान से प्राप्त है।

7 वीं सदी से 11 वीं सदी के बीच राधा के बारे में कुछेक पुस्तकों में कुछेक श्लोक मिलते हैं। मगर पूरे संस्कृत साहित्य में राधा-कृष्ण की कथा को लेकर किसी स्वतंत्र और संपूर्ण काव्य का सबूत हमें 12 वीं सदी के पहले नहीं मिलता है।

13 वीं सदी के कवि जयदेव ने "गीत-गोविंद" में राधा को अमरता प्रदान की और फिर कृष्ण संग राधा की प्रेम-कहानी की धारा हिंदी साहित्य में बलखाती-इठलाती बह चली।

शायद इसीलिए कृष्ण का सवाल है कि राधा क्यों गोरी, मैं क्यों काला?

222. जब देश पर गुलामों का शासन था, गुलामों के गुलामों का शासन था, गुलामों के गुलामों के गुलामों का शासन था-ऐबक, इल्तुतमिश और बलबन, तब बताया जाता है कि हिंदी में वीरगाथा काल चल रहा था—बड़े-बड़े वीरों का काल, वीरतापूर्ण कारनामों का काल!!!

आखिर ये वीर कर क्या रहे थे?

223. जो धर्म-प्रचार देवता गण विमान से उड़-उड़कर नहीं कर पाए, वही बुद्ध ने अपना धम्म-प्रचार पैदल ही घूम-घूमकर कर डाला।

❑❑❑



डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह

अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त भाषावैज्ञानिक

रचनाएँ : भाषा का समाजशास्त्र/भारत में नाग परिवार की भाषाएँ/हिंदी की लंबी कविताओं का आलोचना-पक्ष / काव्यतारा/काव्यरसनिधि/हिंदी साहित्य का सबाल्टर्न इतिहास/हिंदी साहित्य प्रसंगवश/आधुनिक भोजपुरी के दलित कवि और काव्य/भोजपुरी के आधुनिक भाषाशास्त्र/कहानी के सौ साल/साहित्य में लोकतंत्र की आवाज/ओबीसी साहित्य विमर्श/हिंदी का अस्मितामूलक साहित्य/दलित साहित्य का इतिहास-भूगोल/भाषा, साहित्य और इतिहास का पुनर्पाठ/भोजपुरी-हिंदी-इंग्लिश लोक शब्दकोश/पंचानवे भाषाओं का समेकित पर्याय शब्दकोश/दि रि-राइटिंग प्राब्लम्स ऑफ भोजपुरी ग्रामर, डिक्शनरी एंड ट्रांसलेशन/लैंग्वेजेज ऑफ दि नाग फैमिली इन इंडिया/भोजपुरी भाषा, व्याकरण और रचना/भोजपुरी व्याकरण, शब्दकोश आ अनुवाद के समस्या/भोजपुरी के भाषाशास्त्र/ओबीसी साहित्य के विविध आयाम/इतिहास का मुआयना आदि।

भाषा के क्षेत्र में बिहार सरकार के डॉ. ग्रियर्सन पुरस्कार से सम्मानित एवं वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय में हिंदी के प्रोफेसर।

संपर्क : इन्कम टैक्स ऑफिस के पास, गाँधी नगर, सासाराम (बिहार)-821115

₹ 260.00
978-93-87809-19-2
Kautilya
Buy online at
www.kautilya.in
9 789387 809192